दिसम्बर, 2018
I.S.S.N. : 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

पी एल डी (सी. डी)-12-2018 आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

दिसम्बर, 2018 अंक - 12

प्रधान संपादक
डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक
अविनाश शुक्ला

विधि साहित्य
प्रकाशन

(2018) 2 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

विक्रय कार्यालय : 1. प्रकाशन नियंत्रक, भारत सरकार, सिविल लाइन्स, दिल्ली-110054.
2. सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

Cover ii

प्रस्तावित संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग

श्री एस. आर. ढलेटा,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं
विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

श्री ए. के. अवस्थी,
सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं डीन
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

श्री एल. आर. सिंह,
प्रोफेसर एवं डीन इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

सहायक संपादक : श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

परामर्शदाता : सर्वश्री दयाल चन्द ग्रोवर, महमूद अली खां और विनोद कुमार आर्य

ISSN- 2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2018 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

---

1. प्रकाशन नियंत्रक, भारत सरकार, सिविल लाइन्स, दिल्ली-110054.
2. प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्च न्यायालयों द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो अधिवक्ताओं, विधि छात्रों, न्यायाधीशों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता को सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

यह एक सुखद स्थिति है कि वर्तमान में चुनावी सफलता के मानदंड प्रतिस्पर्धी लोकलुभाववाद न होकर आर्थिक मोर्चे पर प्रदर्शन बन गया है । सरकारों ने आर्थिक मोर्चे पर प्रदर्शन पर ध्यान केन्द्रित करना आरम्भ किया है । आर्थिक गतिविधियों को संचालित करने वाले कायदे कानूनों में निर्णायक रूप से बदलाव आया है । बेनामी लेनदेन संशोधन अधिनियम, रियल स्टेट नियामक अधिनियम और ऋण शोधन एवं दिवाला अधिनियम के लागू होने से फर्जी निवेश के जरिए कालाधन और संपत्ति सृजित करने के मार्ग बन्द हुए हैं । बैंकिंग तंत्र को भी बड़ी राहत मिली है क्योंकि जालसाजों के कारण बैंकों को अतीत में भारी नुकसान होता रहा है । अब निवेशकों के हर जोखिम पर विनियामकों की कड़ी नजर है । सरकार ने 2.5 लाख से अधिक कम्पनियों को बन्द कर दिया है जो केवल मनीलान्ड्रिग के काम आती थीं । इससे उन लोगों को कड़ा संदेश गया है जो कालेधन को सफेद करते थे या कर चोरी के लिए खोखा कम्पनियों का इस्तेमाल करते थे । पारदर्शिता बढ़ रही है । करों का ढांचा आसान बनाया जा रहा है । कारोबारी सुगमता की वैश्विक रैंकिंग में भारत ने बड़ी छलांग लगाते हुए 142वें स्थान से 77वें स्थान पर पहुंच गया है ।

पत्रिका में समायोजित सामग्री और गुणता के संबंध में सभी पाठकों के विचार अपेक्षित हैं । अगली पत्रिका के संपादन के समय उनके विचारों पर ध्यान दिया जाएगा ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

दिसम्बर, 2018

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
मेघालय महाविद्यालय अध्यापक एसोसिएशन **बनाम** मेघालय राज्य	780
रवीन्द्र कुमार बंसल और अन्य **बनाम** पंकज गुप्ता और अन्य	804
राजेश वर्मा **बनाम** अरविन्द कुमार अहिरवार और अन्य	697
संजय कक्कड़ **बनाम** सीमाशुल्क आयुक्त	718
सुशील कुमार बरियार **बनाम** संजीव कुमार और अन्य	712
सोनी तारियंग (श्री) **बनाम** खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद्	757
हीरजीभाई बच्चूभाई गाधिया **बनाम** कंचनबेन हीरजीभाई गाधिया	705

संसद् के अधिनियम

श्रमजीवी पत्रकार और अन्य समाचारपत्र कर्मचारी (सेवा की शर्तें) और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1955 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 27

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49)

– धारा 19 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 197 और भारत सरकार (कारबार का आबंटन) नियम, 1961 का नियम 3] – सक्षम प्राधिकारी द्वारा अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार किया जाना – तत्पश्चात्, मंजूरी प्रदानकर्ता प्राधिकारी द्वारा अपने पूर्ववर्ती आदेश का पुनर्विलोकन करते हुए अभिलेख पर बिना किसी नई सामग्री के उपस्थित हुए अभियोजन की मंजूरी प्रदान किया जाना – यह अनुज्ञेय नहीं है – मंजूरी प्रदानकर्ता प्राधिकारी समान सामग्री के आधार पर मामले का पुनर्विलोकन या पुनर्विचार नहीं कर सकता ।

संजय कक्कड़ बनाम **सीमाशुल्क आयुक्त** 718

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– धारा 173 – दुर्घटना दावा – बीमा कम्पनी का दायित्व – यदि यह साबित हो जाता है कि चालक द्वारा यान उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाए जाने के कारण दुर्घटना घटित हुई और चालक के पास वैध अनुज्ञप्ति थी तथा दुर्घटना के परिणामस्वरूप आहत व्यक्ति 80 प्रतिशत निशक्त हो गया, तो बीमा कम्पनी क्षतिग्रस्त की आयु और उसकी आय पर लागू होने वाले गुणांक के आधार पर स्थायी हानि के रूप में दर्द और पीड़ा बर्दाश्त करने, सुख सुविधा के नुकसान और परिचालक व्यय, आनंद की हानि और चिकित्सीय उपचार और इन सभी रकमों पर ब्याज के संदाय का दायी है – क्षतिग्रस्त भविष्य की संभावनाओं की स्थायी हानि के कारण आय को 50 प्रतिशत तक बढ़ाए जाने का भी हकदार है – क्षतिग्रस्त बीमा कंपनी से किए गए चिकित्सा व्ययों को भी ब्याज सहित प्राप्त करने का हकदार है – बीमा कंपनी को प्रतिकर के संदाय के लिए दायी ठहराया जा सकता है तथापि, बीमा कंपनी यान के

पृष्ठ संख्या

स्वामी से वसूली के लिए कार्रवाई कर सकती है ।

राजेश वर्मा बनाम **अरविन्द कुमार अहिरवार और अन्य** 697

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 14, 15 और 39घ – नैसर्गिक न्याय का सिद्धांत – यू. जी. सी. मार्गदर्शक सिद्धांत – राज्य भत्ता – सहायताप्राप्त महाविद्यालय के ऐसे अध्यापक जो यू. जी. सी. वेतनमान पा रहे हैं, राज्य भत्ते भी पाने के हकदार हैं, क्योंकि यू. जी. सी. मार्गदर्शक सिद्धांतों में ऐसा कोई निषेध नहीं है, अतः अध्यापक या किसी अन्य कर्मचारी को भत्ते या अन्य फायदे और सुविधाएं एक बार मंजूर किए जाने पर इन्हें प्रत्याहृत या कम नहीं किया जा सकता ।

मेघालय महाविद्यालय अध्यापक एसोसिएशन बनाम **मेघालय राज्य** 780

– अनुच्छेद 226 – न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि – न्यायालय द्वारा मध्यक्षेप – याचियों के विरुद्ध शिकायतों के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा निकाले गए निष्कर्षों का किसी साक्ष्य पर आधारित न होना – याची को सुनवाई का कोई अवसर प्रदान न किया जाना – याची की नियुक्ति को समाप्त और उसके करार को रद्द किया जाना न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि के अन्तर्गत आता है – न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए किया गया मध्यक्षेप न्यायसंगत है ।

सोनी तारियंग (श्री) बनाम **खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद्** 757

– अनुच्छेद 226 – न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि – न्यायालय द्वारा मध्यक्षेप – वैकल्पिक अनुतोष का अभिवाक् – यद्यपि याची के पास नुकसान की भरपाई के

पृष्ठ संख्या

लिए आनुकल्पिक अनुतोष उपलब्ध है, फिर भी आनुकल्पिक अनुतोष की उपलब्धता अनुच्छेद 226 के अधीन उपलब्ध शक्तियों के प्रयोग के लिए कोई आत्यंतिक वर्जन नहीं है ।

सोनी तारियंग (श्री) बनाम **खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद्** 757

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 1, नियम 10(2) – धनीय वाद – प्रतिदाय में व्यतिक्रम – आवश्यक पक्षकार बनाने के लिए आवेदन – करार के हिताधिकारी को पक्षकार बनाने के लिए आवेदन – प्रतिवादी द्वारा लिए गए ऋण के संदाय के संबंध में दो पूर्व-दिनांकित चैक जारी किया जाना – इस तथ्य का उल्लेख वादपत्र या आवेदन में न होना – साक्ष्य से यह साबित होना कि प्रस्तावित प्रोफार्मा प्रतिवादी द्वारा धन की वसूली के लिए कोई कार्यवाही आरंभ नहीं की गई है – विवाद के न्यायनिर्णयन के लिए प्रस्तावित प्रोफार्मा प्रतिवादी को पक्षकार बनाना न तो आवश्यक है और न ही युक्तियुक्त है ।

रवीन्द्र कुमार बंसल और अन्य बनाम **पंकज गुप्ता और अन्य** 804

– धारा 10, 151 और आदेश 21 का नियम 97, 99 और 101 – निष्पादन कार्यवाहियां – रोक आदेश – कार्यवाहियां रोकने के लिए इस आधार पर आवेदन पेश किया जाना कि संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद में न्यायालय द्वारा पारित आदेश के भंग में विक्रय विलेख निष्पादित किया गया है – निचले न्यायालय द्वारा अनुरोध पर विचार न किया जाना – ऐसे आवेदन पर विचार न किया जाना न्यायोचित नहीं है – उच्च न्यायालय द्वारा उक्त आवेदन पर विचार करने के लिए विचारण न्यायालय

पृष्ठ संख्या

को निदेश किया जाना उचित होगा ।

सुशील कुमार बरियार बनाम **संजीव कुमार और अन्य** 712

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

– धारा 13(1)(i-ख) – पति द्वारा विवाह-विच्छेद के लिए अर्ज़ी -- पत्नी के विरुद्ध किसी कारण के बिना परित्यजन का आरोप – पत्नी द्वारा पति के विरुद्ध दूसरी स्त्री के साथ जारकर्म में रहने का कथन – पति द्वारा जारकर्म के आरोप से इनकार न किया जाना – पत्नी द्वारा पृथक् रहने को अकारण नहीं कहा जा सकता – पति विवाह-विच्छेद की डिक्री पाने का हकदार नहीं है ।

हीरजीभाई बच्चूभाई गाधिया बनाम **कंचनबेन हीरजीभाई गाधिया** 705

(2018) 2 सि. नि. प. 697 उत्तराखण्ड

राजेश वर्मा

बनाम

अरविन्द कुमार अहिरवार और अन्य

तारीख 7 मार्च, 2018

न्यायमूर्ति लोक पाल सिंह

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 173 – दुर्घटना दावा – बीमा कम्पनी का दायित्व – यदि यह साबित हो जाता है कि चालक द्वारा यान उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाए जाने के कारण दुर्घटना घटित हुई और चालक के पास वैध अनुज्ञप्ति थी तथा दुर्घटना के परिणामस्वरूप आहत व्यक्ति 80 प्रतिशत निशक्त हो गया, तो बीमा कम्पनी क्षतिग्रस्त की आयु और उसकी आय पर लागू होने वाले गुणांक के आधार पर स्थायी हानि के रूप में दर्द और पीड़ा बर्दाश्त करने, सुख सुविधा के नुकसान और परिचालक व्यय, आनंद की हानि और चिकित्सीय उपचार और इन सभी रकमों पर ब्याज के संदाय का दायी है – क्षतिग्रस्त भविष्य की संभावनाओं की स्थायी हानि के कारण आय को 50 प्रतिशत तक बढ़ाए जाने का भी हकदार है – क्षतिग्रस्त बीमा कंपनी से किए गए चिकित्सा व्ययों को भी ब्याज सहित प्राप्त करने का हकदार है – बीमा कंपनी को प्रतिकर के संदाय के लिए दायी ठहराया जा सकता है तथापि, बीमा कंपनी यान के स्वामी से वसूली के लिए कार्रवाई कर सकती है ।

मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि दावेदार/अपीलार्थी तारीख 20 मई, 2012 को अपनी मोटरसाइकिल पर वारंट तामील करने जा रहा था । लगभग दोपहर 12.30 बजे जब वह मौरना जानसठ रोड के नजदीक छौरवाला पहुंचे तो कार चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाते हुए विपरीत दिशा से आकर दावेदार की मोटरसाइकिल को टक्कर मार दी और दुर्घटना के कारण दावेदार मोटरसाइकिल से नीचे गिर गया और दावेदार की मोटरसाइकिल को कार ने 20 मीटर से अधिक दूरी तक खींचा । दुर्घटना में, दावेदार को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और उसके दाएं हाथ की हड्डी टूट गई और बाएं कंधे को क्षति कारित । उसको मुजफ्फरनगर लाया गया । क्षतियों की गंभीरता को देखते हुए उसे उच्च केन्द्र मुजफ्फरनगर स्थित सरकारी अस्पताल के लिए रेफर किया गया जहां से उसे मेरठ स्थित

भाग्यश्री अस्पताल भर्ती कराया गया और वह तारीख 23 मई, 2012 से 27 मई, 2012 तक भर्ती रहा । तत्पश्चात् उसे नई दिल्ली स्थित सर गंगाराम अस्पताल में भर्ती किया गया । दावेदार को पहुंचीं गंभीर क्षतियों के कारण, उसकी बाईं टांग को तारीख 29 मई, 2012 को काट दिया गया और वह सर गंगाराम अस्पताल में भर्ती रहा और 25,00,000/- लाख रुपए की बड़ी धनराशि खर्च हुई । दावेदार का दायां हाथ भी कार्य करने की स्थिति में नहीं रहा और उसने दिव्यांग प्रमाणपत्र ले लिया और 100 प्रतिशत निःशक्तता का दावा किया ।

देहरादून के मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण/5वां अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने तारीख 28 अक्तूबर, 2015 को पारित निर्णय और अधिनिर्णय पारित करते हुए दावा याचिका के फाइल करने की तारीख से वसूली की तारीख तक 9 प्रतिशत ब्याज के साथ 7,19,928/- रुपए की धनराशि के लिए प्रत्यर्थी सं.3/आई.सी.आई.सी. लॉम्बार्ड कंपनी लिमिटेड के विरुद्ध दावा याचिका को आंशिक रूप से मंजूर किया । उक्त निर्णय से व्यथित होकर वर्तमान अपील फाइल की गई, न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – विद्वान् अधिकरण द्वारा यथा अधिनिर्णीत प्रतिकर के अतिरिक्त, दावेदार/अपीलार्थी भविष्य की संभावनाओं के संबंध में वेतन की हानि के लिए हकदार है जो 1,70,000/- रुपए बनती है । इसलिए, दावेदार/अपीलार्थी 9 प्रतिशत ब्याज के साथ 7,19,928/- रुपए + 1,70,000/- रुपए = 8,89,928/- रुपए के लिए हकदार है जैसा कि अधिकरण द्वारा दावेदार के पक्ष में अधिनिर्णय दिया गया है । अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत की गई धनराशि को प्रत्यर्थियों द्वारा चुनौती नहीं दी गई है । इसलिए, दावेदार/अपीलार्थी 9 प्रतिशत ब्याज के साथ 8,89,928 रुपए की धनराशि के लिए हकदार होगा । विद्वान् अधिकरण द्वारा पारित निर्णय और अधिनिर्णय के अनुसरण में संदत्त की गई कोई भी धनराशि काटी जाएगी और प्रत्यर्थी सं. 3 दावेदार/प्रत्यर्थी को शेष धनराशि का संदाय करेगा । नियोजक/विभाग ने चिकित्सा व्ययों के बाबत 15,90,504/- रुपए की धनराशि संदत्त की थी । चूंकि प्रत्यर्थी संख्या 3 चिकित्सा व्ययों की धनराशि का संदाय करने के लिए दायी है, इसलिए प्रत्यर्थी संख्या 3, 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज के साथ 15,90,504/- रुपए + 8,89,928/- रुपए = 24,80,432/- रुपए की कुल धनराशि का संदाय करेगा । चूंकि 15,90,504/- रुपए की धनराशि नियोजक/विभाग द्वारा अपीलार्थी/दावेदार को संदत्त की गई है, प्रत्यर्थी संख्या 3 से धनराशि प्राप्त करने के बाद

अपीलार्थी नियोजक को जमा करेगा । इस आदेश की प्रति अपीलार्थी के नियोजक/विभाग को भेजी जाए ताकि नियोजक अपीलार्थी से धनराशि वसूल सके यदि वह उसे जमा नहीं करता । तद्नुसार, अपील मंजूर की जाती है । निचले न्यायालय का अभिलेख संबंधित अधिकरण को भेजा जाए । (पैरा 15, 16, 17, 18 और 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2014]	(2014) 11 एस. सी. सी. 178 : **वी. मेकाला** बनाम **एम. मलाठी और अन्य ;**	12
[2009]	(2009) 6 एस. सी. सी. 121 : **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन और अन्य ।**	14

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2018 के आदेश से अपील सं. 13.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन प्रथम अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री आदित्य सिंह

प्रत्यर्थियों की ओर से कोई नहीं

न्यायमूर्ति लोक पाल सिंह – यह अपील 2012 की दावा याचिका सं. 281 में देहरादून के मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण/पंचम अपर जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 28 अक्तूबर, 2015 को पारित निर्णय और अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा विद्वान् अधिकरण ने प्रत्यर्थी संख्या 3 आई.सी.आई.सी लॉम्बार्ड कंपनी लिमिटेड के विरुद्ध दावा याचिका को फाइल किए जाने की तारीख से वसूली की तारीख तक 9 प्रतिशत ब्याज के साथ 7,19,928/- रुपए की रकम आंशिक रूप से मंजूर किया है ।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि दावेदार/अपीलार्थी तारीख 20 मई, 2012 को अपनी मोटरसाइकिल, जिसका रजिस्ट्रेशन सं.यू.के. 08टी.3936 है, पर वारंट तामील करने जा रहा था । जब वह एक अन्य कांस्टेबल सुरेश मीना जो उसी मोटरसाइकिल पर बैठा था, के साथ पुलिस स्टेशन ककरौली, जिला-मुजफ्फरनगर से अपनी मोटरसाइकिल द्वारा जा रहा था जो तभी लगभग दोपहर 12.30 बजे, जब वे चौरवाला ग्राम के

निकट मौरना जानसठ रोड के नजदीक पहुंचे तो कार सं. यू.पी.93-ए.बी./7365 जिसका चालन उस कार के चालक द्वारा उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक किया जा रहा था और विपरीत दिशा से आ रही थी, ने दावेदार की मोटरसाइकिल को टक्कर मार दी और दुर्घटना के कारण दावेदार मोटरसाइकिल से नीचे गिर गया और दावेदार की मोटरसाइकिल को कार ने 20 मीटर से अधिक दूरी तक खींचा । दुर्घटना में, दावेदार को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और उसके दाएं हाथ की हड्डी टूट गई और बाएं कंधे को भी क्षति पहुंची तत्पश्चात् उसको मुजफ्फरनगर स्थित सरकारी अस्पताल ले जाया गया । क्षतियों की गंभीरता को देखते हए उसे मुजफ्फरनगर स्थित उच्चतम स्वास्थ्य केन्द्र के लिए रेफर कर दिया गया जहां से उसे मेरठ स्थित भाग्यश्री अस्पताल भर्ती कराया गया और वह तारीख 23 मई, 2012 से 27 मई, 2012 तक भर्ती रहा । तत्पश्चात् उसे नई दिल्ली स्थित सर गंगाराम अस्पताल में भर्ती किया गया । दावेदार को पहुंचीं गंभीर क्षतियों के कारण, उसकी बाईं टांग को तारीख 29 मई, 2012 को काट दिया गया और वह सर गंगाराम अस्पताल में भर्ती रहा और 25,00,000/- लाख रुपए की बड़ी धनराशि खर्च हुई । दावेदार का दायां हाथ भी कार्य करने की स्थिति में नहीं रहा और उसने दिव्यांग प्रमाणपत्र ले लिया और इसलिए अपीलार्थी ने 100 प्रतिशत निःशक्तता का दावा किया ।

3. यह दलील दी गई है कि उसने (दावेदार ने) कृत्रिम टांग लगाने के लिए उसने 1,40,000/- रुपए खर्च किए । दुर्घटना के समय पर, उसकी आयु 28 वर्ष थी और वह उत्तराखंड पुलिस में उप निरीक्षक के पद पर कार्यरत था और वह प्रतिमास 25,000/- रुपए का वेतन प्राप्त कर रहा था । यह भी दलील दी गई है कि स्थायी निःशक्तता के कारण, वह स्वतंत्र रूप से कार्य करने में असमर्थ हो गया है और उसे एक परिचारक की स्थायी रूप से आवश्यकता है ।

4. यान के स्वामी और चालक ने अपने लिखित कथन फाइल किए और दावा याचिका में किए गए प्रकथनों से इनकार किया । उन्होंने दलील दी है कि दुर्घटना स्वयं दावेदार की अपेक्षा के कारण घटित हुई और वे किसी भी प्रतिकर के संदाय के लिए हकदार नहीं है । उनके द्वारा यह भी दलील दी गई कि दुर्घटना के समय पर चालक/प्रत्यर्थी सं.1 के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति थी और कार प्रत्यर्थी संख्या 3 से बीमाकृत की थी और यान बीमा पालिसी की शर्तों अनुसार चलाया जा रहा था ।

5. प्रत्यर्थी सं.3/आई.सी.आई.सी.आई. लोम्बार्ड कंपनी लिमिटेड ने

अपना लिखित कथन फाइल किया और यह दलील दी कि दुर्घटना उस समय पर घटी जब दावेदार कर्तव्यपालन पर था और कार चालक पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति नहीं थी इसलिए, प्रत्यर्थी सं. 3 किसी भी प्रतिकर के संदाय का दायी नहीं है । विद्वान् अधिकरण ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किए हैं :–

(i) क्या तारीख 20 मई, 2012 को दोपहर 12.30 बजे जिला मुजफ्फरनगर में मौरना रोड पर चौरावाला गांव के निकट कार संख्या यू.पी.93-ए.बी./7365 का चालक यान को उपावलेपन और उपेक्षापूर्वक चला रहा था और दावेदार की मोटरसाइकिल को टक्कर मारी थी जिसके कारण दावेदार ने दुर्घटना में गंभीर क्षतियां बर्दाश्त कीं ?

(ii) क्या दुर्घटना के समय शामिल कार संख्या यू.पी.93-ए.बी./7365 का चालन विधिमान्य दस्तावेजों के साथ किया जा रहा था यदि हां तो इसके प्रभाव ?

(iii) क्या दावेदार किसी दावा रकम/नुकसान के हकदार हैं, यदि हो कितनी राशि और किस पक्षकार से ?

(iv) क्या उक्त दुर्घटना में दावेदार/क्षतिग्रस्त द्वारा उपेक्षा में योगदान किया गया, यदि हां तो इसके प्रभाव ?

6. दावेदार की ओर से, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र, बीमा पालिसी, चालन अनुज्ञप्ति कार चालक के विरुद्ध फाइल किए गए आरोप, मोटरसाइकिल और कार की तकनीकी रिपोर्टें, निःशक्तता प्रमाणपत्र और वेतन प्रमाणपत्र प्रस्तुत किए गए थे ।

7. दावेदार-राजेश वर्मा ने अपना स्वयं का परीक्षण अभि.सा.1 के रूप में कराया । इसी प्रकार से नई दिल्ली स्थित सर गंगाराम में डाक्टर विवेक कुमार ने अपना परीक्षण अभि. सा. 2 के रूप में कराया, दुर्घटना में प्रत्यक्षदर्शी साक्षी श्रीमती सुरेश मीना ने अभि. सा. 3 के रूप कराया, देहरादून स्थित मुख्य चिकित्सा अधिकारी के अभिलेखपाल श्री पंकज जैन ने अपना परीक्षण अभि. सा. 4 के रूप में कराया, नवीन ने अपना परीक्षण अभि. सा. 5 के रूप में कराया और सचिन जिसको परिचालक के रूप में नियुक्त किया गया था, ने अपना परीक्षण अभि. सा. 6 के रूप में कराया । विपक्षियों की ओर से अरविन्द कुमार अहिरवार ने प्रतिरक्षा साक्षी 1 के रूप में और सुरेन्द्र सिंह यादव ने प्रतिरक्षा साक्षी 2 के रूप में अपने परीक्षण

कराए । विपक्षी संख्या 3 की ओर से सूचना का अधिकार अधिनियम के अंतर्गत फाइल किए गए आवेदन की प्रति फाइल की गई थी किन्तु प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा प्रत्यक्ष साक्ष्य प्रस्तुत किए गए ।

8. विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 1 और 4 पर अपने निष्कर्ष अभिलिखित किए और यह अभिनर्धारित किया था कि दुर्घटना उल्लंघन करने वाली कार संख्या यू.पी.93-ए.बी./7365 के उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चालन के कारण घटित हुई और दावेदार की ओर से कोई योगदायी उपेक्षा कारित नहीं की गई ।

9. विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 2 पर भी यह निष्कर्ष अभिलिखित किया कि घटना के समय यान/कार संख्या यू.पी.93-ए.बी./7365 को दुर्घटना के समय पर विधिमान्य कागजों के साथ चलाया जा रहा था और यान का चालक प्रतिरक्षा साक्षी 1 अरविन्द कुमार अहिरवार के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति थी और तद्नुसार विवाद्यक संख्या 2 को निर्णीत कर दिया ।

10. विद्वान् अधिकरण ने विवाद्यक संख्या 3 पर निष्कर्ष अभिलिखित करते हुए, दस्तावेजी साक्ष्य के परिशीलन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष अभिलिखित किया कि दावेदार राजेश परिचारक के 4,800/- रुपए के व्यय को वहन कर रहा है चूंकि वह स्वतंत्र रूप से कार्य करने में असमर्थ है और उन्होंने यह निष्कर्ष भी अभिलिखित किया कि 2014-2015 के चिकित्सा बिलों से यह प्रकट हो जाएगा कि दावेदार ने नई दिल्ली स्थित सर गंगा राम अस्पताल में 15,70,432/- रुपए खर्च किए और कृत्रिम टांग के लिए 1,40,000/- रुपए खर्च किए, इस प्रकार, उस चिकित्सीय खर्चों के बाबत कुल 17,10,432/- रुपए खर्च किए और विभाग ने चिकित्सा व्ययों के बाबत 15,90,504/- रुपए संदाय किया । इस प्रकार, दावेदार प्रत्यर्थी संख्या 1 से 1,19,928/- रुपए की शेष धनराशि प्राप्त करने का हकदार है ।

11. यद्यपि विद्वान् अधिकरण ने यह अभिनिर्धारित किया कि दावेदार 25,000/- रुपए का वेतन प्राप्त कर रहा था किन्तु इस तथ्य पर विचार करते हुए कि 100 प्रतिशत निःशक्तता के बावजूद, दावेदार/अपीलार्थी विभाग से पूर्ण वेतन प्राप्त कर रहा है और इसलिए, दर्द और पीड़ा बर्दाश्त करने के लिए 2,00,000/- रुपए, सुख-सुविधा के नुकसान और परिचारक के व्यय के लिए 2,00,000/- रुपए, आनंद की हानि के लिए 2,00,000/- रुपए तथा शेष चिकित्सा उपचार के लिए 1,19,928/- रुपए अधनिर्णीत किए

थे । तत्पश्चात् संगणित करके प्रतिकर के रूप में कुल धनराशि 7,19,928/- रुपए बनती है ।

12. विद्वान् अधिकरण ने **वी. मेकाला** बनाम **एम. मलाठी और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर विचार किया परन्तु दावेदार/अपीलार्थी के भविष्य की संभावनाओं की हानि के मामले पर विचार नहीं लिया । स्वीकृततः दावेदार/अपीलार्थी उत्तराखंड पुलिस में उप निरीक्षक के पद पर कार्यरत था और दुर्घटना के समय उसकी आयु लगभग 28 वर्ष थी परन्तु विद्वान् अधिकरण ने प्रतिष्ठा और वेतन की हानि की भविष्य की संभावनाओं पर विचार नहीं किया है । इस प्रकार, इस न्यायालय की राय में, विद्वान् अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत की गई प्रतिकर की धनराशि जो विभिन्न शीर्षकों में 7,19,928/- रुपए बनती है, अपीलार्थी भविष्य की संभावनाओं की हानि के लिए भी हकदार है ।

13. नेशनल इंश्योरेंस कंपनी बनाम प्रणय सेठी और अन्य वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय का दृष्टिगत करते हुए, 28 वर्ष की आयु पर और 20,000/- रुपए प्रतिमास के वेतन को आधार मानते हुए, दावेदार आय की भविष्य की संभावनाओं की स्थायी हानि के कारण को वेतन को 50 प्रतिशत बढ़ाए जाने का भी हकदार है । चूंकि, दावेदार/अपीलार्थी की निःशक्तता 80 प्रतिशत है और उसका वेतन 25,000/- रुपए प्रतिमास है जो भविष्य में नहीं बढ़ेगा चूंकि उसे भविष्य में प्रोन्नति नहीं मिलेगी, इसलिए प्रतिमास वेतन का 80 प्रतिशत 20,000/- रुपए बनता है और इसका 50 प्रतिशत का 10,000/- रुपए बनता है ।

14. इस प्रकार, अपीलार्थी की आयु पर विचार करते हुए, **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन और अन्य**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को ध्यान में रखते हुए, 28 वर्ष की आयु में 17 का गुणांक लागू होगा, इसलिए, दावेदार/अपीलार्थी ने वेतन की हानि अर्थात् 10,000/- रुपए प्रतिमास की हानि वहन की है जिसे यदि 17 से गुणा किया जाए तो 1,70,000/- रुपए बनते हैं ।

15. इसलिए, उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, विद्वान् अधिकरण द्वारा यथा अधिनिर्णीत प्रतिकर के अतिरिक्त, दावेदार/अपीलार्थी भविष्य की

---

[1] (2014) 11 एस. सी. सी. 178.

[2] (2009) 6 एस. सी. सी. 121.

संभावनाओं के संबंध में वेतन की हानि के लिए हकदार है जो 1,70,000/- रुपए बनती है । इसलिए, दावेदार/अपीलार्थी 9 प्रतिशत ब्याज के साथ 7,19,928/- रुपए + 1,70,000/- रुपए = 8,89,928/- रुपए के लिए हकदार है जैसा कि अधिकरण द्वारा दावेदार के पक्ष में अधिनिर्णय दिया गया है ।

16. अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत की गई धनराशि को प्रत्यर्थियों द्वारा चुनौती नहीं दी गई है । इसलिए, दावेदार/अपीलार्थी 9 प्रतिशत ब्याज के साथ 8,89,928/- रुपए की धनराशि के लिए हकदार होगा । विद्वान् अधिकरण द्वारा पारित निर्णय और अधिनिर्णय के अनुसरण में संदत्त की गई कोई भी धनराशि काटी जाएगी और प्रत्यर्थी सं. 3 दावेदार/प्रत्यर्थी को शेष धनराशि का संदाय करेगा ।

17. नियोजक/विभाग ने चिकित्सा व्ययों के बाबत 15,90,504/- रुपए की धनराशि संदत्त की थी । चूंकि प्रत्यर्थी संख्या 3 चिकित्सा व्ययों की धनराशि का संदाय करने के लिए दायी है, इसलिए प्रत्यर्थी संख्या 3, 9 प्रतिशत वार्षिक ब्याज के साथ 15,90,504/- रुपए + 8,89,928/- रुपए = 24,80,432/- रुपए की कुल धनराशि का संदाय करेगा । चूंकि 15,90,504/- रुपए की धनराशि नियोजक/विभाग द्वारा अपीलार्थी/दावेदार को संदत्त की गई है, प्रत्यर्थी संख्या 3 से धनराशि प्राप्त करने के बाद अपीलार्थी नियोजक को जमा करेगा ।

18. इस आदेश की प्रति अपीलार्थी के नियोजक/विभाग को भेजी जाए ताकि नियोजक अपीलार्थी से धनराशि वसूल सके यदि वह उसे जमा नहीं करता ।

19. तद्नुसार, अपील मंजूर की जाती है । निचले न्यायालय का अभिलेख संबंधित अधिकरण को भेजा जाए ।

20. तथ्यों और परिस्थितियों में, पक्षकार अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे ।

अपील मंजूर की गई ।

महीं.

हीरजीभाई बच्चूभाई गाधिया

बनाम

कंचनबेन हीरजीभाई गाधिया

तारीख 10 जनवरी, 2018

न्यायमूर्ति अकील कुरैशी और न्यायमूर्ति ए. वाई. कोगजे

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1) (i-ख) – पति द्वारा विवाह-विच्छेद के लिए अर्ज़ी – पत्नी के विरुद्ध किसी कारण के बिना परित्यजन का आरोप – पत्नी द्वारा पति के विरुद्ध दूसरी स्त्री के साथ जारकर्म में रहने का कथन – पति द्वारा जारकर्म के आरोप से इनकार न किया जाना – पत्नी द्वारा पृथक् रहने को अकारण नहीं कहा जा सकता – पति विवाह-विच्छेद की डिक्री पाने का हकदार नहीं है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि हमारे समक्ष के अपीलार्थी-पति का विवाह हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार प्रत्यर्थी के साथ तारीख 16 फरवरी, 1985 को संपन्न हुआ था । उनके विवाह से दो पुत्रियां और एक पुत्र उत्पन्न हुआ था । समय-अंतराल के साथ पति और पत्नी ने पृथक्-पृथक् रहना आरंभ कर दिया । बड़ी पुत्री और पुत्र सतत रूप से पति के साथ रहते रहे जबकि छोटी पुत्री पत्नी के साथ रहती रही । पति द्वारा विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल करने के लिए आधार यह था कि चूंकि छोटी पुत्री जो अर्जी फाइल करने के पूर्व 7 वर्ष की थी, के जन्म के पश्चात् पत्नी ने किसी विधिमान्य कारण के बिना पति के साथ रहना बंद कर दिया था और तद्द्वारा उसने पति को अपने वैवाहिक अधिकारों से वंचित कर दिया है । यह अपील प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, राजपुर द्वारा 2008 के कुटुम्ब वाद सं. 24 में तारीख 2 सितंबर, 2013 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है । कुटुम्ब वाद पति-हीरजीभाई द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13 के अधीन प्रत्यर्थी द्वारा परित्यजन करने के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री का अनुरोध करते हुए फाइल किया गया था । चूंकि कुटुंब न्यायालय द्वारा कुटुम्ब वाद आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था इसलिए, पति ने वर्तमान अपील फाइल की है । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – पति द्वारा वाद पत्नी के द्वारा परित्यजन के आधार पर फाइल किया गया है और अभिवचनों में तथा प्रदर्श 90 पर अभिलिखित पति के साक्ष्य में यह कहा गया है कि पत्नी ने किसी कारण के बिना पति के साथ रहना बंद कर दिया था और वह इस पर अडिग थी और आत्मनिर्भर थी और बार-बार समाज में पति का अपमान करती थी और उसने स्वयं ही पति के साथ रहना बंद कर दिया, यद्यपि पति सदैव ही विवाह से संबंधित अपने दायित्वों को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था । यह भी अभिसाक्ष्य दिया गया है कि चूंकि पत्नी 11 वर्ष से अपनी छोटी पुत्री के साथ पृथक् रह रही है और इसलिए पति परित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री पाने का हकदार है । न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया कि पति की प्रतिपरीक्षा में पति ने स्पष्ट रूप से यह कहा है कि यदि पत्नी और छोटी पुत्री आने के लिए तैयार और उसके साथ रहने के लिए इच्छुक भी हो तो भी वह उन्हें अपने साथ रखने के लिए तैयार और इच्छुक नहीं है । अभिलेख पर उसके अभिसाक्ष्य में यह भी आया है कि इस अवधि के दौरान पति ने अपनी छोटी पुत्री के भरणपोषण और उसकी शिक्षा के संबंध में कोई जिम्मेदारी नहीं ली और उसने एक कम्प्यूटर देने के सिवाय और कोई सहायता नहीं की । उसके अभिसाक्ष्य से यह भी स्पष्ट होता है कि पति ने स्वयं अपनी इच्छा से पत्नी को और छोटी पुत्री को अपने घर पर लाने का कोई प्रयत्न नहीं किया । पति से यह विनिर्दिष्ट प्रश्न पूछे जाने पर कि क्या उसने पत्नी को उसके ससुराल वापिस लाने के लिए कभी भी कोई विधिक सूचना या कोई अन्य सूचना जारी की थी, पति ने न में उत्तर दिया । पत्नी के साक्ष्य प्रदर्श 40 का परिशीलन किया गया जिसमें उसने निश्चित निबंधनों में यह अभिसाक्ष्य दिया है कि जब वह अपने पति के साथ रह रही थी, तब सम्पूर्ण वैवाहिक अवधि के दौरान उसके साथ क्रूरता बरती गई थी । पति के दूसरी स्त्री के साथ अवैध संबंध हैं और पति ने यह पहले ही स्वीकार किया है कि दूसरी स्त्री उसकी पत्नी के रूप में रह रही है और इसलिए वह प्रत्यर्थी पत्नी के साथ वैवाहिक संबंधों में पूर्ण रूप से उपेक्षा बरतता है । अतः अभिसाक्ष्य में यह आया है कि पत्नी के लिए यह पर्याप्त कारण था कि वह अपनी छोटी पुत्री के साथ पृथक् रहे । साक्ष्य में यह भी आया है कि विवाह से संबंधित पृथक् कार्यवाहियों में पत्नी ने तथ्यतः मामले को सुलझाने का प्रयत्न किया था और वह अपनी ससुराल वापस गई थी किन्तु पति के दूसरी स्त्री के साथ सतत संबंधों के कारण वह अपनी ससुराल में सतत रूप से नहीं रह सकी । अभिलेख पर का साक्ष्य प्रदर्श 41 न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग का निर्णय है जो दंड प्रक्रिया

संहिता की धारा 125 (1) के अधीन कार्यवाहियों में दिया गया है । यह मामला इन्हीं पक्षकारों के बीच चला था और जिसमें निर्णय में यह कि निर्दिष्ट है कि पत्नी ने अपने अभिसाक्ष्य में पति द्वारा जारकर्म में रहने की बात कही है और इसलिए न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पत्नी पृथक् रहने में न्यायोचित थी और पति ने अपनी छोटी पुत्री और पत्नी को छोड़ दिया है । न्यायालय ने साक्ष्य और निष्कर्षों के आधार पर पत्नी और पुत्री के लिए भरणपोषण मंजूर करने की कार्यवाही की । पत्नी द्वारा पति के इस पक्षकथन को कि पत्नी ने किसी भी विधिमान्य कारण के बिना उसके साथ रहना बंद कर दिया, पति की ओर से दिए गए साक्ष्य में विवादित किया गया है और कहा है कि पति जारकर्म में रह रहा था । पत्नी के पृथक् रहने के लिए कारण मौजूद था । कुटुंब न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में पूर्ण रूप से सही नहीं हो सकता कि जारकर्म को न साबित करने का भार पति पर था । तथापि, वर्तमान मामले में जहां पत्नी ने जारकर्म का अभिकथन किया है और इस संबंध में अभिलेख पर अपने कथन के समर्थन में पुष्टिकारक साक्ष्य पेश किया है वहां यह नहीं कहा जा सकता कि पत्नी ने मात्र जारकर्म के संदेह के आधार पर पति के साथ रहना बंद कर दिया है । इस न्यायालय का यह मत है कि इस तथ्यात्मक-स्थिति में पति का यह कर्तव्य था कि वह कम से कम जारकर्मित जीवन की विद्यमानता से इनकार करे और इस संबंध में अभिलेख पर कोई साक्ष्य पेश करे । अभिलेख के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि पति की ओर से ऐसा कोई प्रयत्न नहीं किया गया और इसलिए पत्नी पृथक् रूप से रहने में न्यायोचित थी और ऐसे पृथक् रहने को किसी कारण के बिना पति के साथ रहने से इनकार के रूप में नहीं माना जा सकता जिससे कि पति परित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए हकदार बन सके । (पैरा 8, 9, 10 और 11)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2014 की प्रथम अपील सं. 1176.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 96 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री विश्वास एस. दवे

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री अमी याजनिक

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति ए. वाई. कोगजे ने दिया ।

न्या. कोगजे – यह अपील प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, राजपुर द्वारा 2008 के कुटुम्ब वाद सं. 24 में तारीख 2 सितंबर, 2013 को पारित

निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है । कुटुम्ब वाद पति-हीरजीभाई द्वारा हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13 के अधीन प्रत्यर्थी द्वारा परित्यज़न करने के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री का अनुरोध करते हुए फाइल किया गया था । चूंकि कुटुंब न्यायालय द्वारा कुटुम्ब वाद आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था इसलिए पति ने वर्तमान अपील फाइल की है ।

2. संक्षेप में, मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि हमारे समक्ष के अपीलार्थी-पति का विवाह हिन्दू रीति-रिवाजों के अनुसार प्रत्यर्थी के साथ तारीख 16 फरवरी, 1985 को संपन्न हुआ था । पक्षकारों को आगे क्रमश: पति और पत्नी के रूप में निर्दिष्ट किया गया है । उनके विवाह से दो पुत्रियां और एक पुत्र उत्पन्न हुआ था । समय-अंतराल के साथ पति और पत्नी ने पृथक्-पृथक् रहना आरंभ कर दिया । बड़ी पुत्री और पुत्र सतत रूप से पति के साथ रहते रहे जबकि छोटी पुत्री पत्नी के साथ रहती रही । पति द्वारा विवाह-विच्छेद के लिए अर्जी फाइल करने के लिए आधार यह था कि चूंकि छोटी पुत्री जो अर्जी फाइल करने के पूर्व 7 वर्ष की थी, के जन्म के पश्चात् पत्नी ने किसी विधिमान्य कारण के बिना पति के साथ रहना बंद कर दिया था और तद्द्वारा उसने पति को अपने वैवाहिक अधिकारों से वंचित कर दिया है ।

3. विचारण के दौरान दोनों पक्षकारों द्वारा साक्ष्य पेश किया गया जिसमें क्रमशः पति और पत्नी का मौखिक साक्ष्य सम्मिलित है और जिसमें पति और पत्नी के बीच विभिन्न अन्य कार्यवाहियां और अन्य मामलों के अंतिम निर्णय भी सम्मिलित हैं ।

4. कुटुंब न्यायालय ने अभिलेख पर के साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला कि पति, पत्नी की ओर से परित्यजन को साबित करने में विफल रहा है और इसलिए कुटुम्ब वाद खारिज कर दिया गया ।

5. पक्षकारों के विद्वान् अधिवक्ताओं को सुना गया । अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि पत्नी द्वारा पति के साथ रहना बंद करने के लिए कोई कारण नहीं था और चूंकि पत्नी अर्जी फाइल करने के सात वर्ष पूर्व से पृथक् रह रही है इसलिए परित्यजन के आधार पर पति के हक में विवाह-विच्छेद का मामला बनता है । उन्होंने यह दलील दी कि

यद्यपि पति द्वारा समझौते के लिए प्रयास किए गए थे तथापि, पत्नी साथ न रहने पर अड़ी हुई थी और वह अपनी ससुराल वापिस नहीं आई । यह दलील दी गई है कि कुटुंब न्यायालय ने इस तथ्य पर विचार करके गलती की है कि पति जारकर्म में रह रहा था और इस कारण से पत्नी ने उसके साथ रहना बंद कर दिया था, जबकि पति के विरुद्ध ऐसा कोई साक्ष्य नहीं है और इसलिए कुटुंब न्यायालय ने पति के ऊपर जारकर्म के आरोप का न साबित करने का भार गलत डाला है ।

6. इसके प्रतिकूल पत्नी के विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी कि पति द्वारा जारकर्म करने के संबंध में अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य मौजूद है जिसके कारण पत्नी पति के साथ न रहने के लिए मजबूर हुई । यह दलील दी गई है कि तथ्यतः पति दूसरी स्त्री के साथ रह रहा है और यह बात स्वतः पत्नी के विरुद्ध क्रूरता गठित करती है । अधिवक्ता द्वारा अनुदेश के आधार पर यह दलील दी गई है कि पति ने अब दूसरी स्त्री के साथ विवाह कर लिया है और इस तनावपूर्ण वातावरण के कारण बड़ी पुत्री ने आत्महत्या कर ली है और अब पुत्र ने भी, जो पिता के साथ रह रहा था, पिता का मकान छोड़ दिया है । यह दलील दी गई है कि पति ने विवाह से संबंधित अपने कर्तव्यों को पूरा नहीं किया । उसने पत्नी को और छोटी पुत्री को कोई भरणपोषण संदत्त नहीं किया ।

7. न्यायालय ने दोनों पक्षकारों की दलीलों को सुना और अभिलेख पर के दस्तावेजों का परिशीलन किया ।

8. पति द्वारा वाद पत्नी के द्वारा परित्यजन के आधार पर फाइल किया गया है और अभिवचनों में तथा प्रदर्श 90 पर अभिलिखित पति के साक्ष्य में यह कहा गया है कि पत्नी ने किसी कारण के बिना पति के साथ रहना बंद कर दिया था और वह इस पर अडिग थी और आत्मनिर्भर थी और बार-बार समाज में पति का अपमान करती थी और उसने स्वयं ही पति के साथ रहना बंद कर दिया, यद्यपि पति सदैव ही विवाह से संबंधित अपने दायित्वों को पूरा करने के लिए तैयार और इच्छुक था । यह भी अभिसाक्ष्य दिया गया है कि चूंकि पत्नी 11 वर्ष से अपनी छोटी पुत्री के साथ पृथक् रह रही है और इसलिए पति परित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री पाने का हकदार है । न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया कि पति की प्रतिपरीक्षा में पति ने स्पष्ट रूप से यह कहा है कि यदि पत्नी और

छोटी पुत्री आने के तैयार और उसके साथ रहने के लिए इच्छुक भी हो तो भी वह उन्हें अपने साथ रखने के लिए तैयार और इच्छुक नहीं है । अभिलेख पर उसके अभिसाक्ष्य में यह भी आया है कि इस अवधि के दौरान पति ने अपनी छोटी पुत्री के भरणपोषण और उसकी शिक्षा के संबंध में कोई जिम्मेदारी नहीं ली और उसने एक कम्प्यूटर देने के सिवाय और कोई सहायता नहीं की । उसके अभिसाक्ष्य से यह भी स्पष्ट होता है कि पति ने स्वयं अपनी इच्छा से पत्नी को और छोटी पुत्री को अपने घर पर लाने का कोई प्रयत्न नहीं किया । पति से यह विनिर्दिष्ट प्रश्न पूछे जाने पर कि क्या उसने पत्नी को उसकी ससुराल वापिस लाने के लिए कभी भी कोई विधिक सूचना या कोई अन्य सूचना जारी की थी, पति ने न में उत्तर दिया ।

9. पत्नी के साक्ष्य प्रदर्श 40 का परिशीलन किया गया जिसमें उसने निश्चित निबंधनों में यह अभिसाक्ष्य दिया है कि जब वह अपने पति के साथ रह रही थी, तब सम्पूर्ण वैवाहिक अवधि के दौरान उसके साथ क्रूरता बरती गई थी । पति के दूसरी स्त्री के साथ अवैध संबंध हैं और पति ने यह पहले ही स्वीकार किया है कि दूसरी स्त्री उसकी पत्नी के रूप में रह रही है और इसलिए वह प्रत्यर्थी-पत्नी के साथ वैवाहिक संबंधों में पूर्ण रूप से उपेक्षा बरतता है । अतः अभिसाक्ष्य में यह आया है कि पत्नी के लिए यह पर्याप्त कारण था कि वह अपनी छोटी पुत्री के साथ पृथक् रहे । साक्ष्य में यह भी आया है कि विवाह से संबंधित पृथक् कार्यवाहियों में पत्नी ने तथ्यत: मामले को सुलझाने का प्रयत्न किया था और वह अपनी ससुराल वापिस गई थी किन्तु पति के दूसरी स्त्री के साथ सतत संबंधों के कारण वह अपनी ससुराल में सतत रूप से नहीं रह सकी ।

10. अभिलेख पर का साक्ष्य प्रदर्श 41 न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम वर्ग का निर्णय है जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 (1) के अधीन कार्यवाहियों में दिया गया है । यह मामला इन्हीं पक्षकारों के बीच चला था और जिसमें निर्णय में यह कि निर्दिष्ट है कि पत्नी ने अपने अभिसाक्ष्य में पति द्वारा जारकर्म में रहने की बात कही है और इसलिए न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि पत्नी पृथक् रहने में न्यायोचित थी और पति ने अपनी छोटी पुत्री और पत्नी को छोड़ दिया है । न्यायालय ने साक्ष्य और निष्कर्षों के आधार पर पत्नी और पुत्री के लिए भरणपोषण मंजूर करने की

कार्यवाही की ।

11. पत्नी द्वारा पति के इस पक्षकथन को कि पत्नी ने किसी भी विधिमान्य कारण के बिना उसके साथ रहना बंद कर दिया, पति की ओर से दिए गए साक्ष्य में विवादित किया गया है और कहा है कि पति जारकर्म में रह रहा था । पत्नी के पृथक् रहने के लिए कारण मौजूद था । कुटुंब न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में पूर्ण रूप से सही नहीं हो सकता कि जारकर्म को नासाबित करने का भार पति पर था । तथापि, वर्तमान मामले में जहां पत्नी ने जारकर्म का अभिकथन किया है और इस संबंध में अभिलेख पर अपने कथन के समर्थन में पुष्टिकारक साक्ष्य पेश किया है वहां यह नहीं कहा जा सकता कि पत्नी ने मात्र जारकर्म के संदेह के आधार पर पति के साथ रहना बंद कर दिया है । इस न्यायालय का यह मत है कि इस तथ्यात्मक-स्थिति में पति का यह कर्तव्य था कि वह कम से कम जारकर्मित जीवन की विद्यमानता से इनकार करे और इस संबंध में अभिलेख पर कोई साक्ष्य पेश करे । अभिलेख के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि पति की ओर से ऐसा कोई प्रयत्न नहीं किया गया और इसलिए पत्नी पृथक् रूप से रहने में न्यायोचित थी और ऐसे पृथक् रहने को किसी कारण के बिना पति के साथ रहने से इनकार के रूप में नहीं माना जा सकता जिससे कि पति परित्यजन के आधार पर विवाह-विच्छेद की डिक्री के लिए हकदार बन सके ।

12. अतः इस मामले में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । अतः अपील एतद्द्वारा खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

मह.

सुशील कुमार बरियार

बनाम

संजीव कुमार और अन्य

तारीख 4 जनवरी, 2018

न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 10, 151 और आदेश 21 का नियम 97, 99 और 101 – निष्पादन कार्यवाहियां – रोक आदेश – कार्यवाहियां रोकने के लिए इस आधार पर आवेदन पेश किया जाना कि संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद में न्यायालय द्वारा पारित आदेश के भंग में विक्रय विलेख निष्पादित किया गया है – निचले न्यायालय द्वारा अनुरोध पर विचार न किया जाना – ऐसे आवेदन पर विचार न किया जाना न्यायोचित नहीं है – उच्च न्यायालय द्वारा उक्त आवेदन पर विचार करने के लिए विचारण न्यायालय को निदेश किया जाना उचित होगा ।

2007 का हक वाद सं. 328 जो तारीख 30 मार्च, 2007 के करार के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए डिक्री हेतु संस्थित किया गया था, तारीख 28 जुलाई, 2009 को डिक्री किया गया था और उसके पश्चात् डिक्रीधारक द्वारा 2010 का निष्पादन मामला सं. 5 संस्थित किया गया था । याची ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 21 के नियम 97, 99 और 101 के अधीन एक आवेदन फाइल किया था जिसे 2011 के प्रकीर्ण मामला सं. 41 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया है । निष्पादन मामले के लंबन के दौरान तारीख 21 नवंबर, 2011 को 2010 के निष्पादन मामला सं. 10 में एक आवेदन फाइल किया गया था । याची ने 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में तारीख 3 दिसंबर, 2011 को पारित उस आदेश से व्यथित होकर इस न्यायालय में रिट याचिका फाइल की है जिसके द्वारा याची का तारीख 21 नवंबर, 2011 का आवेदन खारिज किया गया है । रिट याचिका भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – प्रत्यक्षतया 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में आगे कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए अनुरोध पर विचार न करने से तारीख 3

दिसंबर, 2011 का आक्षेपित आदेश इस विवाद्यक को कायम न रखे जाने योग्य बना देता है । जहां तक 2011 के प्रकीर्ण मामला सं. 41 के साथ 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 के अभिलेख को जोड़ने/ सम्मिश्रित करने का संबंध है, न्यायालय को विचारण न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में कोई अनियमितता प्रतीत नहीं होती है । न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि तारीख 24 फरवरी, 2011 के आदेश में यह बात सम्यक्तः उल्लिखित की गई है कि विक्रय विलेख तारीख 22 दिसंबर, 2012 को निष्पादित किया गया था और तद्नुसार न्यायालय को 24 फरवरी, 2012 के आदेश को वापस लेने के लिए कोई कारण प्रतीत नहीं होता । विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में आगे कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए किए गए अनुरोध पर दृष्टिगत करते हुए एतद्द्वारा यह आदेश किया जाता है कि याची को संपत्ति से बेकब्जा करने के संबंध में तारीख 24 फरवरी, 2012 को पारित आदेश सतत रूप से उस समय तक लागू रहेगा जब तक कि विचारण न्यायाधीश द्वारा तारीख 21 नवंबर, 2011 के आवेदन में रोक के लिए किए गए अनुरोध को अंतिम रूप से विनिश्चित नहीं किया जाता । यह रिट याचिका भागतः मंजूर की जाती है । 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 की मूल फाइल में प्रस्तुत तारीख 21 नवंबर, 2011 के आवेदन को पुनः स्थापित किया जाता है । विचारण न्यायाधीश दोनों पक्षकारों को सुनवाई का समुचित अवसर देने के पश्चात् तारीख 21 नवंबर, 2011 के आवेदन में किए गए उक्त अनुरोध पर अपना अंतिम आदेश पारित करेगा । (पैरा 6, 11 और 13)

आरंभिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2011 की रिट याचिका (सिविल) सं. 7303.

संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन सिविल रिट याचिका ।

याची की ओर से — सर्वश्री वी. शिवनाथ और नीरज किशोर

प्रत्यर्थी की ओर से — सर्वश्री अमर कुमार सिन्हा और कुंदन कुमार अम्बास्था

न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर – याची ने 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में तारीख 3 दिसंबर, 2011 को पारित उस आदेश से व्यथित होकर इस न्यायालय में रिट याचिका फाइल की है जिसके द्वारा याची का तारीख 21

नवंबर, 2011 का आवेदन खारिज किया गया है ।

2. सुना गया ।

3. याची के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री वी. शिवनाथ ने तारीख 21 नवंबर, 2011 के आवेदन का निर्देश करते हुए यह दलील दी है कि 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 को 2011 के प्रकीर्ण मामला सं. 41 में जोड़ने के लिए संयुक्त आवेदन और 2011 के प्रकीर्ण मामला सं. 41 तक निपटान किए जाने तक 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में आगे की कार्यवाहियों पर रोक लगाने के लिए आवेदन पेश किया गया था तथापि, विद्वान् विचारण न्यायाधीश ने उक्त आवेदन में अनुरोध के प्रथम भाग पर ही विचार किया और 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में आगे कार्यवाहियों पर रोक लगाने के लिए अनुरोध पर विचारण न्यायाधीश ने कोई न्यायनिर्णयन नहीं किया और इसलिए मात्र इस आधार पर ही न्यायालय द्वारा तारीख 3 दिसंबर, 2011 के आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप किए जाने की आवश्यकता है ।

4. प्रत्यर्थी सं. 1 के विद्वान् काउंसेल श्री अमर कुमार सिन्हा ने यह दलील दी है कि चूंकि विक्रय विलेख पहले ही तारीख 23 दिसंबर, 2011 को निष्पादित कर दिया गया था इसलिए तारीख 21 नवंबर, 2011 का आवेदन ग्रहण किए जाने योग्य नहीं है । यह भी दलील दी गई है कि याची को वाद संपत्तियों में कोई विधिक अधिकार नहीं है और इसलिए तारीख 21 नवंबर, 2011 का आवेदन ठीक ही खारिज किया गया है ।

5. अनावश्यक विस्तार से बचने के लिए केवल यह उल्लेख करना पर्याप्त होगा कि 2007 का हक वाद सं. 328 जो तारीख 30 मार्च, 2007 के करार के विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए डिक्री हेतु संस्थित किया गया था, तारीख 28 जुलाई, 2009 को डिक्री किया गया था और उसके पश्चात् डिक्रीधारक द्वारा 2010 का निष्पादन मामला सं. 5 संस्थित किया गया था । याची ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के साथ पठित आदेश 21 के नियम 97, 99 और 101 के अधीन एक आवेदन फाइल किया था जिसे 2011 के प्रकीर्ण मामला सं. 41 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया है । निष्पादन मामले के लंबन के दौरान तारीख 21 नवंबर, 2011 को 2010 के निष्पादन मामला सं. 10 में एक आवेदन फाइल किया गया था । विचारण न्यायालय द्वारा उक्त आवेदन पर तारीख 3 दिसंबर, 2011 को पारित अपने आदेश में निम्न प्रकार चर्चा करते हुए निष्कर्ष

निकाला गया है :–

> "2011 का प्रकीर्ण मामला सं. 41 इस निष्पादन मामले के संबंध में फाइल किया गया है जो तारीख 9 दिसंबर, 2011 को सुनवाई के लिए नियत है । दोनों ही मामले पृथक्-पृथक् हैं और इसलिए न्याय हित में 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 और 2011 के प्रकीर्ण मामला सं. 41 को पृथक्-पृथक् सुना जाएगा । इस मामले में निष्पादन के लिए विक्रय विलेख फाइल किया गया है । सरिस्तादार को यह निर्देश दिया जाता है कि वह विक्रय विलेख का निष्पादन करे । डिक्री धारक के विद्वान् अधिवक्ता ने यह भी अनुरोध किया है कि मेरी न्यायालय फीस निरर्थक हो जाएगी यदि समय के भीतर कोई निष्पादन नहीं किया जाता है । इस मामले को विक्रय विलेख के निष्पादन के लिए तारीख 9 दिसंबर, 2011 को नियत किया जाता है ।"

6. प्रत्यक्षतया 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में आगे कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए अनुरोध पर विचार न करने से तारीख 3 दिसंबर, 2011 का आक्षेपित आदेश इस विवाद्यक को कायम न रखे जाने योग्य बना देता है । जहां तक 2011 के प्रकीर्ण मामला सं. 41 के साथ 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 के अभिलेख को जोड़ने/सम्मिश्रित करने का संबंध है, मुझे विचारण न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश में कोई अनियमितता प्रतीत नहीं होती है ।

7. इस रिट याचिका की कार्यवाहियों से यह प्रकट होता है कि इस न्यायालय ने तारीख 10 जनवरी, 2012 को निम्नलिखित आदेश पारित किया था :–

> "प्रत्यर्थी, सं. 1, 2 और 3 को शीघ्र वापसी के साथ सूचना जारी की जाए । विद्वान् काउंसेल द्वारा एक सप्ताह के भीतर प्रत्यर्थियों पर साधारण प्रक्रिया द्वारा सूचनाओं की तामीली के लिए तलवाना डाला जाए । विद्वान् काउंसेल की यह दलील है कि याची उस संपत्ति का क्रेता है जो विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए वाद की विषयवस्तु है और जिसमें याची को पक्षकार नहीं बनाया गया था । वाद याची के हक में विक्रय विलेख के निष्पादन के पश्चात् संस्थित किया गया था । इन परिस्थितियों में और इस पृष्ठभूमि में निष्पादन कार्यवाहियों के दौरान डिक्री पारित की गई थी और सिविल प्रक्रिया

संहिता के आदेश 21, नियम 97 के अधीन एक आवेदन पेश किया गया था जो न्यायनिर्णयन के लिए लंबित है ।

इन परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए 2007 के हक वाद सं. 328 से उद्भूत 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में डिक्री का निष्पादन अगली तारीख को मामला सूचीबद्ध किए जाने तक स्थगित रहेगा । निष्पादन डिक्री के अनुपालन में कोई विक्रय विलेख निष्पादित नहीं किया जाएगा ।"

8. वर्तमान कार्यवाही में तारीख 24 फरवरी, 2012 को पारित आदेश से यह प्रकट होता है कि याची द्वारा यह अभिकथन करते हुए एक आवेदन फाइल किया गया था कि तारीख 10 जनवरी, 2012 को पारित अंतरिम आदेश के भंग में तारीख 22 दिसंबर, 2011 को एक विक्रय विलेख निष्पादित किया गया था । तारीख 24 फरवरी, 2012 का आदेश इस प्रकार है :–

"वर्तमान रिट याचिका में एक अंतरिम आदेश पारित किया गया था जिसमें 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में जो 2007 के हक वाद सं. 328 से उद्भूत हुआ था, रोक लगाई गई थी । विनिर्दिष्ट रूप से यह निदेश किया गया था कि निष्पादन डिक्री के अनुसरण में कोई विक्रय विलेख निष्पादित नहीं किया जाए ।

2012 का अंतरिम आदेश 278 यह कथन करते हुए पेश किया गया है कि अंतरिम आदेश के बावजूद विक्रय विलेख निष्पादित किया गया है और इसलिए याची के बेदखल होने की संभावना है । अंतर्वर्ती आवेदन के पैरा 19 और 20 में विनिर्दिष्ट प्रकथन किया गया है । यह कहा गया है कि विक्रय विलेख तारीख 22 दिसंबर, 2011 को निष्पादित किया गया था । इन तथ्यों और परिस्थितियों में उपर्युक्त विक्रय विलेख के निष्पादन के अनुसरण में यह निदेश दिया जाता है कि मामला अगली तारीख को सूचीबद्ध होने तक प्रश्नगत संपत्ति से याची को बेकब्जा नहीं किया जाएगा ।

2012 के अंतिरम आवेदन सं. 2012 का निपटान किया जाता है ।"

9. प्रत्यर्थी सं. 1 के विद्वान् काउंसेल श्री अमर कुमार सिन्हा ने यह दलील दी है कि याची ने तारीख 18 अक्तूबर, 2016 को 2016 का

अंतरिम आवेदन सं. 7089 तारीख 24 फरवरी, 2012 के आदेश द्वारा मंजूर किए गए रोक आदेश को रद्द करने के लिए पेश किया गया था ।

10. प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा यह दलील दी गई है कि तारीख 10 जनवरी, 2012 का अंतरिम आदेश से पूर्व के इस तथ्य को छुपाते हुए कि विक्रय विलेख पहले ही निष्पादित किया जा चुका था, प्राप्त किया गया था ।

11. मुझे यह प्रतीत होता है कि तारीख 24 फरवरी, 2011 के आदेश में यह बात सम्यक्तः उल्लिखित की गई है कि विक्रय विलेख तारीख 22 दिसंबर, 2012 को निष्पादित किया गया था और तद्नुसार मुझे 24 फरवरी, 2012 के आदेश को वापस लेने के लिए कोई कारण प्रतीत नहीं होता । विद्वान् विचारण न्यायाधीश द्वारा 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 में आगे कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए किए गए अनुरोध पर दृष्टिगत करते हुए एतद्द्वारा यह आदेश किया जाता है कि याची को संपत्ति से बेकब्जा करने के संबंध में तारीख 24 फरवरी, 2012 को पारित आदेश सतत रूप से उस समय तक लागू रहेगा जब तक कि विचारण न्यायाधीश द्वारा तारीख 21 नवंबर, 2011 के आवेदन में रोक के लिए किए गए अनुरोध को अंतिम रूप से विनिश्चित नहीं किया जाता ।

12. यह रिट याचिका भागतः मंजूर की जाती है । 2010 के निष्पादन मामला सं. 5 की मूल फाइल में प्रस्तुत तारीख 21 नवंबर, 2011 के आवेदन को पुनः स्थापित किया जाता है । विचारण न्यायाधीश दोनों पक्षकारों को सुनवाई का समुचित अवसर देने के पश्चात् तारीख 21 नवंबर, 2011 के आवेदन में किए गए उक्त अनुरोध पर अपना अंतिम आदेश पारित करेगा ।

13. उपर्युक्त निबंधनों में इस रिट याचिका का निपटान किया जाता है । तद्नुसार 2012 का अंतरिम आवेदन सं. 48, 2014 का 1344 और 2016 का 7089 को निपटाया जाता है ।

रिट याचिका भागतः मंजूर की गई ।

मह.

(2018) 2 सि. नि. प. 718 मद्रास

संजय कक्कड़

बनाम

सीमाशुल्क आयुक्त

तारीख 11 अगस्त, 2017

न्यायमूर्ति एम. दुरईस्वामी

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 (1988 का 49) – धारा 19 [सपठित दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 197 और भारत सरकार (कारबार का आबंटन) नियम, 1961 का नियम 3] – सक्षम प्राधिकारी द्वारा अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार किया जाना – तत्पश्चात्, मंजूरी प्रदानकर्ता प्राधिकारी द्वारा अपने पूर्ववर्ती आदेश का पुनर्विलोकन करते हुए अभिलेख पर बिना किसी नई सामग्री के उपस्थित हुए अभियोजन की मंजूरी प्रदान किया जाना – यह अनुज्ञेय नहीं है – मंजूरी प्रदानकर्ता प्राधिकारी समान सामग्री के आधार पर मामले का पुनर्विलोकन या पुनर्विचार नहीं कर सकता ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि याची सीमाशुल्क विभाग में वर्ष 1992 से कार्यरत है और वर्तमान में सीमाशुल्क विभाग में निर्धारण अधिकारी का पद धारक है । याची के अनुसार निर्धारण अधिकारी, जो मूल्य निर्धारण का भारसाधक होता है, के प्रत्येक कार्य का निर्धारण और समर्थन उसके तत्कालिक वरिष्ठ अधिकारी अर्थात् सीमाशुल्क विभाग के सहायक आयुक्त द्वारा किया जाना चाहिए । यदि निर्धारण अधिकारी निर्धारण के किसी पहलू के संबंध में किसी स्पष्टीकरण की ईप्सा करता है, तो इस प्रकार के स्पष्टीकरण की ईप्सा के लिए सहायक आयुक्त की अनुज्ञा प्राप्त किया जाना अनिवार्य होता है । निर्धारण अधिकारी का कार्य निस्संदेह रूप से उसके तत्कालिक वरिष्ठ अधिकारी अर्थात् सहायक आयुक्त के पूर्ण नियंत्रण और संवीक्षा के अधीन होता है और निर्धारण का कार्य केवल तब पूर्ण माना जाता है जब माल के प्रवेश का बिल सहायक आयुक्त के कम्प्यूटर की स्क्रीन से हट जाता है । सम्पूर्ण प्रक्रिया सीमाशुल्क निदेशिका में समाविष्ट अनुदेशों के अनुसार आनलाइन स्क्रीन निर्धारण पर आधारित होती है, निर्धारण के प्रक्रम पर कोई मूल दस्तावेज स्वीकार नहीं किया जाता और सभी दस्तावेजों को परीक्षण के लिए शेड

अधिकारियों द्वारा परीक्षण के समय पर जमा कराया जाता है और उनका सत्यापन किया जाता है । अतः, निर्धारण अधिकारी अपने कर्तव्यों का निर्वहन केवल कम्प्यूटर पर शपथपूर्वक दी गई घोषणा के आधार पर करता है और उससे किसी ऐसे दस्तावेज की सत्यापन की अपेक्षा नहीं की जाती जिसका सत्यापन सीमाशुल्क किराया स्टेशन में तैनात पदनामित सीमाशुल्क अधिकारियों द्वारा माल के परीक्षण के समय किया जाना होता है अर्थात् भौतिक माल के । निर्धारण अधिकारी का मूल कार्य छूट के लाभों, जिनका दावा आयातकों द्वारा विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत किया जाता है, के टिप्पण पर आधारित आयातित माल पर संदेय शुल्क को विनिर्धारित करना होता है । उससे यह भी अपेक्षा की जाती है कि वह किसी निर्बंधन, अनुज्ञप्ति, निषेध इत्यादि के दृष्टिकोण से आयात नीति के अनुपालन का सत्यापन करे । सम्पूर्ण कार्य इलैक्ट्रोनिक डाटा इंटरचेंज प्रणाली की सहायता से किया जाता है और जलपोत पर लदे हुए माल की घोषणा को इलैक्ट्रोनिक माध्यम से अन्तरित किया जाता है । समस्त संगणना प्रणाली द्वारा स्वयमेव किए जाते हैं, जो अधिसूचित विदेशी एक्सचेंजों की दरों पर भी लागू होते हैं । यह मूलतः आयात नीति को लागू करने और घोषित माल पर शुल्क के संगणना का कार्य है और परीक्षण शेड अधिकारियों द्वारा घोषित विवरण के सत्यापन के अधीन है । निर्धारण के पश्चात् प्रविष्टि के बिल की एक प्रति इलैक्ट्रोनिक डाटा इंटरचेंज सेवा केन्द्र में छप जाती है । याची के अनुसार वह वर्ष 2011 में आयातित माल के निर्धारण के प्रयोजनार्थ भारसाधक निर्धारण अधिकारी था और आयात परेक्षितों में से एक आयात परेक्षित जिसका कि उसने मूल्यांकन किया था, तारीख 2 सितम्बर, 2011 के प्रवेश के बिल के अन्तर्गत था, जिसको आयातक द्वारा इलैक्ट्रोनिक माध्यम से फाइल किया गया था और माल के घोषित विवरण के आधार पर यह पूर्ण रूप से स्पष्ट हो गया था कि माल का ब्रांड नाम, माडल संख्या और विनिर्दिष्ट बातें, जो आयातित वस्तु में समाविष्ट थीं अर्थात् एयरकंडिशनरों के भीतरी उपकरण, जो बात किसी भी प्रकार से समझ में आने योग्य नहीं थीं और जिनका आयात चेन्नई सहित सम्पूर्ण देश में नियमित रूप से वर्षों से किया जा रहा था । उसके द्वारा की गई घोषणा के आधार पर माल के सम्पूर्ण विवरण को समझे जाने में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं थी, अतः निराकरण के प्रयोजनार्थ आयातक से स्पष्टीकरण की ईप्सा किए जाने की आवश्यकता उत्पन्न हुई । वे विवरण जिनकी सम्यक् रूप से पुष्टि आयातक द्वारा की गई, को प्रक्रिया के अनुसार

इलैक्ट्रोनिक माध्यम से अन्तरित कर दिया गया और जो निर्धारण किया गया, वह भी इलैक्ट्रोनिक डाटा इंटरचेंज प्रणाली के अन्तर्गत था । तत्पश्चात् एक अन्य प्रवेश के बिल के अन्तर्गत एक अन्य आयात के संबंध में चेन्नई के सतर्कता निदेशालय द्वारा आरम्भ किए गए अन्वेषण के आधार पर एयरकंडिशनरों और उसके कलपुर्जों के बहाने से सोनी टेलीविजन के आयात की गलत घोषणा को अन्तर्वलित करने वाली अभिकथित तस्करी के व्यापक जाल का खुलासा आयातक के परिसर से एक पेनड्राइव की बरामदी के साथ हुआ, जिसमें चौरासी नौपरिवहनों द्वारा किए गए आयातों के आंकड़े समाविष्ट थे । चौरासी आयात नौपरिवहनों के संबंध में कारण बताओ नोटिस का न्यायनिर्णयन न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा किया जाना शेष है । तत्पश्चात् द्वितीय प्रत्यर्थी ने अभिकथित किया कि प्रवेश के बिल, जिनके माध्यम से याची द्वारा जो आयात किया गया था, वह एयरकंडिशनर थे, न कि एयरकंडिशनरों की कमरों के भीतर प्रयोग किए जाने वाले उपकरण, जैसा कि आयातक द्वारा निदेशाधीन प्रवेश के बिल में घोषणा की गई है । उपरोक्त एकल आयात, जिसका निर्धारण याची द्वारा किया गया, पूर्णतः आयातक द्वारा अभिपुष्ट व्यापक घोषणा पर आधारित प्रक्रिया के अनुसार था जो राजस्व खुफिया निदेशालय द्वारा अन्वेषण आरम्भ किए जाने के अत्यधिक पूर्व का था । द्वितीय प्रत्यर्थी को यह भी ज्ञात था कि यह प्रथा चल रही है और इसी प्रथा का पालन करते हुए तिरासी अन्य आयात किए जा चुके हैं और द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा इस संबंध में छह प्रथम इत्तिला रिपोर्टें ऊपरवर्णित नौपरिवहन द्वारा चौरासी आयात का उल्लेख करते हुए फाइल की गई थीं, जिनको राजस्व खुफिया निदेशालय द्वारा अपने कारण बताओ नोटिस में निर्दिष्ट किया गया । याची के अनुसार, उसने सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक 84151090 के अन्तर्गत प्रविष्टि के उपरोक्त बिल के अधीन घोषित माल का निर्धारण किया था । द्वितीय प्रत्यर्थी ने दावा किया है कि केवल एयरकंडीशनर सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक 84151090 के अन्तर्गत आते हैं और उसने यह अभिकथित किया है कि यह गलत कार्य का भाग था और याची को स्पष्टीकरण मांगना चाहिए था । शिकायत इस मूल आधार पर अग्रसर हुई कि सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक 84151090 केवल एयरकंडिशनरों के बाबत है और इस शीर्षक के अन्तर्गत भीतरी उपकरण सम्मिलित नहीं होंगे । तथापि, सीमाशुल्क टैरिफ अधिनियम की सुसंगत अनुसूची के अनुसार सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक 84151090 में इस प्रविष्टि को 'अन्य' के रूप में निर्दिष्ट किया गया है, न कि किसी विनिर्दिष्ट माल के रूप में ।

तथापि, द्वितीय प्रत्यर्थी ने उस प्रविष्टि को निर्दिष्ट नहीं किया है जिसमें घोषित माल को वर्गीकृत किया जाना चाहिए । द्वितीय प्रत्यर्थी ने दावा किया है कि याची को संदेह पर विचार करना चाहिए था और शंका को उठाया जाना चाहिए था और उसके विरुद्ध अभियोजन की कार्यवाही इसी एकमात्र आधार पर आरम्भ की गई है । चूंकि याची घोषित विवरण की संपूर्णता के बारे में सहमत था, जिसको अभिपुष्टि के अधीन घोषित किया गया था और जो अपरिवर्तनीय था, अतः उसके समक्ष अभिपुष्ट घोषणा की सत्यतता या परिशुद्धता के बारे में शंका करने का कोई कारण नहीं था और इसलिए किसी भी प्रकार की शंका को उठाए जाने के द्वारा किसी स्पष्टीकरण की ईप्सा किए जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी । याची के अनुसार, वास्तविकता यह है कि एक ही प्रकार के आयात के लिए एक ही प्रकार के हजारों प्रवेश के बिल आयातकों और अन्य, दोनों के द्वारा उपबंधित किए गए हैं, जिनको विभिन्न प्राधिकृत प्राधिकारियों द्वारा सम्पूर्ण भारत में एक ही प्रकार से और एक ही सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक के अन्तर्गत स्वीकार किया जाता है और उन्हीं के आधार पर निर्धारण किया जाता है । राजस्व खुफिया निदेशालय द्वारा बरामद की गई पेनड्राइव के आधार पर याची द्वारा अंगीकृत वर्गीकरण के निर्वचन के एकमात्र कारण को उद्धृत करते हुए प्रत्यर्थी ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि निर्दिष्ट एकल आयात में दांडिक षड्यंत्र अन्तर्वलित था, जिसका निर्धारण उसके द्वारा किया गया था । तथापि, बाद में इस बात को महसूस करते हुए कि यह माल के वर्गीकरण का शुद्धतः निर्वचनात्मक और अत्यधिक तकनीकी मामला है, याचियों के पूर्वाधिकारियों द्वारा किए गए वर्गीकरण के आधार पर संदेह की समान कमी (जिसका अन्वेषण पांच विभिन्न प्रथम इत्तिला रिपोर्टों के अन्तर्गत किया गया) द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा प्रथम प्रत्यर्थी के समक्ष आवश्यक अग्रिम कार्यवाही के लिए उसके किसी भी पूर्वाधिकारी द्वारा दांडिक सदोषता का अवलंब लिए बिना निर्दिष्ट किया गया । प्रवेश के 83 अन्य बिलों के अन्तर्गत इसी प्रकार के माल के आयात के संबंध में, जिनका अन्वेषण द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक के अन्तर्गत उसी पत्तन से उसी आयातक को सम्मिलित करते हुए किया गया, और द्वितीय प्रत्यर्थी ने उसी अन्वेषण से समान परिस्थितियों के अन्तर्गत उत्पन्न होते हुए, अन्य अधिकारियों के विरुद्ध अभियोजन न चलाए जाने के विकल्प को चुना, यद्यपि 6 प्रथम इत्तिला रिपोर्टें रजिस्ट्रीकृत हुई थीं । द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा उसको स्पष्टतया विनिर्दिष्ट किए बिना अंगीकृत किए

जाने के लिए तात्पर्यित वर्गीकरण का राजस्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता और यदि राजस्व पर कोई प्रभाव पड़ता है, तो वो मात्र माल की गलत घोषणा के कारण पड़ता है जिसको अभिनिश्चित करना याची को समनुदेशित भूमिका और शक्तियों के परिक्षेत्र के परे है । याची के अनुसार शुल्क का संग्रहण उच्चतम दर पर किया गया था और उसने उस छूट को प्रदान किए जाने से इनकार कर दिया था जिसका दावा आयातक द्वारा अधिसूचना के अन्तर्गत किया गया था, अतः शुल्क को तीन लाख रुपए तक बढ़ा दिया गया था । सीमाशुल्क अधिनियम और उसके अन्तर्गत विरचित नियमों के अधीन विहित प्रक्रिया के अन्तर्गत याची माल का भौतिक रूप से परीक्षण करने के प्रयोजनार्थ न तो प्राधिकृत है और न ही उसके समक्ष ऐसा करने का कोई अवसर था । केवल सीमाशुल्क परीक्षण शेड अधिकारी माल का परीक्षण कर सकते हैं और इसलिए यह उनका कर्तव्य है कि वे प्रवेश के बिल को निर्धारण अधिकारी के समक्ष वापस भेजें, यदि घोषित किया गया माल घोषित विवरण से भिन्न पाया जाता है । याची के अनुसार, द्वितीय प्रत्यर्थी की शिकायत को सपाट रूप से पढ़े जाने से ही यह प्रतीत होता है कि इसमें कोई सार नहीं है, चूंकि राजस्व की अभिकथित हानि का आरोप उस पर किसी भी आधार पर नहीं लगाया जा सकता । द्वितीय प्रत्यर्थी ने प्रथम प्रत्यर्थी से तारीख 14 मई, 2013 को याची के विरुद्ध विधि के न्यायालय में अभियोजन के प्रयोजनार्थ अग्रसर होने के लिए मंजूरी मांगी । प्रथम प्रत्यर्थी ने सक्षम अनुशासनिक/मंजूरकर्ता प्राधिकारी होने के कारण विवाद्यक पर विस्तारपूर्वक विचार किया और अन्वेषण से संबंधित कतिपय दस्तावेजों को द्वितीय प्रत्यर्थी से तलब करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा कोई मामला नहीं पाया गया है और विधि के न्यायालय में याची के अभियोजन की कोई आवश्यकता नहीं है । प्रथम प्रत्यर्थी ने सक्षम अनुशासनिक/मंजूरकर्ता प्राधिकारी होने के नाते अभिलेखों की विस्तारपूर्वक और तर्कसंगत संवीक्षा की और तारीख 13 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा द्वितीय प्रत्यर्थी को विनिर्दिष्ट रूप से यह अभिकथित करते हुए मंजूरी प्रदान करने से इनकार कर दिया कि उन्होंने भेजे गए दस्तावेजों और कथनों का परिशीलन कर लिया है । प्रथम प्रत्यर्थी ने द्वितीय प्रत्यर्थी के अभियोजन की मंजूरी से इनकार करते हुए और सतर्कता निर्देशिका की अपेक्षाओं को उद्धृत करते हुए मामले को नई दिल्ली स्थित केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड के सतर्कता महानिदेशक को आगे की कार्यवाही के लिए भेज दिया । प्रथम

प्रत्यर्थी ने सक्षम अनुशासनिक/मंजूरकर्ता प्राधिकारी होने के नाते सतर्कता महानिदेशक को विस्तारपूर्वक न्यायोचित्य भी तारीख 13 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा भेजा जिसके द्वारा इस मामले को याची के अभियोजन की मंजूरी प्रदान किए जाने के लिए एक अनुचित मामला बताया गया । याची के अनुसार, केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने सक्षम अनुशासनिक/मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी की रिपोर्ट का अवलंब लिए बिना तारीख 30 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा अभियोजन आरम्भ किए जाने की सलाह दे दी । जब मामला प्रथम प्रत्यर्थी के समक्ष विचाराणार्थ लम्बित था, तभी तारीख 25 अक्तूबर, 2013 के पत्र द्वारा केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड के सतर्कता महानिदेशक ने याची के विरुद्ध प्रदान की गई मंजूरी की स्थिति जानने की ईप्सा की ताकि मुख्य सतर्कता आयोग द्वारा दी गई सलाह का अनुपालन सुनिश्चित किया जा सके । प्रथम प्रत्यर्थी ने उक्त पत्र की प्राप्ति के तुरन्त पश्चात् मुख्य सतर्कता आयोग की सलाह को निर्दिष्ट करते हुए तारीख 31 अक्तूबर, 2013 को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन मंजूरी प्रदान कर दी, यद्यपि उन्होंने पहले अभियोजन की मंजूरी प्रदान करने से इनकार कर दिया था । दांडिक मामला चेन्नई के सप्तम् अपर नगर सिविल न्यायालय के समक्ष लम्बित है जो 2014 का सिविल मामला संख्या 1 है और इस मामले में याची को आवेदक संख्या 2 के रूप में संख्यांकित किया गया है । प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा पारित मंजूरी आदेश केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की शब्दशः रिपोर्ट है जिसका उसने स्वयं अनदेखा किया और इसके अतिरिक्त, इस प्रक्रिया में आयातित माल और साथ ही निर्धारण अधिकारी के कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों के निर्धारण में अन्तर्वलित सीमाशुल्क प्रक्रिया का विवरण देते हुए उसको बिन्दुवार अस्वीकृत कर दिया । याची ने केन्द्रीय सतर्कता आयोग की पहल पर इस मंजूरी आदेश से व्यथित होकर पहले गुणागुण पर मामले पर विचार करने से इनकार किया किन्तु तत्पश्चात् उपरोक्त रिट याचिका फाइल की । रिट याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और पक्षों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा किए गए निवेदनों और उन निर्णयों, जिनका अवलंब पक्षों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा लिया गया, पर सावधानीपूर्वक विचारोपरान्त न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि चेन्नई स्थित राजस्व खुफिया निदेशालय द्वारा एक अन्य प्रवेश के बिल के अधीन एक अन्य आयातक के संबंध में आरम्भ किए गए अन्वेषण के आधार पर बड़े स्तर पर तस्करी और

धोखाधड़ी करके तैयार किए गए बिलों का पता चला था । इस अभियान के दौरान याची द्वारा तैयार किया गया एक बिल भी अन्वेषण में सम्मिलित किया गया था । द्वितीय प्रत्यर्थी ने दावा किया कि दांडिक षड्यंत्र किया गया है चूंकि केवल भीतरी उपकरणों की बजाय सम्पूर्ण एयरकंडीशनरों का आयात किया गया था । याची ने आयातित माल का निर्धारण किया है और उसको इलैक्ट्रोनिक माध्यम से भीतरी उपकरण घोषित किया है । याची ने पूर्ववर्ती आयातों के अभिलिखित सीमाशुल्क आंकड़ों के आधार पर शुल्क अधिरोपित किया है और अधिसूचना के अधीन लाभों, जिनका दावा आयातक द्वारा किया गया, को प्रदान करने से इनकार कर दिया है । याची ने प्रक्रिया और नियमों के अनुसार, "आरोप मुक्त" का आदेश प्रदान किए जाने के पूर्व सीमाशुल्क परीक्षण अधिकारियों द्वारा माल की बेतरतीब जांच का आदेश दिया है । याची के इस आदेश का अनुमोदन उसके तत्कालिक वरिष्ठ अधिकारी द्वारा किया गया जो निर्धारण के प्रयोजनार्थ सीमाशुल्क विभाग का उचित अधिकारी है । तथापि, परीक्षण अधिकारी माल का परीक्षण करने में विफल रहे और उन्होंने माल को यह अभिलिखित करते हुए जाने दिया कि वास्तव में आयात किया गया माल सम्पूर्ण एयरकंडिशनर है, न कि भीतरी उपकरण, जैसी कि घोषणा की गई है । द्वितीय प्रत्यर्थी ने प्रथम प्रत्यर्थी के समक्ष तारीख 13 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा अभियोजन की मंजूरी की ईप्सा की और सक्षम कानूनी प्राधिकारी द्वारा अभियोजन के लिए मंजूरी को अनपेक्षित अभिनिर्धारित किया । सक्षम कानूनी प्राधिकारी ने सद्भाव में सीमाशुल्क के उन्मोचन के प्रयोजनार्थ सीमाशुल्क अधिनियम की धारा 151 के अधीन याची को संरक्षण प्रदान किए जाने की बाबत भी अपना आशय व्यक्त किया । सक्षम प्राधिकारी के दृष्टिकोण को द्वितीय प्रत्यर्थी को तारीख 13 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा संसूचित कर दिया गया था । उन्होंने यह अभिनिर्धारित करने के पश्चात् कि मंजूरी के लिए कोई मामला नहीं बनता है, अपनी रिपोर्ट केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड के मुख्य सतर्कता अधिकारी को भेज दी थी । सक्षम प्राधिकारी की तारीख 13 अगस्त, 2013 की रिपोर्ट, जिसके द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि अभियोजन अपेक्षित नहीं है, तारीख 14 अगस्त, 2013 को केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड को भेज दी गई थी । तथापि, मुख्य सतर्कता अधिकारी ने केन्द्रीय सतर्कता आयोग को रिपोर्ट भेजे जाने की तारीख से एक दिन पूर्व ही अपनी रिपोर्ट तैयार कर ली थी । अन्य शब्दों में, मुख्य सतर्कता अधिकारी की रिपोर्ट तारीख 13 अगस्त, 2013 को ही हस्ताक्षरित हो गई थी, जबकि सक्षम प्राधिकारी की रिपोर्ट मुख्य

सतर्कता अधिकारी को तारीख 14 अगस्त, 2013 को भेजी गई थी । यह मुख्य सतर्कता अधिकारी की रिपोर्ट से स्पष्ट है जिसको याची द्वारा फाइल किए गए टंकित कागजातों के समुच्चय में पृष्ठ 95 के रूप में संलग्न किया गया है । मुख्य सतर्कता अधिकारी ने सक्षम प्राधिकारी की रिपोर्ट प्राप्त होने के पूर्व ही अपनी रिपोर्ट तैयार कर ली थी । जबकि दूसरी ओर, केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान किए जाने की सलाह दे दी थी और उच्चतर प्राधिकारी की सलाह को ध्यान में रखते हुए उसी सक्षम कानूनी प्राधिकारी ने स्वयं द्वारा निकाले गए किसी भी निष्कर्ष का खंडन किए बिना और इस विवाद्यक पर कोई नई अन्वेषणात्मक सामग्री संगृहीत किए बिना मंजूरी प्रदान कर दी । इस न्यायालय के संज्ञान में यह बात लाई गई है कि याची के विरुद्ध आरम्भ की गई अनुशासनिक कार्यवाही के परिणामस्वरूप तारीख 8 जून, 2017 को अंतिम आदेश पारित किया गया जिसको सक्षम कानूनी प्राधिकारी द्वारा याची के विरुद्ध आरोपों को बन्द करते हुए पारित किया गया था । जहां तक विद्वान् अपर महासालिसीटर की इस दलील का संबंध है कि मंजूरी नई सामग्री के आधार पर प्रदान की गई थी, अनुसंधान प्रबंध प्रणाली अनुदेशों के स्वरूप में नई सामग्री को इस कारणवश "नई सामग्री" के रूप में विचारित नहीं किया जा सकता कि उक्त अनुदेश सक्षम अनुशासनिक प्राधिकारी को पहले से ज्ञात थे और उसने तारीख 13 अगस्त, 2013 को अभियोजन की मंजूरी प्रदान करने से इनकार करते समय उन पर विचार भी किया था । तारीख 13 अगस्त, 2013 को अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार करते हुए अनुशासनिक प्राधिकारी ने अनुसंधान प्रबंध प्रणाली अनुदेशों, जो निर्धारण के लिए परामर्शी मार्गदर्शक सिद्धांत हैं, के बारे में चर्चा भी की थी । अनुसंधान प्रबंध प्रणाली अनुदेशों को सक्षम अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पूर्व में लिए गए विनिश्चय को पलटने के प्रयोजनार्थ नई सामग्री के रूप में विचारित नहीं किया जा सकता । अनुशासनिक प्राधिकारी ने पहले अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान करने से इनकार करते समय ही सी. बी. डी. और एम. आर. पी. पर तारीख 13 अगस्त, 2013 को पारित अपने आदेश में विचार कर लिया था । इसलिए, मंजूरी आदेश में निर्दिष्ट अतिरिक्त आयात शुल्क और अधिकतम फुटकर मूल्य को पूर्ववर्ती आदेश को पलटे जाने के प्रयोजनार्थ नई सामग्री नहीं माना जा सकता । जैसा कि याची की ओर से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री वी. टी. गोपालन् द्वारा न्यायतः दलील दी गई है, याची मंजूरी आदेश को गुणागुण पर चुनौती नहीं दे रहा है और उसने रिट याचिका के माध्यम से जिस बात को चुनौती

दी है वह सक्षम प्राधिकारी द्वारा मुख्य सतर्कता आयोग के बाह्य दबाव के कारण अपने ही आदेश का पुनर्विलोकन किए जाने की कार्यवाही है जो किसी नई सामग्री पर आधारित नहीं है जिसको अन्वेषण अभिकरण द्वारा बाद में खोजा गया हो । यह विधितः स्थिरीकृत सिद्धांत है कि पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग किया जाना तभी संभव होता है जब पूर्ववर्ती दृष्टिकोण के पुनर्विलोकन के प्रयोजनार्थ प्राधिकारी को समर्थ बनाने वाला कोई अभिव्यक्त उपबंध विद्यमान हो । यह भी समान रूप से विधि का स्थिरीकृत सिद्धांत है कि जब एक बार मंजूरी प्रदान करने वाला प्राधिकारी कतिपय सामग्री के आधार पर अभियोजित किए जाने की मंजूरी प्रदान किए जाने के संबंध में मंजूरी प्रदान न करने का निर्णय लेता है, तो निश्चित रूप से मंजूरी प्रदान करने वाला वही प्राधिकारी समान सामग्री के आधार पर अपने विचार को परिवर्तित नहीं कर सकता । अनेक विनिश्चयों में यह अभिनिर्धारित किया जा चुका है कि मंजूरी प्रदान करने का अधिकार रखने वाले प्राधिकारी को मामले के तथ्यों, संगृहीत साक्ष्य और अन्य आनुषंगिक तथ्यों को मंजूरी प्रदान करने के पूर्व ध्यान में रखते हुए, अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए । मंजूरी प्रदान किया जाना मात्र एक उदार औपचारिकता नहीं है बल्कि यह एक पवित्र कार्य है जो परेशान करने वाले अभियोजनों के विरुद्ध सरकारी सेवकों के संरक्षण के आवरण को हटा देता है और इसलिए, इसके पहले कि लोक सेवकों के विरुद्ध किसी अभियोजन की कार्यवाही को आरम्भ किया जाए, पूर्वोक्त अपेक्षाओं का कड़ाईपूर्वक पालन किया जाना चाहिए । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी का विवेक किसी दबाव के अन्तर्गत नहीं होना चाहिए और न ही किसी बाह्य शक्ति को विनिश्चय लेने की प्रक्रिया में उसके विरुद्ध किसी भी प्रकार से कार्यरत होना चाहिए । चूंकि मंजूरी प्रदान किए जाने या प्रदान न किए जाने का विवेकाधिकार आत्यंतिक रूप से मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी में निहित होता है, यह दृश्यमान होना चाहिए कि उसका विवेकाधिकार किसी बाह्य विचार द्वारा प्रभावित नहीं हुआ है । अतः जबकि वर्तमान मामले के तथ्यों के संबंध में विधि स्थिरीकृत है, समान सामग्री के आधार पर प्राधिकारी द्वारा प्रदान की गई आक्षेपित मंजूरी, जो प्राधिकारी के समक्ष पूर्ववर्ती अवसर पर भी उपलब्ध थी जब मंजूरी प्रदान करने से इनकार किया गया, को मान्य नहीं ठहराया जा सकता । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी ने मंजूरी प्रदान करने से इनकार करने के द्वारा पहले उदार दृष्टिकोण अपनाया किन्तु अब उसने बिना किसी नई सामग्री के अपने विचार को बदल दिया है और मंजूरी प्रदान कर दी है, जिसकी अनुज्ञा

प्रदान नहीं की जा सकती । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के लिए यह अनुज्ञेय नहीं है कि वह समान सामग्री के आधार पर मामले का पुनर्विलोकन करे या उस पर पुनर्विचार करे । ऐसा इसलिए है क्योंकि पुनर्विलोकन की अनिर्बंधित शक्ति ऐसे मामलों को अंतिमता प्रदान नहीं कर सकती और सरकार में परिवर्तन हो जाने या मंजूरी प्रदान करने की शक्ति का प्रयोग करने वाले व्यक्ति के परिवर्तित हो जाने पर उसी प्राधिकारी द्वारा मामले पर उसी को ज्ञात कारणोंवश पुनर्विचार किया जा सकता है और कोई भिन्न आदेश पारित किया जा सकता है । अतः समान सामग्री के आधार पर व्यक्त किया गया विचार परिवर्तित होता रह सकता है और इस प्रकार की कानूनी कार्यवाही का कभी अंत नहीं होगा । अतः समान सामग्री प्रदान के आधार पर दी जा चुकी मंजूरी से इनकार किया जाना पूर्ववर्ती आदेश के पुनर्विलोकन या उस पर पुनर्विचार का आधार नहीं हो सकता । (पैरा 22 से 27)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2017]	(2017) 1 एस. सी. सी. 69 : **विवेक बत्रा** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	9
[2012]	सी. डी. जे. 2012 एम. एच. सी. 1433 : **एम. एस. विजयकुमार और एक अन्य** बनाम **अध्यक्ष और प्रबन्ध निदेशक, इंडियन ओवरसीज बैंक, चेन्नई और अन्य** ;	7
[2012]	2012 (2) एम. डब्ल्यू. एन. (क्रिमिनल) 141 : **रवि कुमार और एक अन्य** बनाम **राज्य जिसका प्रतिनिधित्व उप-पुलिस अधीक्षक, एस. पी. ई./ सी. बी. आई./ए. सी. बी./चेन्नई** ;	19
[2010]	(2010) 4 एस. सी. सी. 192 : **जसबीर सिंह छाबड़ा** बनाम **पंजाब राज्य** ;	11
[2010]	(2010) 14 एस. सी. सी. 527 : **हिमाचल प्रदेश राज्य** बनाम **निशांत सरीन** ;	6, 18
[2009]	(2009) 1 एस. सी. सी. 180 : **सेठी आटो सर्विस स्टेशन** बनाम **दिल्ली विकास प्राधिकरण** ;	12

[2009] (2009) 17 एस. सी. सी. 92 :
पंजाब राज्य और एक अन्य बनाम **मोहम्मद इकबाल भट्टी** ; 17

[1995] 1995-1-एल. डब्ल्यू. 525 :
डा. जे. जयललिता बनाम **डा. एम. चेन्नारेड्डी, तमिलनाडु के राज्यपाल, मद्रास और अन्य** ; 18

[1962] [1962] (सप्ली.) 3 एस. सी. आर. 714 = ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 395 :
बछित्तर सिंह बनाम **पंजाब राज्य** । 10

आरम्भिक रिट अधिकारिता : 2016 की रिट याचिका संख्या 210 (और साथ में 2016 की प्रकीर्ण रिट याचिका संख्या 113 और 114).

संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री वी. टी. गोपालन् (वरिष्ठ काउंसेल श्रीनिवास मोहन की ओर से)

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री जी. राजगोपालन्, (अपर महासालिसिटर) की ओर से स्थायी काउंसेल एस. आर. सुन्दर

आदेश

याची ने प्रस्तुत रिट याचिका उत्प्रेषण कि रिट जारी किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत की है, जिसके द्वारा प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा तारीख 31 अक्तूबर, 2013 को पारित मंजूरी आदेश से संबंधित अभिलेखों को तलब किए जाने और उक्त आदेश को अभिखंडित किए जाने की अपेक्षा की गई है ।

2. याचिका के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं :–

"(i) याची के अनुसार, वह सीमाशुल्क विभाग में वर्ष 1992 से कार्यरत है और वर्तमान में सीमाशुल्क विभाग में निर्धारण अधिकारी का पद धारक है । याची के अनुसार निर्धारण अधिकारी, जो मूल्य निर्धारण का भारसाधक होता है, के प्रत्येक कार्य का निर्धारण और समर्थन उसके तत्कालिक वरिष्ठ अधिकारी अर्थात् सीमाशुल्क विभाग के सहायक आयुक्त द्वारा किया जाना चाहिए । यदि निर्धारण

अधिकारी निर्धारण के किसी पहलू के संबंध में किसी स्पष्टीकरण की ईप्सा करता है, तो इस प्रकार के स्पष्टीकरण की ईप्सा के लिए सहायक आयुक्त की अनुज्ञा प्राप्त किया जाना अनिवार्य होता है ।

(ii) निर्धारण अधिकारी का कार्य निस्संदेह रूप से उसके तत्कालिक वरिष्ठ अधिकारी अर्थात् सहायक आयुक्त के पूर्ण नियंत्रण और संवीक्षा के अधीन होता है और निर्धारण का कार्य केवल तब पूर्ण माना जाता है जब माल के प्रवेश का बिल सहायक आयुक्त के कम्प्यूटर की स्क्रीन से हट जाता है । सम्पूर्ण प्रक्रिया सीमाशुल्क निदेशिका में समाविष्ट अनुदेशों के अनुसार आनलाइन स्क्रीन निर्धारण पर आधारित होती है, निर्धारण के प्रक्रम पर कोई मूल दस्तावेज स्वीकार नहीं किया जाता और सभी दस्तावेजों को परीक्षण शेड अधिकारियों द्वारा परीक्षण के समय पर जमा कराया जाता है और उनका सत्यापन किया जाता है । अतः, निर्धारण अधिकारी अपने कर्तव्यों का निर्वहन केवल कम्प्यूटर पर शपथपूर्वक दी गई घोषणा के आधार पर करता है और उससे किसी ऐसे दस्तावेज की सत्यापन की अपेक्षा नहीं की जाती जिसका सत्यापन सीमाशुल्क किराया स्टेशन में तैनात पदनामित सीमाशुल्क अधिकारियों द्वारा माल के परीक्षण के समय किया जाना होता है अर्थात् भौतिक माल के ।

(iii) निर्धारण अधिकारी का मूल कार्य छूट के लाभों, जिनका दावा आयातकों द्वारा विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत किया जाता है, के टिप्पण पर आधारित आयातित माल पर संदेय शुल्क को विनिर्धारित करना होता है । उससे यह भी अपेक्षा की जाती है कि वह किसी निर्बंधन, अनुज्ञप्ति, निषेध इत्यादि के दृष्टिकोण से आयात नीति के अनुपालन का सत्यापन करे । सम्पूर्ण कार्य इलैक्ट्रोनिक डाटा इंटरचेंज प्रणाली की सहायता से किया जाता है और जलपोत पर लदे हुए माल की घोषणा को इलैक्ट्रोनिक माध्यम से अन्तरित किया जाता है । समस्त संगणना प्रणाली द्वारा स्वयमेव किए जाते हैं, जो अधिसूचित विदेशी एक्सचेंजों की दरों पर भी लागू होते हैं । यह मूलतः आयात नीति को लागू करने और घोषित माल पर शुल्क के संगणना का कार्य है और परीक्षण शेड अधिकारियों द्वारा घोषित विवरण के सत्यापन के अधीन है । निर्धारण के पश्चात् प्रविष्टि के बिल की एक प्रति इलैक्ट्रोनिक डाटा इंटरचेंज सेवा केन्द्र में छप जाती है ।

(iv) याची के अनुसार वह वर्ष 2011 में आयातित माल के

निर्धारण के प्रयोजनार्थ भारसाधक निर्धारण अधिकारी था और आयात परेक्षितों में से एक आयात परेक्षित जिसका कि उसने मूल्यांकन किया था, तारीख 2 सितम्बर, 2011 के प्रवेश के बिल के अन्तर्गत था, जिसको आयातक द्वारा इलैक्ट्रोनिक माध्यम से फाइल किया गया था और माल के घोषित विवरण के आधार पर यह पूर्ण रूप से स्पष्ट हो गया था कि माल का ब्रांड नाम, माडल संख्या और विनिर्दिष्ट बातें, जो आयातित वस्तु में समाविष्ट थीं अर्थात् एयरकंडिशनरों के भीतरी उपकरण थे, जो बात किसी भी प्रकार से समझ में आने योग्य नहीं थी और जिनका आयात चेन्नई सहित सम्पूर्ण देश में नियमित रूप से वर्षों से किया जा रहा था । उसके द्वारा की गई घोषणा के आधार पर माल के सम्पूर्ण विवरण को समझे जाने में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं थी, अतः निराकरण के प्रयोजनार्थ आयातक से स्पष्टीकरण की ईप्सा किए जाने की आवश्यकता उत्पन्न हुई । वे विवरण जिनकी सम्यक् रूप से पुष्टि आयातक द्वारा की गई, को प्रक्रिया के अनुसार इलैक्ट्रोनिक माध्यम से अन्तरित कर दिया गया और जो निर्धारण किया गया, वह भी इलैक्ट्रोनिक डाटा इंटरचेंज प्रणाली के अन्तर्गत था । तत्पश्चात् एक अन्य प्रवेश के बिल के अन्तर्गत एक अन्य आयात के संबंध में चेन्नई के सतर्कता निदेशालय द्वारा आरम्भ किए गए अन्वेषण के आधार पर एयरकंडिशनरों और उसके कलपुर्जों के बहाने से सोनी टेलीविजन के आयात की गलत घोषणा को अन्तर्वलित करने वाली अभिकथित तस्करी के व्यापक जाल का खुलासा आयातक के परिसर से एक पेनड्राइव की बरामदी के साथ हुआ, जिसमें चौरासी नौपरिवहनों द्वारा किए गए आयातों के आंकड़े समाविष्ट थे । चौरासी आयात नौपरिवहनों के संबंध में कारण बताओ नोटिस का न्यायनिर्णयन न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा किया जाना शेष है ।

(v) तत्पश्चात् द्वितीय प्रत्यर्थी ने अभिकथित किया कि प्रवेश के बिल, जिनके माध्यम से याची द्वारा जो आयात किया गया था, वह एयरकंडिशनर थे, न कि एयरकंडिशनरों की कमरों के भीतर प्रयोग किए जाने वाले उपकरण, जैसा कि आयातक द्वारा निदेशाधीन प्रवेश के बिल में घोषणा की गई है । उपरोक्त एकल आयात, जिसका निर्धारण याची द्वारा किया गया, पूर्णतः आयातक द्वारा अभिपुष्ट व्यापक घोषणा पर आधारित प्रक्रिया के अनुसार था जो राजस्व खुफिया निदेशालय द्वारा अन्वेषण आरम्भ किए जाने के अत्यधिक पूर्व

का था । द्वितीय प्रत्यर्थी को यह भी ज्ञात था कि यह प्रथा चल रही है और इसी प्रथा का पालन करते हुए तिरासी अन्य आयात किए जा चुके हैं और द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा इस संबंध में छह प्रथम इत्तिला रिपोर्टें ऊपर वर्णित नौपरिवहन द्वारा चौरासी आयात का उल्लेख करते हुए फाइल की गई थीं, जिनको राजस्व खुफिया निदेशालय द्वारा अपने कारण बताओ नोटिस में निर्दिष्ट किया गया ।

(vi) याची के अनुसार, उसने सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक 84151090 के अन्तर्गत प्रविष्टि के उपरोक्त बिल के अधीन घोषित माल का निर्धारण किया था । द्वितीय प्रत्यर्थी ने दावा किया है कि केवल एयरकंडीशनर सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक 84151090 के अन्तर्गत आते हैं और उसने यह अभिकथित किया है कि यह गलत कार्य का भाग था और याची को स्पष्टीकरण मांगना चाहिए था । शिकायत इस मूल आधार पर अग्रसर हुई कि सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक 84151090 केवल एयरकंडिशनरों के बाबत है और इस शीर्षक के अन्तर्गत भीतरी उपकरण सम्मिलित नहीं होंगे । तथापि, सीमाशुल्क टैरिफ अधिनियम की सुसंगत अनुसूची के अनुसार सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक 84151090 में इस प्रविष्टि को 'अन्य' के रूप में निर्दिष्ट किया गया है, न कि किसी विनिर्दिष्ट माल के रूप में । तथापि, द्वितीय प्रत्यर्थी ने उस प्रविष्टि को निर्दिष्ट नहीं किया है जिसमें घोषित माल को वर्गीकृत किया जाना चाहिए । द्वितीय प्रत्यर्थी ने दावा किया है कि याची को संदेह पर विचार करना चाहिए था और शंका को उठाना चाहिए था और उसके विरुद्ध अभियोजन की कार्यवाही इसी एकमात्र आधार पर आरम्भ की गई है । चूंकि याची घोषित विवरण की संपूर्णता के बारे में सहमत था, जिसको अभिपुष्टि के अधीन घोषित किया गया था और जो अपरिवर्तनीय था, अतः उसके समक्ष अभिपुष्ट घोषणा की सत्यतता या परिशुद्धता के बारे में शंका करने का कोई कारण नहीं था और इसलिए किसी भी प्रकार की शंका को उठाए जाने के द्वारा किसी स्पष्टीकरण की ईप्सा किए जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी ।

(vii) याची के अनुसार, वास्तविकता यह है कि एक ही प्रकार के आयात के लिए एक ही प्रकार के हजारों प्रवेश के बिल आयातकों और अन्य, दोनों के द्वारा उपबंधित किए गए हैं, जिनको विभिन्न प्राधिकृत प्राधिकारियों द्वारा सम्पूर्ण भारत में एक ही प्रकार से और

एक ही सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक के अन्तर्गत स्वीकार किया जाता है और उन्हीं के आधार पर निर्धारण किया जाता है । राजस्व खुफिया निदेशालय द्वारा बरामद की गई पेनड्राइव के आधार पर याची द्वारा अंगीकृत वर्गीकरण के निर्वचन के एकमात्र कारण को उद्धृत करते हुए प्रत्यर्थी ने यह दृष्टिकोण अपनाया कि निर्दिष्ट एकल आयात में दांडिक षड्यंत्र था, जिसका निर्धारण उसके द्वारा किया गया था । तथापि, बाद में इस बात को महसूस करते हुए कि यह माल के वर्गीकरण का शुद्धतः निर्वचनात्मक और अत्यधिक तकनीकी मामला है, याचियों के पूर्वाधिकारियों द्वारा किए गए वर्गीकरण के आधार पर संदेह की समान कमी (जिसका अन्वेषण पांच विभिन्न प्रथम इत्तिला रिपोर्टों के अन्तर्गत किया गया) द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा प्रथम प्रत्यर्थी के समक्ष आवश्यक अग्रिम कार्यवाही के लिए उसके किसी भी पूर्वाधिकारी द्वारा दांडिक सदोषता का अवलंब लिए बिना निर्दिष्ट किया गया । प्रवेश के 83 अन्य बिलों के अन्तर्गत इसी प्रकार के माल के आयात के संबंध में, जिनका अन्वेषण द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक के अन्तर्गत उसी पत्तन से उसी आयातक को सम्मिलित करते हुए किया गया, और द्वितीय प्रत्यर्थी ने उसी अन्वेषण से समान परिस्थितियों के अन्तर्गत उत्पन्न होते हुए, अन्य अधिकारियों के विरुद्ध अभियोजन न चलाए जाने के विकल्प को चुना, यद्यपि 6 प्रथम इत्तिला रिपोर्टें रजिस्ट्रीकृत हुई थीं । द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा उसको स्पष्टतया विनिर्दिष्ट किए बिना अंगीकृत किए जाने के लिए तात्पर्यित वर्गीकरण का राजस्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता और यदि राजस्व पर कोई प्रभाव पड़ता है, तो वो मात्र माल की गलत घोषणा के कारण पड़ता है जिसको अभिनिश्चित करना याची को समनुदेशित भूमिका और शक्तियों के परिक्षेत्र के परे है ।

(viii) याची के अनुसार शुल्क का संग्रहण उच्चतम दर पर किया गया था और उसने उस छूट को प्रदान किए जाने से इनकार कर दिया था जिसका दावा आयातक द्वारा अधिसूचना के अन्तर्गत किया गया था, अतः शुल्क को तीन लाख रुपए तक बढ़ा दिया गया था । सीमाशुल्क अधिनियम और उसके अन्तर्गत विरचित नियमों के अधीन विहित प्रक्रिया के अन्तर्गत याची माल का भौतिक रूप से परीक्षण करने के प्रयोजनार्थ न तो प्राधिकृत है और न ही उसके समक्ष ऐसा करने का कोई अवसर था । केवल सीमाशुल्क परीक्षण

शेड अधिकारी माल का परीक्षण कर सकते हैं और इसलिए यह उनका कर्तव्य है कि वे प्रवेश के बिल को निर्धारण अधिकारी के समक्ष वापस भेजें, यदि घोषित किया गया माल घोषित विवरण से भिन्न पाया जाता है ।

(ix) याची के अनुसार, द्वितीय प्रत्यर्थी की शिकायत को सपाट रूप से पढ़े जाने से ही यह प्रतीत होता है कि इसमें कोई सार नहीं है, चूंकि राजस्व की अभिकथित हानि का आरोप उस पर किसी भी आधार पर नहीं लगाया जा सकता । द्वितीय प्रत्यर्थी ने प्रथम प्रत्यर्थी से तारीख 14 मई, 2013 को याची के विरुद्ध विधि के न्यायालय में अभियोजन के प्रयोजनार्थ अग्रसर होने के लिए मंजूरी मांगी थी । प्रथम प्रत्यर्थी ने सक्षम अनुशासनिक/मंजूरकर्ता प्राधिकारी होने के कारण विवाद्यक पर विस्तारपूर्वक विचार किया और अन्वेषण से संबंधित कतिपय दस्तावेजों को द्वितीय प्रत्यर्थी से तलब करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा कोई मामला नहीं पाया गया है और विधि के न्यायालय में याची के अभियोजन की कोई आवश्यकता नहीं है । प्रथम प्रत्यर्थी ने सक्षम अनुशासनिक/ मंजूरकर्ता प्राधिकारी होने के नाते अभिलेखों की विस्तारपूर्वक और तर्कसंगत संवीक्षा की और तारीख 13 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा द्वितीय प्रत्यर्थी को विनिर्दिष्ट रूप से यह अभिकथित करते हुए मंजूरी प्रदान करने से इनकार कर दिया कि उन्होंने भेजे गए दस्तावेजों और कथनों का परिशीलन कर लिया है । प्रथम प्रत्यर्थी ने द्वितीय प्रत्यर्थी के अभियोजन की मंजूरी से इनकार करते हुए और सतर्कता निर्देशिका की अपेक्षाओं को उद्धृत करते हुए मामले को नई दिल्ली स्थित केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड के सतर्कता महानिदेशक को आगे की कार्यवाही के लिए भेज दिया । प्रथम प्रत्यर्थी ने सक्षम अनुशासनिक/मंजूरकर्ता प्राधिकारी होने के नाते सतर्कता महानिदेशक को विस्तारपूर्वक न्यायोचित्य भी तारीख 13 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा भेजा जिसके द्वारा इस मामले को याची के अभियोजन की मंजूरी प्रदान किए जाने के लिए एक अनुचित मामला बताया गया ।

(x) याची के अनुसार, केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने सक्षम अनुशासनिक/मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी की रिपोर्ट का अवलंब लिए बिना तारीख 30 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा अभियोजन आरम्भ

किए जाने की सलाह दे दी । जब मामला प्रथम प्रत्यर्थी के समक्ष विचारणार्थ लम्बित था, तभी तारीख 25 अक्तूबर, 2013 के पत्र द्वारा केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड के सतर्कता महानिदेशक ने याची के विरुद्ध प्रदान की गई मंजूरी की स्थिति जानने की ईप्सा की ताकि मुख्य सतर्कता आयोग द्वारा दी गई सलाह का अनुपालन सुनिश्चित किया जा सके । प्रथम प्रत्यर्थी ने उक्त पत्र की प्राप्ति के तुरन्त पश्चात् मुख्य सतर्कता आयोग की सलाह को निर्दिष्ट करते हुए तारीख 31 अक्तूबर, 2013 को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन मंजूरी प्रदान कर दी, यद्यपि उन्होंने पहले अभियोजन की मंजूरी प्रदान करने से इनकार कर दिया था । दांडिक मामला चेन्नई के सप्तम् अपर नगर सिविल न्यायालय के समक्ष लम्बित है जो 2014 का सिविल मामला संख्या 1 है और इस मामले में याची को आवेदक संख्या 2 के रूप में संख्यांकित किया गया है । प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा पारित मंजूरी आदेश केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो की शब्दशः रिपोर्ट है जिसका उसने स्वयं अनदेखा किया और इसके अतिरिक्त, इस प्रक्रिया में आयातित माल और साथ ही निर्धारण अधिकारी के कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों के निर्धारण में अन्तर्वलित सीमाशुल्क प्रक्रिया का विवरण देते हुए उसको बिन्दुवार अस्वीकृत कर दिया । याची ने केन्द्रीय सतर्कता आयोग की पहल पर इस मंजूरी आदेश से व्यथित होकर पहले गुणागुण पर मामले पर विचार करने से इनकार किया किन्तु तत्पश्चात् उपरोक्त रिट याचिका फाइल की ।

3. प्रथम प्रत्यर्थी का संक्षेप में पक्षकथन निम्नलिखित है :–

"(i) प्रथम प्रत्यर्थी के अनुसार नई दिल्ली स्थित सीमाशुल्क और केन्द्रीय उत्पादशुल्क के सतर्कता महानिदेशक ने केन्द्रीय सतर्कता आयोग को कतिपय अतिरिक्त सूचनाओं के साथ अनुशासनिक प्राधिकार पर अपने टिप्पण भेजे जिसके आधार पर केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने तारीख 30 अगस्त, 2013 को सलाह दी जिसको नई दिल्ली स्थित केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड के मुख्य सतर्कता अधिकारी द्वारा प्राप्त किया गया । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी ने तारीख 31 अक्तूबर, 2013 को अतिरिक्त सूचनाओं का परिशीलन करने के पश्चात् मताभिव्यक्ति की कि मुख्य सतर्कता आयोग की सलाह के आधार पर भेजे गए दस्तावेजों को प्रस्तुत किए जाने के द्वारा वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि याची द्वारा चूक की गई है और प्रथमदृष्ट्या

याची के अभियोजन की मंजूरी के लिए मामला बनता है ।

(ii) टिप्पण में यह मताभिव्यक्ति की गई है कि आयातक एक व्यापारी और आपूर्तिकर्ता है, न कि विनिर्माता । उसने इस बात की घोषणा की है कि भीतरी उपकरणों के 1498 मदों का आयात किया गया । एक व्यापारी से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह केवल भीतरी उपकरणों का आयात करेगा और उसके द्वारा भीतरी उपकरणों के केवल 5 कंटेनरों का आयात किया गया है । टैरिफ अधिरोपण सीमाशुल्क टैरिफ शीर्षक 84151090 समस्त एयरकंडिशनरों पर लागू होता है जिनको एयरकंडिशनरों के हिस्सों के रूप में वर्णित किया गया है और इससे अधिकारी के विवेक में शंका उत्पन्न होना स्वाभाविक है जिसके आधार पर वह आयातक से इस बाबत प्रश्न करेगा कि केवल भीतरी उपकरणों का आयात क्यों किया गया और प्रवेश के बिल की सर्वप्रथम जांच इस बात को अभिनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ की जानी चाहिए कि क्या केवल भीतरी उपकरणों की घोषणा आयात के प्रयोजनार्थ की गई है ।

(iii) टिप्पण के पैरा 4.2 में पत्र संख्या 23/2006 को भी निर्दिष्ट किया गया है जिसमें यह अभिकथित किया गया है कि प्रवेश के बिल का निर्धारण करने वाला अधिकारी प्रत्येक लिखत को सावधानीपूर्वक पढ़ेगा और तत्पश्चात् जोखिम के बाबत निर्णय लेने के प्रयोजनार्थ विनिश्चय पर पहुंचेगा । टिप्पण के पैरा 7.1.1 में यह अभिकथित है कि अधिकारी आयातक से राजस्व केन्द्रित उपकरणों का विवरण लेने में असफल रहा । यदि बड़ी संख्या में अप्रायिक रूप से आयात किए गए भीतरी उपकरणों के बाबत यह आधारी स्पष्टीकरण मांग लिए जाते, तो इस तथ्य पर भी प्रकाश पड़ जाता कि वास्तव में जिन वस्तुओं का आयात किया गया, वे उस माल का भाग नहीं थे, जिसकी घोषणा की गई थी, बल्कि वे सम्पूर्ण एयरकंडिशनर थे जिसके परिणामस्वरूप सम्पूर्ण एयरकंडिशनर के सही वर्गीकरण को लागू किया जा सकता था और एयरकंडिशनरों के आयात के बाबत अनुज्ञप्ति की ईप्सा की जा सकती थी ।

(iv) यह मताभिव्यक्ति भी की गई है कि याची ने सरकार को 42,05,597/- रुपए की राजस्व हानि कराई । याची की ओर से की गई यह चूक प्रथमदृष्ट्या सद्भाविक प्रतीत नहीं होती, जिस कारणवश वह सीमाशुल्क अधिनियम की धारा 155 के अधीन संरक्षण

की अपेक्षा कर सके और प्रथमदृष्ट्या भारतीय दंड संहिता की धारा 420, 468 और 481 सपठित धारा 120ख सपठित 1988 के भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(2)(1)(घ) के अधीन अभियोजन चलाए जाने की मंजूरी प्रदान किए जाने का मामला बनता है ।

(v) मंजूरी प्रदान करते समय अतिरिक्त सामग्री पर भी विचार किया गया और अनुशासनिक प्राधिकारी ने स्वतंत्र रूप से अपने विवेक का प्रयोग किया जो दृश्यमान है । इन परिस्थितियों में प्रथम प्रत्यर्थी ने रिट याचिका को खारिज किए जाने की प्रार्थना की ।"

4. याची की ओर से उपस्थित वरिष्ठ विद्वान् काउंसेल श्री वी. टी. गोपालन् और प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से उपस्थित विद्वान् अपर महासालिसीटर श्री जी. राजगोपालन् को सुना ।

5. याची की ओर से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री वी. टी. गोपालन् ने निवेदन किया कि जब प्रथम बिन्दु पर मंजूरी प्रदान करने से इनकार कर दिया गया था, तो बाद में अन्वेषण अभिकरण द्वारा बिना किसी नई सामग्री को प्रस्तुत किए मात्र केन्द्रीय सतर्कता आयोग की पहल पर मंजूरी आदेश कैसे प्रदान कर दिया गया । विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल के अनुसार केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड द्वारा केन्द्रीय सतर्कता आयोग को निर्दिष्ट सामग्री, जिसको प्रत्यर्थी अब नई सामग्री कह रहा है, मात्र अनुदेश हैं जो सक्षम प्राधिकारी को पहले से ज्ञात थे और मंजूरी आदेश को अस्वीकृत करते हुए उन पर विस्तारपूर्वक चर्चा भी की गई थी । इसके अतिरिक्त, विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने निवेदन किया कि विभाग ने याची के विरुद्ध आरोपों को समाप्त कर दिया था और अभिनिर्धारित किया था कि उसने अपने कर्तव्यों का निर्वहन सद्भावपूर्वक किया था और यह आदेश उसको सीमाशुल्क अधिनियम की धारा 155 के अधीन संरक्षण प्रदान करता है जिसको मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार करने वाले आदेश में निर्दिष्ट किया गया है ।

6. विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने अपनी दलीलों के समर्थन में **हिमाचल प्रदेश राज्य** बनाम **निशांत सरीन**[1] वाले मामले में पारित निर्णय का अवलंब लिया जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने जो अभिनिर्धारित किया वह निम्नलिखित है :–

---

[1] (2010) 14 एस. सी. सी. 527.

"4. प्रमुख सचिव (स्वास्थ्य) ने उनके समक्ष प्रस्तुत सामग्री और मामले के परीक्षण के आधार पर प्रत्यर्थी को अभियोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई न्यायोचित्य नहीं पाया । तारीख 27 नवम्बर, 2007 के आदेश, जिसके द्वारा मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार किया गया था, में यह मताभिव्यक्ति की गई –

> इसलिए, मामले का पूर्ण रूप से परीक्षण किए जाने, समस्त पहलुओं पर विचारोपरान्त और सेवा अभिलेखों की संवीक्षा के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि श्री सरीन ने अपने कर्तव्यों, उत्तरदायित्वों का निष्पक्ष रूप से निर्वहन किया है । ऐसा प्रतीत होता है कि शिकायतकर्ता ने एक ऐसा मामला रजिस्ट्रीकृत करा दिया है जो परेशान करने वाला है और जिसके परिणामस्वरूप ओषधि निरीक्षक के कामकाज में अनावश्यक रूप से व्यवधान उत्पन्न हुआ है और उसका अनावश्यक रूप से उत्पीड़न हुआ है । इन बातों को ध्यान में रखते हुए ओषधि निरीक्षण श्री निशांत सरीन के विरुद्ध अभियोजन आरम्भ किए जाने का कोई न्यायोचित्य प्रतीत नहीं होता चूंकि यह मामला व्यक्तिगत दुश्मनी का मामला प्रतीत होता है ।

5. ऐसा प्रतीत होता है कि सतर्कता विभाग ने प्रमुख सचिव (स्वास्थ्य) के विरुद्ध मंजूरी प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ मामले का संज्ञान लिया चूंकि उनके विचार में प्रत्यर्थी को अभियोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ पर्याप्त साक्ष्य विद्यमान था । अतः, सक्षम प्राधिकारी ने मामले पर पुनर्विचार किया और प्रत्यर्थी को अभियोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ तारीख 15 मार्च, 2008 के आदेश द्वारा मंजूरी प्रदान कर दी । तारीख 15 मार्च, 2008 के मंजूरी आदेश में यह मताभिव्यक्ति की गई –

> मैं, सतर्कता विभाग की इस दलील से सहमत हूं कि उसके विरुद्ध दांडिक अवचार के साक्ष्य का अधिमूल्यन करते समय उसके सामान्य आचरण और व्यवहार, जैसा कि उसके वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा सूचित किया गया, को महत्व नहीं दिया जा सकता । मैंने मामले की फाइल और तथ्यों का विस्तारपूर्वक परिशीलन किया । मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि उक्त ओषधि निरीक्षण निशांत सरीन को रंगे हाथों पांच हजार रुपए की रिश्वत के साथ पकड़ा गया था । अभिलेख पर यह दर्शित

करने के लिए कुछ भी नहीं है कि यह घटना कभी घटित नहीं हुई । मामले के तथ्य इस दलील का समर्थन नहीं करते कि श्री निशांत सरीन को असत्यतापूर्वक अन्तर्वलित कर दिया गया । इन परिस्थितियों में, मेरा विचार है कि वर्तमान मामले में अभियोजन की मंजूरी प्रदान की जाए ।

.....

12. यह सत्य है कि सरकार मंजूरी प्रदान किए जाने या प्रदान किए जाने से इनकार किए जाने के मामले में कानूनी शक्ति का प्रयोग करती है और इसका यह अर्थ नहीं होगा कि जिस शक्ति का एक बार प्रयोग किया जा चुका हो, का पुनः प्रयोग नहीं किया जा सकता या पुनर्विलोकन की अभिव्यक्त शक्ति की अनुपस्थिति में या किसी भी परिस्थिति में किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर भी नहीं किया जा सकता । तथापि, पुनर्विलोकन की शक्ति अनियंत्रित या अनिर्बंधित नहीं हो सकती । हमको ऐसा प्रतीत होता है कि ठोस सिद्धांतों का पालन किया जाना चाहिए कि यदि एक बार 1988 के अधिनियम की धारा 19 या संहिता की धारा 197 के अधीन कानूनी शक्ति का प्रयोग सरकार या सक्षम प्राधिकारी द्वारा जैसा भी मामला हो, किया जाता है, तो मंजूरकर्ता प्राधिकारी के लिए यह अनुज्ञेय नहीं होगा कि वह मामले पर उसी सामग्री के आधार पर पुनर्विचार करे । ऐसा इसलिए है क्योंकि पुनर्विलोकन की अनिर्बंधित शक्ति इस सम्पूर्ण कार्यवाही को अंतिमता प्रदान नहीं कर सकती और सरकार के बदल जाने पर या उस व्यक्ति के बदल जाने पर जो मंजूरी प्रदान करने की शक्ति का प्रयोग करने के लिए प्राधिकृत है, द्वारा मंजूरी से संबंधित मामले पर किसी ऐसे प्राधिकारी द्वारा उन कारणोंवश, जो मात्र उसी को ज्ञात हों, के आधार पर पुनर्विचार किया जा सकता है और कोई भिन्न आदेश पारित किया जा सकता है । अतः, समान सामग्री के आधार पर व्यक्त किए गए विचार परिवर्तित किए जा सकते हैं और ऐसी कानूनी शक्ति के प्रयोग पर किसी प्रकार की सीमा अधिरोपित नहीं की जा सकती ।

13. हमारे विचार में समान सामग्री के आधार पर उस विचार में परिवर्तन पूर्ववर्ती आदेश, जिसके द्वारा मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार कर दिया गया, को पुनर्विलोकित किए जाने या उस पर पुनर्विचार किए जाने का आधार नहीं हो सकता । तथापि, किसी ऐसे

मामले में जहां पूर्ववर्ती आदेश के पश्चात् अन्वेषण अभिकरण द्वारा नई सामग्री संगृहीत की गई है, और मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत की गई हो और उस आधार पर मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी द्वारा मामले पर पुनर्विचार किया गया है और नई सामग्री के प्रकाश में यह विचार निर्मित किया गया है कि किसी लोक सेवक को अभियोजित किए जाने की बाबत मंजूरी प्रदान की जा सकती है तो ऐसे अनुक्रम को अंगीकृत किए जाने की राह में कोई अड़चन नहीं आ सकती ।

14. जहां तक वर्तमान मामले का संबंध है, अपीलार्थी का भी यह पक्षकथन नहीं है कि अन्वेषण अभिकरण द्वारा नई सामग्री संगृहीत की गई और मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के समक्ष मामले पर पुनर्विचारण और/या मंजूरी प्रदान करने से इनकार करने वाले पूर्ववर्ती आदेश के पुनर्विलोकन के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत की गई । वास्तविकता यह है कि तारीख 15 मार्च, 2008 के पश्चात्वर्ती आदेश के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि समान सामग्री के आधार पर मंजूरी प्रदान करने वाले अधिकारी ने अपने विचार को परिवर्तित कर दिया है और प्रत्यर्थी को अभियोजित किए जाने के लिए मंजूरी प्रदान करने वाला आदेश पारित कर दिया है जो हमारे विचार में स्पष्टतः अननुज्ञेय है ।

15. फुटनोट टिप्पण के माध्यम से हम यह मताभिव्यक्ति करते हैं कि अन्वेषण अभिकरण को तारीख 27 नवम्बर, 2007 के आदेश, जिसके द्वारा मंजूरी प्रदान करने से इनकार किया गया, के बारे में विधिसम्मत शिकायत थी; यदि ऐसा था और कोई नई सामग्री आवश्यक नहीं थी, तो इससे मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के आदेश को चुनौती दी जा सकती है, किन्तु ऐसा नहीं किया गया । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी की शक्ति का प्रयोग सतत् प्रकृति की शक्ति न होने के कारण नहीं किया जा सकता था, जब सामान सामग्री ही अभिलेख पर उपलब्ध थी ।"

7. **एम. एस. विजयकुमार और एक अन्य** बनाम **अध्यक्ष और प्रबन्ध निदेशक, इंडियन ओवरसीज बैंक, चेन्नई और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने जो अभिनिर्धारित किया वह निम्नलिखित है :–

---

[1] सी. डी. जे. 2012 एम. एच. सी. 1433.

"11. मुख्य आधार, जिन पर अपील फाइल की गई ये हैं कि –

(i) मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी को पुनर्विलोकन की कोई शक्ति प्राप्त नहीं होती, विशेष रूप से तब जब पूर्ववर्ती दोनों अवसरों पर अर्थात् तारीख 30 दिसम्बर, 2008 और 18 मई, 2009 को मंजूरी प्रदान करने वाला प्राधिकारी एक ही था, जो उसके समक्ष उपलब्ध सामग्री के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि मंजूरी प्रदान करने का कोई आधार नहीं है और आक्षेपित आदेश में सामग्री, जिसका अवलंब लिया गया है, के संबंध में कुछ भी नया अभिकथित नहीं किया गया है ।

(ii) आक्षेपित मंजूरी आदेश केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो और केन्द्रीय सतर्कता आयोग की पहल पर जारी किया गया है जिन्होंने मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी को अपने विचारों से अवगत कराया और उनके असंगत विचारों के कारण बैंक को मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी होने के कारण अपने पूर्ववर्ती दृष्टिकोण को बदलना पड़ा और इसलिए इसको नई सामग्री के आधार पर स्वतंत्र विचार नहीं कहा जा सकता ।

(iii) यहां तक कि आक्षेपित आदेश में भी मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी ने तारीख 30 दिसम्बर, 2008 और तारीख 18 मई, 2009 को अभियोजन की मंजूरी प्रदान करने के प्रयोजनार्थ आदेशों को पारित करने से इनकार करने वाले पूर्ववर्ती आदेशों के बारे में कुछ भी अभिकथित न करने के विकल्प को नहीं चुना और इससे मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी द्वारा अपने विवेक का प्रयोग न किया जाना दर्शित होता है ।

(iv) मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी की जानकारी में नई सामग्री, जो तारीख 30 दिसम्बर, 2008 और तारीख 18 मई, 2009 के पहले उपलब्ध नहीं थी, लाए जाने के बारे में कुछ भी अभिकथित नहीं किया गया है ।

(v) विद्वान् न्यायाधीश द्वारा तारीख 3 सितम्बर, 2009 के पत्र का अवलंब लिया जाना और इस पत्र, जो अंतर विभागीय प्रकृति का पत्र है, के आधार पर विद्वान् न्यायाधीश द्वारा

विनिश्चय पर पहुंचना, और जिस पत्र के बारे में अपीलार्थी को प्रकटीकरण नहीं किया गया, अपीलार्थी को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार न्याय प्रदान किए जाने से इनकार करना है और यह अनुचित भी है ।

.....

26. इसलिए, विधितः यह सुस्थापित हो चुका है कि पुनर्विलोकन की शक्ति केवल तब संभव है, जब प्राधिकारी को अपने पूर्ववर्ती दृष्टिकोण का पुनर्विलोकन करने के लिए समर्थ बनाने वाला कोई अभिव्यक्त उपबंध हो । साथ ही यह भी स्थिरीकृत हो चुका है कि जब अभियोजन की मंजूरी प्रदान किए जाने के संबंध में एक बार कतिपय सामग्री के आधार पर मंजूरी प्रदान करने वाला प्राधिकारी मंजूरी प्रदान न करने का निर्णय ले लेता है, तो निश्चित रूप से मंजूरी प्रदान करने वाला प्राधिकारी उस सामग्री के आधार पर अपने विचार को परिवर्तित नहीं कर सकता ।

.....

मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के विवेक पर किसी भी प्रकार का दबाव नहीं होना चाहिए और न ही उस पर किसी बाह्य शक्ति द्वारा किसी विशिष्ट रीति में विनिश्चय लेने के लिए कार्य किया जाना चाहिए । चूंकि मंजूरी प्रदान किए जाने या न किए जाने का विवेकाधिकार एकमात्र मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी में निहित होता है, उसके विवेक के संबंध में यह दर्शित होना चाहिए कि वह किसी बाह्य विचार से प्रभावित नहीं हुआ । यदि यह दर्शित होता है कि मंजूरी प्रदान करने वाला प्राधिकारी अपने स्वतंत्र विवेक को किन्हीं कारणोंवश लागू करने में असमर्थ था या मंजूरी प्रदान करने के प्रयोजनार्थ किसी बाध्यता या अनिवार्यता या निर्बंधन के अधीन था, तो वह आदेश इस कारणवश दूषित होगा कि मंजूरी प्रदान करने के लिए प्राधिकारी का विवेकाधिकार समाप्त कर दिया गया था और वह अभियोजन की मंजूरी प्रदान करने के लिए यंत्रवत् विवश था ।

32. विधि वर्तमान मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए स्थिरीकृत है और हमको यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि प्राधिकारी द्वारा आक्षेपित मंजूरी उसी सामग्री के आधार पर प्रदान की गई है जो प्राधिकारी के समक्ष दोनों पूर्ववर्ती अवसरों पर

उपलब्ध थी, जब मंजूरी प्रदान करने से इनकार किया गया ।

.....

35. यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अपराधों, जिनको अपीलार्थी और साथ ही याची द्वारा कारित किया जाना अभिकथित है, की अभिकथित गंभीर प्रकृति के बावजूद नियोजक ने मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी, जिसने पहले मंजूरी प्रदान करने से इनकार करके उदार दृष्टिकोण अपनाया अपने विचार को बाह्य स्रोतों के दबाव के कारण परिवर्तित कर दिया, जो निश्चित रूप से मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी से विधि के स्थिरीकृत सिद्धांतों के प्रकाश में प्रत्याशित नहीं था । यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि विद्वान् न्यायाधीश ने उक्त सुसंगत तथ्य, जो हमारे विचार में आक्षेपित मंजूरी आदेश को दूषित करता है, का संज्ञान नहीं लिया । यह नहीं कहा जा सकता कि आक्षेपित मंजूरी आदेश नई सामग्री के आधार पर पारित किया गया है । यद्यपि विद्वान् न्यायाधीश ने रामानन्द चौधरी और अन्य **बनाम** बिहार राज्य और अन्य [(2002) 1 एस. सी. सी. 153] वाले मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस बात को दोहराया है कि मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी को अपने ही आदेश का पुनर्विलोकन करने और सामान सामग्री के आधार पर मंजूरी प्रदान करने की अधिकारिता प्राप्त नहीं होती, फिर भी उसने यह निष्कर्ष निकाला कि अभिलेख पर नई सामग्री उपलब्ध है । तथ्यों के आधार पर हम अभिलेख पर किसी नई सामग्री, जिसको केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो या केन्द्रीय सतर्कता आयोग द्वारा मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के समक्ष भिन्न निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए समर्थ बनाने के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत किया गया हो, नहीं पाते ।

36. आक्षेपित आदेश वर्ष 2001-2002 के दौरान अभिकथित आचरण के संबंध में वर्ष 2005 में पारित किया गया था और इस कारणवश तीन वर्ष का सारभूत विलम्ब हो चुका है और ऐसी परिस्थितियों में हम याची पर वर्ष 2010 में रिट याचिका फाइल किए जाने के द्वारा इस न्यायालय की शरण लेने में विलम्ब कारित करने के संबंध में कोई उत्तरदायित्व अधिरोपित करना नहीं चाहते ।

37. इन सभी कारणोंवश विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश अपास्त किया जाता है । परिणामस्वरूप, मंजूरी प्रदान करने

वाले प्राधिकारी का आदेश, जिसको रिट याचिकाओं में आक्षेपित किया गया है, अभिखंडित किया जाता है और परिणामस्वरूप रिट याचिका और साथ ही रिट अपील मंजूर की जाती है । लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जा रहा । परिणामस्वरूप संबद्ध प्रकीर्ण याचिकाएं बन्द की जाती हैं ।"

8. याची के विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल द्वारा किए गए निवेदनों का खंडन करते हुए प्रथम प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान् अपर महासालिसीटर श्री जी. राजगोपालन् ने निवेदन किया कि प्रथम प्रत्यर्थी ने उसके समक्ष प्रस्तुत की गई नई सामग्री के आधार पर अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान की थी और इसलिए याची तारीख 31 अक्तूबर, 2013 को पारित मंजूरी आदेश में कोई त्रुटि नहीं निकाल सकता । इसके अतिरिक्त, विद्वान् अपर महासालिसीटर ने निवेदन किया कि अनुशासनिक कार्यवाहियों से मुक्ति प्रदान किए जाने की मंजूरी को अभिखंडित किए जाने के साथ कोई सुसंगतता नहीं है । विद्वान् अपर महासालिसीटर ने यह निवेदन भी किया कि रिट याचिका केवल तभी पोषणीय होती यदि तथ्य के विवादित प्रश्न अन्तर्वलित होते ।

9. विद्वान् अपर महासालिसीटर ने अपनी दलीलों के समर्थन में **विवेक बत्रा** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

"8. चर्चा को आगे बढ़ाने के पूर्व हम यह उचित समझते हैं कि 1961 के भारत सरकार (कारबार का आबंटन) नियम के सुसंगत भागों को उद्धृत किया जाए । नियम 3 के उपनियम (3) और (4) निम्नलिखित हैं –

'3(3). जहां किसी अपराध के बाबत किसी व्यक्ति के अभियोजन के लिए मंजूरी अपेक्षित है, प्रदान की जाएगी;

(क) यदि वह सरकारी सेवक है, तो उस विभाग द्वारा, जो उस सेवा का काडर नियंत्रण प्राधिकारी है, जिसका सरकारी सेवक सदस्य है और किसी अन्य मामले में उस विभाग द्वारा, जिसमें वह अभिकथित अपराध किए जाते समय कार्यरत था;

(ख) यदि वह सरकारी सेवक के अलावा केन्द्रीय सरकार

---

[1] (2017) 1 एस. सी. सी. 69.

द्वारा नियुक्त लोक सेवक है, तो उस विभाग द्वारा जो उस संगठन से प्रशासनिक रूप से संबद्ध है जिसमें वह अभिकथित अपराध किए जाते समय कार्यरत था ; और

(ग) किसी अन्य मामले में उस विभाग द्वारा जो उस अधिनियम का प्रशासन देखता है, जिसके अधीन अभिकथित अपराध कारित किया गया है :

परन्तु यह तब जबकि जहां उन अपराधों के बाबत, जिनको कारित किया जाना अभिकथित है, एक से अधिक अधिनियमों के अन्तर्गत मंजूरी अपेक्षित है, तो वह विभाग, जो ऐसे किसी अधिनियम को सभी अधिनियमों के अन्तर्गत मंजूरी प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रशासित करता है, सक्षम होगा ।'

(3) उपधारा (3) में समाविष्ट किसी बात के होते हुए भी राष्ट्रपति सामान्य या विशेष आदेश द्वारा निदेशित करेगा कि किसी मामले या मामलों के किसी वर्ग में राष्ट्रपति कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग द्वारा मंजूरी प्रदान की जाएगी ।"

10. इस बाबत कोई विवाद नहीं है कि भारतीय राजस्व सेवा के किसी अधिकारी के लिए काडर नियंत्रण प्राधिकारी भारत सरकार के वित्त मंत्री हैं । **बछित्तर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की संविधान न्यायपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि राज्य का कारबार जटिल प्रकृति का होता है और यह आवश्यक होता है कि उसे बड़ी संख्या में अधिकारियों और प्राधिकारियों के अभिकरण द्वारा संचालित किया जाए ।

11. **जसबीर सिंह छाबड़ा** बनाम **पंजाब राज्य**[2] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

"35. यह सदैव स्मरण रखा जाना चाहिए कि हमारे देश जैसी लोकतांत्रिक व्यवस्था में सरकार के कार्य विभिन्न व्यक्तियों द्वारा विभिन्न स्तरों पर किए जाते हैं । विवाद्यक और नीतिगत मामले, जिनको सरकार द्वारा निर्णीत किया जाना अपेक्षित होता है, विभिन्न कृत्यकारियों द्वारा किए जाते हैं, जिनमें से कुछ फाइलों पर किसी विशिष्ट व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह का पक्ष लेते हुए टिप्पणियों को

---

[1] [1962] (सप्ली.) 3 एस. सी. आर. 714 = ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 395.

[2] (2010) 4 एस. सी. सी. 192.

अभिलिखित करते हैं । यह भी संभव है कि कोई कृत्यकारी किसी विशिष्ट कार्यवाही का सुझाव दे, जो लोकहित के सामंजस्य में न हो और यह भी संभव है कि कुछ कृत्यकारी बृहत्तर लोक हित के प्रयोजनार्थ किसी भिन्न उपाय को अंगीकृत किए जाने के लिए सुझाव दें । तथापि, अंतिम विनिश्चय बृहत्तर लोक हित को ध्यान में रखते हुए पदनामित प्राधिकारी द्वारा लिया जाना अपेक्षित होता है । फाइलों में अभिलिखित टिप्पणियों को इस निष्कर्ष कि सरकार द्वारा लिया गया अंतिम विनिश्चय असद्भाव द्वारा प्रेरित है या बाह्य विचारों द्वारा प्रभावित है, को अभिलिखित किए जाने के प्रयोजनार्थ आधार नहीं बनाया जा सकता ।"

12. **सेठी आटो सर्विस स्टेशन** बनाम **दिल्ली विकास प्राधिकरण**[1] वाले मामले में यह मताभिव्यक्ति की गई :–

"14. यह अभिकथित करना घिसापिटा होगा कि किसी विभाग की फाइल में की गई टिप्पणियों को प्रभावी आदेश के रूप में विधि की मंजूरी प्राप्त नहीं होती । किसी अधिकारी द्वारा लिखी गई कोई टिप्पणी किसी भी विषय पर उसके दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति होती है । यह आन्तरिक प्रयोग के लिए और विभाग के अन्य अधिकारियों के विचारणार्थ और अंतिम रूप से विनिश्चय लेने वाले प्राधिकारी के लाभार्थ किसी अधिकारी द्वारा व्यक्त की गई राय से कम नहीं होती । यह संयोजित किया जाना अनावश्यक होगा कि आन्तरिक टिप्पणियां बाह्य प्रकटीकरण के लिए आशयित नहीं होती । फाइल में समाविष्ट टिप्पणियां निष्पादित किए जाने योग्य आदेश में परिवर्तित होती हैं, जो पक्षों के अधिकारों को प्रभावित करती हैं, जब वे विभाग में अंतिम विनिश्चय लेने वाले प्राधिकारी तक पहुंचती हैं, उसका अनुमोदन प्राप्त करती है और संबद्ध व्यक्ति को अंतिम आदेश संसूचित किया जाता है ।"

13. न्यायालय द्वारा अधिकथित उपरोक्त विचारों को ध्यान में रखते हुए, हमारा विचार है कि मंजूरी को मात्र इस कारणवश अविधिमान्य अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि प्रशासनिक टिप्पणियों में भिन्न प्राधिकारियों ने भिन्न विचार व्यक्त किए हैं, इसके पूर्व कि सक्षम प्राधिकारी मामले में अंतिम विनिश्चय लेता । 1988 के भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 के अधीन जो अपेक्षित है, वह यह है कि किसी लोक सेवक

---

[1] (2009) 1 एस. सी. सी. 180.

द्वारा अधिनियम की धारा 7, 10, 11, 13 और 15 के अधीन दंडनीय किसी अपराध का संज्ञान केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार, जैसा भी मामला हो, और किसी लोक सेवक, जो न तो संघ और न ही राज्य के मामलों के संबंध में नियोजित है, उस प्राधिकारी से जो उसको हटाने के लिए सक्षम हैं, द्वारा लिया जाना चाहिए । अधिनियम की धारा 19 की उपधारा (2) यह उपबंधित करती है :–

> "19(2). जहां किसी भी कारणवश इस बाबत शंका उत्पन्न हो जाए कि उपधारा (1) के अधीन अपेक्षित पूर्व मंजूरी केन्द्रीय या राज्य सरकार या किसी अन्य प्राधिकारी में से किसके द्वारा दी जानी चाहिए वहां ऐसी मंजूरी उस सरकार या प्राधिकारी द्वारा दी जाएगी जो लोक सेवक को उसके पद से उस समय हटाने के लिए सक्षम था जिस समय अपराध का किया जाना अभिकथित है ।"

14. 1988 के भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 की उपधारा (3) यह उपबंधित करती है :–

> "19(3). दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी, –
>
> (क) विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित कोई निष्कर्ष, दंडादेश या आदेश किसी न्यायालय द्वारा अपील, पुष्टिकरण या पुनरीक्षण में, अभियोजन के लिए उपधारा (1) के अधीन अपेक्षित मंजूरी के न होने या उसमें कोई त्रुटि, लोप या अनियमितता होने के आधार पर तब तक नहीं उलटा या परिवर्तित किया जाएगा जब तक कि न्यायालय की राय में उसके कारण वास्तव में कोई अन्याय हुआ है ;
>
> (ख) कोई न्यायालय इस अधिनियम के अधीन कार्यवाहियों को किसी प्राधिकारी द्वारा दी गई मंजूरी में किसी त्रुटि, लोप या अनियमितता के आधार पर तब तक नहीं रोकेगा जब तक उसका यह समाधान नहीं हो जाता कि ऐसी त्रुटि, लोप या अनियमितता के परिणामस्वरूप अन्याय हुआ है ;
>
> (ग) कोई न्यायालय इस अधिनियम के अधीन किसी अन्य आधार पर कार्यवाहियां नहीं रोकेगा और कोई न्यायालय किसी जांच, विचारण, अपील या अन्य कार्यवाही में पारित किसी

अंतर्वर्ती आदेश के संबंध में पुनरीक्षण की शक्तियों का प्रयोग नहीं करेगा ।"

15. प्रश्नगत मंजूरी से संबंधित टिप्पण पत्रों की प्रति, जिनको हमारे समक्ष रिज्वाइडर शपथपत्र के भाग के रूप में प्रस्तुत किया गया, के परिशीलन से स्पष्ट है कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा मंजूरी प्रदान किए जाने के पूर्व अपने विवेक का समुचित प्रयोग किया गया था । जैसी कि हमारे समक्ष दलील दी गई है, उक्त अभिलेख का हमारे द्वारा परिशीलन किए जाने से यह दर्शित नहीं होता कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा किसी भी समय बिन्दु पर मंजूरी प्रदान न किए जाने के प्रयोजनार्थ, जिसके आधार पर प्रदान की गई मंजूरी को किसी पूर्ववर्ती आदेश के पुनर्विलोकन का स्वरूप प्रदान किया जा सके, कोई विनिश्चय लिया गया था । मुख्य सतर्कता आयोग द्वारा व्यक्त की गई राय, जिसकी पुष्टि की गई और अंततः जो मंजूरी के अनुसार लागू हुई, को इस कारणवश असुसंगत नहीं कहा जा सकता कि 2003 के केन्द्रीय सतर्कता आयोग अधिनियम की धारा 8(1) का खंड (छ) यह उपबंधित करता है कि मुख्य सतर्कता आयोग का यह कार्य है कि वे केन्द्रीय सरकार को ऐसे मामलों में सलाह दें, जिनको सरकार द्वारा निर्दिष्ट किया जाए ।

16. उन कारणोंवश, जिनकी चर्चा ऊपर की गई है, हम उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका को खारिज करने वाले आक्षेपित आदेश में मध्यक्षेप करने का कोई कारण नहीं पाते । तद्नुसार, अपील खारिज की जाती है । इस न्यायालय द्वारा पारित तारीख 25 नवम्बर, 2014 के अन्तरिम आदेश को रिक्त किया जाता है । विचारण न्यायालय को निर्देशित किया जाता है कि वे विचारण को शीघ्राशीघ्र समाप्त करें । तथापि, हम यह स्पष्ट करते हैं कि हमने मामले के गुणागुण पर कोई विचार व्यक्त नहीं किया है । लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जा रहा ।

17. **पंजाब राज्य और एक अन्य** बनाम **मोहम्मद इकबाल भट्टी**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

"6. यद्यपि राज्य मंजूरी प्रदान करने या मंजूरी प्रदान करने से इनकार करने के मामले में कानूनी अधिकारिता का प्रयोग करता है, किन्तु इसका यह अर्थ नहीं होगा कि जिस शक्ति का एक बार प्रयोग

[1] (2009) 17 एस. सी. सी. 92.

किया जा चुका है, उसका प्रयोग दुबारा नहीं किया जा सकता । किसी भी पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए यह आवश्यक नहीं है कि राज्य को पुनर्विलोकन की शक्ति अभिव्यक्त रूप से प्राप्त हो चूंकि यह शक्ति प्रशासनिक प्रकृति की शक्ति होती है । तथापि, यह बात किसी नुक्ताचीनी के परे हैं कि मंजूरी आदेश प्रदान किए जाते समय संबद्ध प्राधिकारी द्वारा गंभीरतापूर्वक अपने विवेक का प्रयोग किया जाना आवश्यक है । मंजूरी प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ पारित आदेश की वैधता और/या विधिमान्यता दांडिक न्यायालयों द्वारा पुनर्विलोकन के अध्यधीन होती है । मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार किए जाने के प्रयोजनार्थ पारित किया गया आदेश उच्चतर न्यायालयों द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन के अध्यधीन होता है ।

7. मंजूरी प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ पारित आदेश की विधिमान्यता संबद्ध प्राधिकारी द्वारा विवेक के प्रयोग और उसके समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री पर निर्भर होती है । ऐसे समस्त तात्विक तथ्यों और साक्ष्यों पर उसके द्वारा विचार किया जाना चाहिए । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी को ऐसे समस्त तात्विक तथ्यों और अन्वेषण के दौरान अतिरिक्त साक्ष्यों के संबंध में अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए । यद्यपि यह संभव है कि मंजूरी के आदेश से विवेक का प्रयोग परिलक्षित न हो और इस संबंध में न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य अनावश्यक हों । मंजूरी प्रदान करते समय प्राधिकारी किसी असुसंगत तथ्य पर विचार नहीं कर सकता और न ही किसी अनावश्यक विचारणा, जो किसी कानूनी आदेश को पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ आवश्यक न हो, के आधार पर आदेश पारित कर सकता है । यह भी स्थिरीकृत है कि उच्चतर न्यायालय मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी को मंजूरी प्रदान करने या न करने के प्रयोजनार्थ निदेशित नहीं कर सकते । मंजूरी आदेश पारित करने वाले किसी प्राधिकारी की शक्ति के स्त्रोत पर भी विचार किया जाना चाहिए ।"

18. **हिमाचल प्रदेश राज्य** बनाम **निशांत सरीन**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

---

[1] (2010) 14 एस. सी. सी. 527.

"12. यह सत्य है कि सरकार मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार करने के मामले में कानूनी शक्ति का प्रयोग करती है और इसका यह अर्थ नहीं है कि यदि एक बार किसी शक्ति का प्रयोग किया जा चुका है तो उस शक्ति का प्रयोग किसी भी परिस्थिति में, चाहे वह परिस्थिति कुछ भी हो, पुनर्विलोकन की अभिव्यक्त शक्ति की अनुपस्थिति में दोबारा या किसी पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर नहीं किया जा सकता । तथापि, पुनर्विलोकन की शक्ति अनियंत्रित या अनिर्बंधित नहीं होती । हमको ऐसा प्रतीत होता है कि इस ठोस सिद्धांत का अनुसरण किया जाना चाहिए कि यदि सरकार या सक्षम प्राधिकारी द्वारा एक बार 1988 के अधिनियम की धारा 19 या संहिता की धारा 197, जैसा भी मामला हो, के अधीन कानूनी शक्ति का प्रयोग किया जा चुका है, तो मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के लिए यह अनुज्ञेय नहीं होगा कि वह उसी सामग्री के आधार पर पुनः मामले का पुनर्विलोकन करे या उस पर पुनर्विचार करे । ऐसा इस कारणवश है क्योंकि यह संभव है कि पुनर्विलोकन की अनिर्बंधित शक्ति के कारण मामले को अंतिमता प्राप्त न हो और सरकार के परिवर्तित हो जाने पर या मंजूरी की शक्ति का प्रयोग करने वाले व्यक्ति के बदल जाने पर मंजूरी से संबंधित मामले पर उसी प्राधिकारी द्वारा उसको ज्ञात कारणोंवश पुनर्विचार आरम्भ कर दिया जाए और कोई भिन्न आदेश पारित कर दिया जाए । अतः, समान सामग्री के ही आधार पर व्यक्त किए गए विचार को बदला जा सकेगा और किसी कानूनी प्रक्रिया का कभी अंत नहीं होगा ।

13. हमारे विचार में, समान सामग्री के आधार पर विचार में किया गया परिवर्तन पुनर्विलोकन या मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार करने वाले पूर्ववर्ती आदेश पर पुनर्विचार का आधार नहीं हो सकता । तथापि, किसी ऐसे मामले में जहां अन्वेषण अभिकरण द्वारा पूर्ववर्ती आदेश के पश्चात् नई सामग्री संगृहीत की गई है और मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत की गई है और उस आधार पर मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी द्वारा मामले पर पुनर्विचार किया जाता है और नई सामग्री के प्रकाश में कोई नया विचार सृजित किया जाता है कि किसी लोक सेवक के अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान की जा सकती है, तो ऐसे अनुक्रम को अंगीकृत किए जाने में कोई अड़चन नहीं हो सकती ।"

19. **डा. जे. जयललिता** बनाम **डा. एम. चेन्नारेड्डी, तमिलनाडु के राज्यपाल, मद्रास और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया :–

> "30. याची के विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों का मुख्य भाग प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा पारित आदेश की विधिमान्यता पर विभिन्न आधारों पर आक्रमण है । हम रिट याचिका की पोषणीयता की बाबत व्यक्त किए गए विचार को दृष्टि में रखते हुए उनमें से किसी भी आधार पर यहां पर विचार करना उचित नहीं समझते । मात्र यह बताना पर्याप्त होगा कि याची के समक्ष अधिनियम के अधीन कार्यवाहियों में वे समस्त दलीलें देने का पर्याप्त अवसर उपलब्ध था, यदि उन कार्यवाहियों को प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा मंजूरी प्रदान किए जाने के मतावलम्बन में आरम्भ किया गया था । वर्तमान में यह याचिका समयपूर्व है और पोषणीय नहीं है । हम इस दलील को स्वीकार नहीं करते कि रिट याचिका को इस बाबत ग्रहण किया जा सकता है कि अंततः अनुतोष न्यायालय द्वारा ही प्रदान किया जाना है चूंकि याची के मूल अधिकार प्रभावित हुए हैं । हम पहले ही इस निष्कर्ष पर पहुंच चुके हैं कि मंजूरी आदेश किसी भी रीति में याची के मूल अधिकारों को प्रभावित नहीं करता ।"

20. **रवि कुमार और एक अन्य** बनाम **राज्य जिसका प्रतिनिधित्व उप-पुलिस अधीक्षक, एस. पी. ई./सी. बी. आई./ए. सी. बी./चेन्नई**[2] द्वारा किया गया, वाले मामले में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

> "17. माननीय उच्चतम न्यायालय ने ऊपर उद्धृत विनिश्चय में अभिनिर्धारित किया है कि मंजूरी प्रदान करने से इनकार किया जाना या मंजूरी प्रदान किया जाना भी कानूनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए पारित किया गया एक आदेश है । किन्तु तत्समय यह भी अभिनिर्धारित किया कि वह शक्ति जिसका एक बार प्रयोग किया जा चुका है, पुनः प्रयोग किया जा सकता है किन्तु अन्वेषण अभिकरण द्वारा पूर्ववर्ती आदेश के पश्चात् मामले पर पुनर्विचार करते समय नई सामग्री संगृहीत की जानी चाहिए और यह सामग्री मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत की जानी चाहिए । ऊपर उद्धृत

---

[1] 1995-1-एल. डब्ल्यू. 525.

[2] 2012 (2) एम. डब्ल्यू. एन. (क्रिमिनल) 141.

विनिश्चय में माननीय उच्चतम न्यायालय का पूर्ववर्ती विचार, जिसको माननीय उच्चतम न्यायालय ने गोपीकांत चौधरी **बनाम** बिहार राज्य और अन्य [(2000) 9 एस. सी. सी. 53] वाले मामले के रूप में संप्रकाशित किया, को निर्दिष्ट किया गया है उक्त मामले के तथ्यों के अनुसार, आरम्भिकतः, संबद्ध मंत्री ने लोक सेवक के अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान करने से इनकार कर दिया था किन्तु बाद में, मुख्यमंत्री ने अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान की किन्तु उक्त आदेश को माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा इस आधार पर अपास्त कर दिया गया कि अन्वेषण अभिकरण ने नई सामग्री संगृहीत नहीं की है, जिसके आधार पर यह अपेक्षा की जा सके कि पूर्ववर्ती आदेश पर पुनर्विचार की आवश्यकता है । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया एक अन्य विनिश्चय जो पंजाब राज्य और एक अन्य **बनाम** मोहम्मद इकबाल भट्टी [2010(4) सी. टी. सी. 458 (एस. सी.) = 2010 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 1196] वाले मामले के रूप में संप्रकाशित है, को भी ऊपर उद्धृत विनिश्चय में निर्दिष्ट किया गया है । जहां तक उक्त मामले में उपलब्ध तथ्यों का संबंध है, माननीय मंत्री ने मूल रूप से तारीख 15 दिसम्बर, 2003 के आदेश द्वारा मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार कर दिया था किन्तु तत्पश्चात् लगभग 9 माह के पश्चात् सरकार परिवर्तन के बाद सतर्कता विभाग ने पुनः सरकार की शरण ली । पंजाब के राज्यपाल ने तारीख 14 सितम्बर, 2004 को मंजूरी आदेश प्रदान किया । माननीय पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय ने मंजूरी आदेश को यह मताभिव्यक्ति करते हुए अपास्त कर दिया कि राज्य के पास पुनर्विलोकन की कोई शक्ति नहीं है । राज्य ने माननीय उच्च न्यायालय के उक्त आदेश को चुनौती दी, माननीय उच्चतम न्यायालय ने पैरा 22 और 23 में यह मताभिव्यक्ति की –

> '22. इसलिए, मामला यह नहीं है कि मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के समक्ष नई सामग्री प्रस्तुत कर दी गई थी । इसलिए, इस बाबत कोई मामला नहीं बना कि मंजूरी प्रदान करने वाला प्राधिकारी एक सुसंगत तथ्य पर विचार करने में विफल रहा या उसने किसी असुसंगत तथ्य पर विचार किए । यदि माननीय मंत्री द्वारा चाहा गया स्पष्टीकरण प्रदान कर दिया गया था, जैसा कि दलील हमारे समक्ष दी गई है, तो इसके

आधार पर मामले के पुनर्विचारण का आधार सृजित हो जाएगा । हमारे समक्ष यह अभिकथित किया गया कि सरकार ने इस स्पष्टीकरण को अभिप्राप्त करने के लिए नौ पत्र भेजे थे, जिनका कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुआ ।

23. उच्च न्यायालय ने सम्पूर्ण अभिलेखों का परिशीलन करने के पश्चात् अपने निर्णय में स्पष्टतः अभिनिर्धारित किया है कि कोई भी नई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ भी नहीं है कि पुनर्विचारण क्यों आवश्यक हो गया था । किस आधार पर ऐसी किसी प्रक्रिया को अंगीकृत किया गया, ज्ञात नहीं है । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी या अन्यथा के समक्ष अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर पूर्ववर्ती आदेश के पुनर्विचारण या पुनर्विलोकन के लिए विवेक का उपयोजन भी आवश्यक है ।'''

21. इस न्यायालय द्वारा यह भी स्पष्ट किया जाता है कि मंजूरी प्रदान करने वाला कोई भी आदेश उच्च न्यायालय द्वारा संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन न्यायिक संवीक्षा के अध्यधीन नहीं हो सकता, चूंकि ऐसे किसी भी मंजूरी आदेश का परीक्षण विचारण के समय नहीं किया जा सकता, किन्तु तत्समय अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान करने से इनकार करने वाले सक्षम प्राधिकारी का आदेश उच्च न्यायालय द्वारा संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन न्यायिक पुनर्विलोकन के अध्यधीन हो सकता है चूंकि यह आदेश कार्यवाहियों को अंतिमता प्रदान करने वाला होता है । किन्तु दुर्भाग्यवश इस मामले में केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो ने समान सामग्री के आधार पर मंजूरी आदेश प्राप्त करने के प्रयोजनार्थ, सक्षम प्राधिकारी के आदेश जिसके द्वारा मंजूरी प्रदान करने से इनकार कर दिया गया, को चुनौती देने के बजाय भिन्न प्राधिकारी की शरण में जाने के द्वारा गलत दिशा का अनुसरण किया । इस न्यायालय का यह विचार है कि चेन्नई के मुख्य आयकर आयुक्त, जिसने तारीख 6 सितम्बर, 2010 के आदेश द्वारा मंजूरी प्रदान की, द्वारा विवेक का प्रयोग नहीं किया गया और उक्त मंजूरी आदेश भी ऊपरवर्णित कारणोंवश अवैध और अविधिमान्य है ।

22. अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री और पक्षों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा किए गए निवेदनों और उन निर्णयों, जिनका अवलंब पक्षों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा लिया गया, पर सावधानीपूर्वक विचारोपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि चेन्नई स्थित राजस्व खुफिया निदेशालय द्वारा एक

अन्य प्रवेश के बिल के अधीन एक अन्य आयातक के संबंध में आरम्भ किए गए अन्वेषण के आधार पर बड़े स्तर पर तस्करी और धोखाधड़ी करके तैयार किए गए बिलों का पता चला था । इस अभियान के दौरान याची द्वारा तैयार किया गया एक बिल भी अन्वेषण में सम्मिलित किया गया था । द्वितीय प्रत्यर्थी ने दावा किया कि दांडिक षड्यंत्र किया गया है चूंकि केवल भीतरी उपकरणों की बजाय सम्पूर्ण एयरकंडीशनरों का आयात किया गया था । याची ने आयातित माल का निर्धारण किया है और उसको इलैक्ट्रोनिक माध्यम से भीतरी उपकरण घोषित किया है । याची ने पूर्ववर्ती आयातों के अभिलिखित सीमाशुल्क आंकड़ों के आधार पर शुल्क अधिरोपित किया है और अधिसूचना के अधीन लाभों, जिनका दावा आयातक द्वारा किया गया, को प्रदान करने से इनकार कर दिया है । याची ने प्रक्रिया और नियमों के अनुसार, "आरोप मुक्त" का आदेश प्रदान किए जाने के पूर्व सीमाशुल्क परीक्षण अधिकारियों द्वारा माल की बेतरतीब जांच का आदेश दिया है । याची के इस आदेश का अनुमोदन उसके तत्कालिक वरिष्ठ अधिकारी द्वारा किया गया जो निर्धारण के प्रयोजनार्थ सीमाशुल्क विभाग का उचित अधिकारी है । तथापि, परीक्षण अधिकारी माल का परीक्षण करने में विफल रहे और उन्होंने माल को यह अभिलिखित करते हुए जाने दिया कि वास्तव में आयात किया गया माल सम्पूर्ण एयरकंडिशनर है, न कि भीतरी उपकरण, जैसी कि घोषणा की गई है । द्वितीय प्रत्यर्थी ने प्रथम प्रत्यर्थी के समक्ष तारीख 13 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा अभियोजन की मंजूरी की ईप्सा की और सक्षम कानूनी प्राधिकारी द्वारा अभियोजन के लिए मंजूरी को अनपेक्षित अभिनिर्धारित किया । सक्षम कानूनी प्राधिकारी ने सद्भाव में सीमाशुल्क के उन्मोचन के प्रयोजनार्थ सीमाशुल्क अधिनियम की धारा 151 के अधीन याची को संरक्षण प्रदान किए जाने की बाबत भी अपना आशय व्यक्त किया । सक्षम प्राधिकारी के दृष्टिकोण को द्वितीय प्रत्यर्थी को तारीख 13 अगस्त, 2013 के पत्र द्वारा संसूचित कर दिया गया था । उन्होंने यह अभिनिर्धारित करने के पश्चात् कि मंजूरी के लिए कोई मामला नहीं बनता है, अपनी रिपोर्ट केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड के मुख्य सतर्कता अधिकारी को भेज दी थी । सक्षम प्राधिकारी की तारीख 13 अगस्त, 2013 की रिपोर्ट, जिसके द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि अभियोजन अपेक्षित नहीं है, तारीख 14 अगस्त, 2013 को केन्द्रीय उत्पादशुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड को भेज दी गई थी । तथापि, मुख्य सतर्कता अधिकारी ने केन्द्रीय सतर्कता आयोग को रिपोर्ट भेजे जाने की तारीख से एक दिन पूर्व ही अपनी रिपोर्ट तैयार कर ली थी । अन्य

शब्दों में, मुख्य सतर्कता अधिकारी की रिपोर्ट तारीख 13 अगस्त, 2013 को ही हस्ताक्षरित हो गई थी, जबकि सक्षम प्राधिकारी की रिपोर्ट मुख्य सतर्कता अधिकारी को तारीख 14 अगस्त, 2013 को भेजी गई थी । यह मुख्य सतर्कता अधिकारी की रिपोर्ट से स्पष्ट है जिसको याची द्वारा फाइल किए गए टंकित कागजातों के समुच्चय में पृष्ठ 95 के रूप में संलग्न किया गया है । मुख्य सतर्कता अधिकारी ने सक्षम प्राधिकारी की रिपोर्ट प्राप्त होने के पूर्व ही अपनी रिपोर्ट तैयार कर ली थी । जबकि दूसरी ओर, केन्द्रीय सतर्कता आयोग ने अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान किए जाने की सलाह दे दी थी और उच्चतर प्राधिकारी की सलाह को ध्यान में रखते हुए उसी सक्षम कानूनी प्राधिकारी ने स्वयं द्वारा निकाले गए किसी भी निष्कर्ष का खंडन किए बिना और इस विवाद्यक पर कोई नई अन्वेषणात्मक सामग्री संगृहीत किए बिना मंजूरी प्रदान कर दी ।

23. इस न्यायालय के संज्ञान में यह बात लाई गई है कि याची के विरुद्ध आरम्भ की गई अनुशासनिक कार्यवाही के परिणामस्वरूप तारीख 8 जून, 2017 को अंतिम आदेश पारित किया गया जिसको सक्षम कानूनी प्राधिकारी द्वारा याची के विरुद्ध आरोपों को बन्द करते हुए पारित किया गया था ।

24. जहां तक विद्वान् अपर महासालिसीटर की इस दलील का संबंध है कि मंजूरी नई सामग्री के आधार पर प्रदान की गई थी, अनुसंधान प्रबंध प्रणाली अनुदेशों के स्वरूप में नई सामग्री को इस कारणवश "नई सामग्री" के रूप में विचारित नहीं किया जा सकता कि उक्त अनुदेश सक्षम अनुशासनिक प्राधिकारी को पहले से ज्ञात थे और उसने तारीख 13 अगस्त, 2013 को अभियोजन की मंजूरी प्रदान करने से इनकार करते समय उन पर विचार भी किया था । तारीख 13 अगस्त, 2013 को अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान किए जाने से इनकार करते हुए अनुशासनिक प्राधिकारी ने अनुसंधान प्रबंध प्रणाली अनुदेशों, जो निर्धारण के लिए परामर्शी मार्गदर्शक सिद्धांत हैं, के बारे में चर्चा भी की थी । अनुसंधान प्रबंध प्रणाली अनुदेशों को सक्षम अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पूर्व में लिए गए विनिश्चय को पलटने के प्रयोजनार्थ नई सामग्री के रूप में विचारित नहीं किया जा सकता । अनुशासनिक प्राधिकारी ने पहले अभियोजन के लिए मंजूरी प्रदान करने से इनकार करते समय ही सी. बी. डी. और एम. आर. पी. पर तारीख 13 अगस्त, 2013 को पारित अपने आदेश में विचार कर लिया था । इसलिए, मंजूरी आदेश में निर्दिष्ट अतिरिक्त आयात शुल्क

और अधिकतम फुटकर मूल्य को पूर्ववर्ती आदेश को पलटे जाने के प्रयोजनार्थ नई सामग्री नहीं माना जा सकता ।

25. जैसा कि याची की ओर से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री वी. टी. गोपालन् द्वारा न्यायतः दलील दी गई है, याची मंजूरी आदेश को गुणागुण पर चुनौती नहीं दे रहा है और उसने रिट याचिका के माध्यम से जिस बात को चुनौती दी है वह सक्षम प्राधिकारी द्वारा मुख्य सतर्कता आयोग के बाह्य दबाव के कारण अपने ही आदेश का पुनर्विलोकन किए जाने की कार्यवाही है जो किसी नई सामग्री पर आधारित नहीं है जिसको अन्वेषण अभिकरण द्वारा बाद में खोजा गया हो ।

26. यह विधितः स्थिरीकृत सिद्धांत है कि पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग किया जाना तभी संभव होता है जब पूर्ववर्ती दृष्टिकोण के पुनर्विलोकन के प्रयोजनार्थ प्राधिकारी को समर्थ बनाने वाला कोई अभिव्यक्त उपबंध विद्यमान हो । यह भी समान रूप से विधि का स्थिरीकृत सिद्धांत है कि जब एक बार मंजूरी प्रदान करने वाला प्राधिकारी कतिपय सामग्री के आधार पर अभियोजित किए जाने की मंजूरी प्रदान किए जाने के संबंध में मंजूरी प्रदान न करने का निर्णय लेता है, तो निश्चित रूप से मंजूरी प्रदान करने वाला वही प्राधिकारी समान सामग्री के आधार पर अपने विचार को परिवर्तित नहीं कर सकता । अनेक विनिश्चयों में यह अभिनिर्धारित किया जा चुका है कि मंजूरी प्रदान करने का अधिकार रखने वाले प्राधिकारी को मामले के तथ्यों, सगृहीत साक्ष्य और अन्य आनुषंगिक तथ्यों को मंजूरी प्रदान करने के पूर्व ध्यान में रखते हुए, अपने विवेक का प्रयोग करना चाहिए । मंजूरी प्रदान किया जाना मात्र एक उदार औपचारिकता नहीं है बल्कि यह एक पवित्र कार्य है जो परेशान करने वाले अभियोजनों के विरुद्ध सरकारी सेवकों के संरक्षण के आवरण को हटा देता है और इसलिए, इसके पहले कि लोक सेवकों के विरुद्ध किसी अभियोजन की कार्यवाही को आरम्भ किया जाए, पूर्वोक्त अपेक्षाओं का कड़ाईपूर्वक पालन किया जाना चाहिए । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी का विवेक किसी दबाव के अन्तर्गत नहीं होना चाहिए और न ही किसी बाह्य शक्ति को विनिश्चय लेने की प्रक्रिया में उसके विरुद्ध किसी भी प्रकार से कार्यरत होना चाहिए । चूंकि मंजूरी प्रदान किए जाने या प्रदान न किए जाने का विवेकाधिकार आत्यंतिक रूप से मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी में निहित होता है, यह दृश्यमान होना चाहिए कि उसका विवेकाधिकार किसी बाह्य विचार द्वारा प्रभावित नहीं हुआ है ।

27. अतः जबकि वर्तमान मामले के तथ्यों के संबंध में विधि स्थिरीकृत है, समान सामग्री के आधार पर प्राधिकारी द्वारा प्रदान की गई आक्षेपित मंजूरी, जो प्राधिकारी के समक्ष पूर्ववर्ती अवसर पर भी उपलब्ध थी जब मंजूरी प्रदान करने से इनकार किया गया, को मान्य नहीं ठहराया जा सकता । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी ने मंजूरी प्रदान करने से इनकार करने के द्वारा पहले उदार दृष्टिकोण अपनाया किन्तु अब उसने बिना किसी नई सामग्री के अपने विचार को बदल दिया है और मंजूरी प्रदान कर दी है, जिसकी अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती । मंजूरी प्रदान करने वाले प्राधिकारी के लिए यह अनुज्ञेय नहीं है कि वह समान सामग्री के आधार पर मामले का पुनर्विलोकन करे या उस पर पुनर्विचार करे । ऐसा इसलिए है क्योंकि पुनर्विलोकन की अनिर्बंधित शक्ति ऐसे मामलों को अंतिमता प्रदान नहीं कर सकती और सरकार में परिवर्तन हो जाने या मंजूरी प्रदान करने की शक्ति का प्रयोग करने वाले व्यक्ति के परिवर्तित हो जाने पर उसी प्राधिकारी द्वारा मामले पर उसी को ज्ञात कारणोंवश पुनर्विचार किया जा सकता है और कोई भिन्न आदेश पारित किया जा सकता है । अतः समान सामग्री के आधार पर व्यक्त किया गया विचार परिवर्तित होता रह सकता है और इस प्रकार की कानूनी कार्यवाही का कभी अंत नहीं होगा । अतः समान सामग्री प्रदान के आधार पर दी जा चुकी मंजूरी से इनकार किया जाना पूर्ववर्ती आदेश के पुनर्विलोकन या उस पर पुनर्विचार का आधार नहीं हो सकता ।

28. याची की ओर से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया वे प्रत्यक्षतः वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू होते हैं । विद्वान् अपर महासालिसीटर द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया, उन निर्णयों में अधिकथित विनिश्चयानुपात वर्तमान मामले में लागू नहीं होता ।

29. इन परिस्थितियों में, ऊपर वर्णित कारणोंवश प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा तारीख 31 अक्तूबर, 2013 को पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है । रिट याचिका मंजूरी की जाती है । परिणामस्वरूप, समस्त संबद्ध प्रकीर्ण याचिकाएं बन्द की जाती हैं ।

रिट याचिका मंजूर की गई ।

अवि.

सोनी तारियंग (श्री)

बनाम

खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद्

तारीख 16 नवम्बर, 2018

मुख्य न्यायमूर्ति मोहम्मद याकूब मीर

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 – न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि – न्यायालय द्वारा मध्यक्षेप – याचियों के विरुद्ध शिकायतों के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा निकाले गए निष्कर्षों का किसी साक्ष्य पर आधारित न होना – याची को सुनवाई का कोई अवसर प्रदान न किया जाना – याची की नियुक्ति को समाप्त और उसके करार को रद्द किया जाना न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि के अन्तर्गत आता है – न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए किया गया मध्यक्षेप न्यायसंगत है ।

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 – न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि – न्यायालय द्वारा मध्यक्षेप – वैकल्पिक अनुतोष का अभिवाक् – यद्यपि याची के पास नुकसान की भरपाई के लिए आनुकल्पिक अनुतोष उपलब्ध है, फिर भी आनुकल्पिक अनुतोष की उपलब्धता अनुच्छेद 226 के अधीन उपलब्ध शक्तियों के प्रयोग के लिए कोई आत्यंतिक वर्जन नहीं है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि प्रत्यर्थियों का दावा है कि उन्हें याची के विरुद्ध कुछ शिकायतें प्राप्त हुई थीं और इसके अतिरिक्त याची ने 15,05,000/- रुपए (पन्द्रह लाख पांच हजार रुपए) के वार्षिक अधिशुल्क को भी जमा नहीं किया था, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी संख्या 3 ने तारीख 16 अप्रैल, 2018 को कारण बताओ सूचना जारी की जिसके द्वारा याची को संसूचित किया गया कि खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् की अधिकारिता के भीतर चलने वाले वाणिज्यिक यातायात वाहनों से सत्यापन शुल्क के रूप में अत्यधिक शुल्क का संग्रह किए जाने के संबंध में अनेक शिकायतें प्राप्त हुई हैं ; याची उन नियमों और शतों का पालन करने में विफल रहा है जो तारीख 30 मार्च, 2016 के करार में अधिकथित हैं और ; याची की कार्यवाही के कारण राष्ट्रीय राजमार्गों और उप-मार्गों पर यातायात में भीड़भाड़ की स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसके परिणामस्वरूप जनसामान्य को असुविधा का सामना करना पड़ रहा है और इसके अतिरिक्त यह खासी

हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् के हितों के भी प्रतिकूल है । उपरोक्त स्थिति को ध्यान में रखते हुए याची से कारण बताओ सूचना की प्राप्ति के सात दिनों के भीतर लिखित में इस बाबत कारण स्पष्ट करने के लिए कहा गया कि करार विलेख और अभिकर्ता के रूप में उसकी नियुक्ति आदेश को क्यों न रद्द कर दिया जाए । याची ने इस कारण बताओ सूचना का उत्तर तारीख 23 अप्रैल, 2018 को दिया जिसमें उसने समस्त आरोपों से इनकार किया है और इस बात का दावा भी किया है कि उसने करार विलेख के किसी भी नियम और शर्तों का अतिक्रमण नहीं किया है । प्रत्यर्थी संख्या 3 ने तारीख 1 मई, 2018 को उक्त करार को समाप्त किए जाने का आदेश जारी कर दिया । प्रत्यर्थी संख्या 3 ने तारीख 23 मई, 2018 को पुलिस के उप-आयुक्तों/अधीक्षकों को संसूचित किया कि अभिकर्ता के रूप में याची की नियुक्ति को रद्द कर दिया गया है और खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् ने श्री डोमिनिक स्यूटिंग (प्रत्यर्थी संख्या 5) को गैर जनजातीय व्यापारियों के वाणिज्यिक वाहनों द्वारा की जा रही अवैध क्षरण का पता लगाए जाने/उसकी पहचान किए जाने और साथ ही साथ तीन वर्षों की अवधि के लिए खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् की अधिकारिता के भीतर अपराधों के समाधान के प्रयोजनार्थ अभिकर्ता के रूप में नियुक्त कर दिया है । याची ने अभिकर्ता के रूप में उसकी नियुक्ति के रद्दकरण और प्रत्यर्थी संख्या 5 की नियुक्ति से व्यथित होकर 2008 की सिविल याचिका संख्या 212 फाइल की जिसमें यह दलील दी गई कि उसकी नियुक्ति का रद्दकरण अवैध और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है । इसके अतिरिक्त, प्रत्यर्थियों ने प्रत्यर्थी संख्या 5 को अभिकर्ता के रूप में नियुक्त करते हुए कोई निविदा सूचना जारी नहीं की । किन्तु जब खंडन शपथपत्र फाइल किया गया, तो याची को ज्ञात हुआ कि निविदा सूचना जारी की जा चुकी थी और प्रत्यर्थी संख्या 3 और 5 द्वारा करार भी निष्पादित किया जा चुका था । उपरोक्त तथ्यों को सम्मुख रखे जाने पर याची के विद्वान् काउंसेल को तारीख 7 अगस्त, 2018 के आदेश द्वारा रिट याचिका वापस लिए जाने की अनुज्ञा इस स्वतंत्रता के साथ प्रदान कर दी गई वे नई याचिका फाइल कर सकते हैं । तत्पश्चात, हमारे समक्ष प्रस्तुत याचिका फाइल की गई है जिसमें उक्त निविदा सूचना और साथ ही करार को चुनौती दी गई है । याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – याची के विद्वान् काउंसेल ने प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल की इस दलील कि याची के पास नुकसान के आनुकल्पिक अनुतोष के

लिए वाद फाइल करने का अवसर है, का उत्तर देते हुए दलील दी कि आनुकल्पिक अनुतोष की उपलब्धता संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उपलब्ध शक्तियों के प्रयोग के लिए कोई आत्यंतिक वर्जन नहीं है । उन्होंने इस संबंध में हरबंस लाल साहनिया और एक अन्य बनाम इंडियन आयल कापोरेशन लिमिटेड और अन्य वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया । इस निर्णय का पैरा 7 सुसंगत है जिसे नीचे उद्धृत किया गया :–

"7. जहां तक उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचार का संबंध है, कि अपीलार्थियो को माध्यस्थम् खंड का आश्रय लेते हुए अनुतोष उपलब्ध था और इसलिए अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य थी, यह मताभिव्यक्ति किया जाना पर्याप्त होगा कि आनुकल्पिक अनुतोष की उपलब्धता द्वारा रिट अधिकारिता के अपवर्जन का नियम विवेकाधिकार का नियम है और अनिवार्यता पर आधारित नियम नहीं है । किसी समुचित मामले में, उच्च न्यायालय आनुकल्पिक अनुतोष के उपलब्ध होने पर भी अपनी रिट अधिकारिता का प्रयोग कम से कम तीन आकस्मिताओं में कर सकता है : (i) जहां रिट याचिका के माध्यम से किसी मूल अधिकार के प्रवर्तन की ईप्सा की गई है ; (ii) जहां नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को लागू किए जाने में विफलता हुई या, (iii) जहां आदेश या कार्यवाहियां पूर्णतया बिना अधिकारिता के है या अधिनियम की अधिकारिता को ही चुनौती दी गई । वर्तमान मामले में प्रथम दो आकस्मिकताएं आकर्षित होती हैं । इसके अतिरिक्त, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, याची की डीलरशिप, जो उसका जीवन-यापन का साधन है, को एक असंगत और अविद्यमान कारणवश समाप्त कर दिया गया है । ऐसी परिस्थितियों में हम यह महसूस करते हैं कि अपीलार्थियों को उच्च न्यायालय द्वारा ही अनुतोष मंजूर किया जाना चाहिए बजाय इसके कि उनको माध्यस्थम् कार्यवाहियां आरम्भ किए जाने की आवश्यकता बताते हुए वापस लौटा दिया जाए ।" यदि याची के विरुद्ध शिकायतें थीं तो उन शिकायतों की जांच क्यों नहीं की गई ; उन्होंने कोई जांच क्यों नहीं की, यही वह मुख्य प्रश्न है जिसका उत्तर दिया जाना अपेक्षित है । प्रत्यर्थी संख्या 3 ने तारीख 16 अप्रैल, 2018 को कारण बताओ नोटिस यह उल्लेख करते हुए जारी किया कि अत्यधिक शुल्क के संग्रहण के संबंध में अनेक शिकायतें प्राप्त हुई हैं और याची ने करार के नियमों और शर्तों का अतिक्रमण किया है । उक्त कारण बताओ नोटिस ऐसे तरीके में प्रारूपित किया गया है कि इस बात का कोई भी स्पष्ट संकेत नहीं दिया गया है कि

याची को किस बात का उत्तर देना है । किन्तु इसके बावजूद याची ने उन प्रश्नों, जिनका उत्तर कारण बताओ नोटिस के निबंधनों के अनुसार दिया जाना अपेक्षित था, का उत्तर समस्त आरोपों से इनकार करते हुए सात दिनों के भीतर दे दिया । जब याची द्वारा ऐसा किया गया तो प्रत्यर्थियों को जांच संचालित करने से किसने रोका था कि वे तारीख 1 मई, 2018 का समाप्ति का आदेश पारित करने के लिए विवश हो गए । संविदा को शासित करने वाले नियमों और शर्तों/मार्गदर्शक सिद्धांतों की शर्त 15 और करार का खंड 14, जो तीन माह का पूर्व नोटिस दिए जाने और सुनवाई का पर्याप्त अवसर प्रदान किए जाने के लिए, यह उपबंधित करते हैं का पूर्णतया अनदेखा किया गया जिससे इस बात का स्पष्ट रूप से पता चलता है कि प्रत्यर्थियों ने कितने मनमानेपूर्ण ढंग से कार्य किया है । पुनः अभिकर्ता के रूप में तारीख 1 मई, 2018 को याची की नियुक्त रद्द किए जाने के पश्चात् तारीख 2 मई, 2018 को नई निविदा सूचना जारी किया जाना और तत्पश्चात् प्रत्यर्थी संख्या 5 को तारीख 23 मई, 2018 को नियुक्त किया जाना स्वयमेव यह दर्शित करता है कि प्रत्यर्थी याची को अलग करने और प्रत्यर्थी संख्या 5 को नियुक्त करने के लिए कितनी अधिक जल्दबाजी में थे । इस प्रकार की कार्यवाही युक्तियुक्तता और ऋजुता के परीक्षण में खरी नहीं उतर सकती, इसलिए, संविधान के अनुच्छेद 14 की भावना का उल्लंघन हुआ । वर्तमान मामले में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अतिक्रमण पूर्णतया स्पष्ट है, जैसी कि इसमें इसके ऊपर विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है और निर्दिष्ट किया गया है । जब प्रत्यर्थियों ने शक्तियों का प्रयोग मनमाने तरीके से और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अतिक्रमण में किया है, तो संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग अपेक्षित है । खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् के प्राधिकारीगण कानून से ऊपर होने का दावा नहीं कर सकते, उनके द्वारा किए जाने वाले कामकाज विधि की परिधि के भीतर होने चाहिए और उनकी कार्यवाही ऋजुता और तर्कसंगतता की कसौटी पर खरी उतरनी चाहिए । यदि आदेश मनमानेपूर्ण तरीके में पारित किए जाएंगे, तो इसका अर्थ यह होगा कि उनके पास किसी भी प्रकार से वह करने की शक्ति है, जिसकी अनुज्ञा किसी अन्य को नहीं दी जा सकती । समस्त कारणों और ऊपर वर्णित तथ्यों और विधि पर विचार करते हए तारीख 1 मई, 2018 का रद्दकरण का आक्षेपित आदेश मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है और उसके आवश्यक परिणामस्वरूप तारीख 2 मई, 2018 को जारी की गई नई

सूचना और तारीख 23 मई, 2018 को प्रत्यर्थी संख्या 5 की अभिकर्ता के रूप में नियुक्ति भी मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है, अतः अभिखंडित की जाती है । (पैरा 27, 29, 30, 28 और 31)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2013] (2013) 5 एस. सी. सी. 470 :
राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास और निवेश निगम और एक अन्य बनाम **डायमण्ड एण्ड जेम डवलपमेंट कारपोरेशन और एक अन्य** ; 17

[2013] (2013) 5 एस. सी. सी. 252 :
कलिंग माइनिंग कारपोरेशन बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 24

[2012] (2012) 8 एस. सी. सी. 216 :
मिशीगेन रबर (इंडिया) लिमिटेड बनाम **कर्नाटक राज्य और अन्य** ; 21

[2006] (2006) 13 एस. सी. सी. 382 :
नगर निगम, मेरठ बनाम **अल-फहीम मीट एक्सपोर्ट्स (प्रा.) लिमिटेड और अन्य** ; 16

[2003] (2003) 2 एस. सी. सी. 107 :
हरबंस लाल साहनिया और एक अन्य बनाम **इंडियन आयल कारपोरेशन लिमिटेड और अन्य** ; 27

[2002] (2002) 1 एस. सी. सी. 216 :
बिहार राज्य और अन्य बनाम **जैन प्लास्टिक एण्ड केमिकल्स लिमिटेड** ; 18

[1996] (1996) 3 एस. सी. सी. 364 :
स्टेट बैंक आफ पटियाला और अन्य बनाम **एस. के. शर्मा** । 19

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2018 की रिट याचिका संख्या 285.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची/अपीलार्थी की ओर से	श्री एस. सिंह
प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 की ओर से	श्री बी. भट्टाचारजी
प्रत्यर्थी सं. 5 की ओर से	सर्वश्री एच. एस. थंगख्यू (वरिष्ठ अधिवक्ता) और साथ में पी. नोंगब्री

निर्णय

1. याची ने अभिखंडित किए जाने के प्रयोजनार्थ निम्नलिखित प्रार्थना की है :–

(i) तारीख 1 मई, 2018 का आक्षेपित आदेश, जिसकी संख्या डीसी.आरबीएफ/XXII(T)184/2014-2018/102 है, के निबंधनों के अनुसार प्रत्यर्थी संख्या 4 जो शिलांग स्थित खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् के व्यापार इत्यादि का भारसाधक कार्यकारणी सदस्य है, ने अभिकर्ता के रूप में याची की नियुक्ति को निरस्त कर दिया है और तारीख 30 मार्च, 2016 के करार विलेख को भी रद्द कर दिया है ;

(ii) प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा जारी की गई तारीख 2 मई, 2018 के निविदा आमंत्रण की सूचना ;

(iii) खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् के सदस्य के रूप में प्रत्यर्थी संख्या 5 को नियुक्त करने वाले तारीख 23 मई, 2018 के पत्र और उसी तारीख के करार ; और

(iv) तारीख 30 मार्च, 2016 के नियुक्ति आदेश और उसी तारीख को निष्पादित करार के मतावलंबन में अभिकर्ता के रूप में कार्य करने के लिए याची को अनुज्ञा प्रदान किए जाने हेतु प्रत्यर्थियों को निर्देशित किए जाने के लिए प्रार्थना की है ।

2. खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् को खासी हिल्स आटोनोमस जिला से संबंधित जनजातियों से संबंधित मामलों के प्रशासन के लिए संविधान की छठी अनुसूची के अधीन स्थापित किया गया है । छठी अनुसूची के पैरा 10 के अधीन खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् ने विनियम विरचित किए अर्थात् "1954 के खासी हिल्स स्वायत्त जिला (गैर

जनजातियों द्वारा व्यापार) विनियम परिषद्" जो अनिवार्य रूप से खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् की क्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर गैर जनजातियों द्वारा व्यापार को विनियमित किए जाने को उपबंधित करते हैं ।

3. गैर जनजातीय व्यापारियों द्वारा व्यापार की पहचान किए जाने/ उसका पता लगाए जाने और जिला परिषद् की अधिकारिता के भीतर कारबार संचालित किए जाने के लिए खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् ने अभिकर्ताओं की नियुक्ति के लिए निविदाएं आमंत्रित करते हुए तारीख 22 फरवरी, 2016 की सूचना जारी की । गैर जनजातीय व्यापारियों द्वारा किए जा रहे अवैध व्यापार का पता लगाए जाने के प्रयोजनार्थ एक अभिकर्ता की नियुक्ति के लिए याची की निविदा स्वीकार हो गई इसलिए, उसको अभिकर्ता के रूप में नियुक्त कर दिया गया जिसकी सूचना उसको तारीख 30 मार्च, 2016 को प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा दे दी गई । नियमों और शर्तों/मार्गदर्शक सिद्धांतों के निबंधनों के सामंजस्य में प्रत्यर्थी संख्या 3 और याची द्वारा एक करार निष्पादित किया गया । वे नियम और शर्तें, जिनको सहमति प्रदान की गई, के अनुसार याची को अभिकर्ता के रूप में परिषद् को प्रतिवर्ष 15,05,000/- रुपए (पन्द्रह लाख पांच हजार रुपए) का संदाय करना था और उसको यह स्वतंत्रता थी कि वह उक्त रकम का संदाय या तो एकमुश्त कर दे या बारह मासिक किस्तों में कर दे ।

4. श्री मेयंतिस मालोट, जिसको पहले अभिकर्ता के रूप में नियुक्त किया गया था, ने तारीख 30 मार्च, 2016 और 1 मार्च, 2016 के आदेशों द्वारा खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् की कार्यकारिणी समिति के आदेशों को चुनौती देते हुए 2016 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 113 फाइल की जिसका शीर्षक "मेयंतिस मालोट बनाम खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् और अन्य" था, जिसके निबंधनों के अनुसार उसके अभिकरण को समाप्त कर दिया गया और रिट याचिका को खारिज कर दिया गया । अतः अभिकर्ता के रूप में याची की स्थिति में कोई व्यवधान उत्पन्न नहीं हुआ ।

5. प्रत्यर्थियों का दावा है कि उन्हें याची के विरुद्ध कुछ शिकायतें प्राप्त हुई थीं और इसके अतिरिक्त याची ने 15,05,000/- रुपए (पन्द्रह लाख पांच हजार रुपए) के वार्षिक अधिशुल्क को भी जमा नहीं किया था, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी संख्या 3 ने तारीख 16 अप्रैल, 2018 को कारण बताओ सूचना जारी की जिसके द्वारा याची को संसूचित किया गया कि (i) खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् की अधिकारिता के भीतर चलने

वाले वाणिज्यिक यातायात वाहनों से सत्यापन शुल्क के रूप में अत्यधिक शुल्क का संग्रह किए जाने के संबंध में अनेक शिकायतें प्राप्त हुई है ; (ii) याची उन नियमों और शर्तों का पालन करने में विफल रहा है जो तारीख 30 मार्च, 2016 के करार में अधिकथित हैं और ; (iii) याची की कार्यवाही के कारण राष्ट्रीय राजमार्गों और उप-मार्गों पर यातायात में भीड़भाड़ की स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसके परिणामस्वरूप जनसामान्य को असुविधा का सामना करना पड़ रहा है और इसके अतिरिक्त यह खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् के हितों के भी प्रतिकूल है ।

6. उपरोक्त स्थिति को ध्यान में रखते हुए याची से कारण बताओ सूचना की प्राप्ति के सात दिनों के भीतर लिखित में इस बाबत कारण स्पष्ट करने के लिए कहा गया है कि करार विलेख और अभिकर्ता के रूप में उसकी नियुक्ति आदेश को क्यों न रद्द कर दिया जाए । याची ने इस कारण बताओ सूचना का उत्तर तारीख 23 अप्रैल, 2018 को दिया जिसमें उसने समस्त आरोपों से इनकार किया है और इस बात का दावा भी किया है कि उसने करार विलेख के किसी भी नियम और शर्तों का अतिक्रमण नहीं किया है । प्रत्यर्थी संख्या 3 ने तारीख 1 मई, 2018 को उक्त करार को समाप्त किए जाने का आदेश जारी किया जिसमें उन्होंने निम्नलिखित बातों का उल्लेख किया :–

> "(i) खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् को इस बाबत अनेक शिकायतें प्राप्त हुई हैं कि याची खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् की अधिकारिता क्षेत्र के भीतर चलने वाले वाणिज्यिक यातायात वाहनों से अत्यधिक सत्यापन शुल्क एकत्रित कर रहा है ;
>
> (ii) जबकि, याची की कार्यवाही राष्ट्रीय राजमार्गों और उसके साथ संलग्न मार्गों पर अत्यधिक यातायात के कारण होने वाली भीड़भाड़ को कम करने के बाबत है जिसके कारण जनसामान्य को अत्यधिक असुविधा का सामना करना पड़ रहा था और जो परिषद् के हितों के भी प्रतिकूल था ;
>
> (iii) याची ने समुचित अभिलेख व्यवस्थित नहीं किए हैं और वह काउंसिल को मासिक रिपोर्टें प्रस्तुत करने में भी असफल रहा है और इस प्रकार उसने तारीख 30 मार्च, 2016 के करार विलेख के नियमों और शर्तों का उल्लंघन किया है ;
>
> (iv) जबकि, याची अनेक सूचनाओं के बावजूद वर्ष 2017-18

के बाबत वार्षिक प्रीमियम का संदाय करने में विफल रहा है जो तारीख 30 मार्च, 2016 के करार विलेख में अधिकथित नियमों और शर्तों का जानबूझकर किया गया अतिक्रमण है ;

(v) यह भी उल्लेख किया गया है कि तारीख 23 अप्रैल, 2018 के कारण बताओ प्रत्युत्तर में याची द्वारा दी गई दलीलों के परिशीलन के पश्चात् उनको संतोषजनक नहीं पाया गया और उनको स्वीकार नहीं किया गया । इसलिए, वर्ष 2017-18 के बाबत वार्षिक प्रीमियम के संदाय में चूक और काउंसिल के समक्ष मासिक रिपोर्टें प्रस्तुत न किए जाने के कारण करार की तारीख में परिवर्तन स्वीकार्य नहीं था । इसलिए, करार के नियमों और शर्तों के पालन में और विशेष रूप से वार्षिक प्रीमियम के संदाय में और मासिक रिपोर्टों को प्रस्तुत किए जाने में याची की असफलता के कारण, कार्यकारिणी समिति ने अभिकर्ता के रूप में उसकी नियुक्ति आदेश और तारीख 30 मार्च, 2016 के करार विलेख को निरस्त और समाप्त करने का निर्णय लिया है ।"

7. प्रत्यर्थी संख्या 3 ने तारीख 23 मई, 2018 को पुलिस के उप-आयुक्तों/अधीक्षकों को संसूचित किया कि अभिकर्ता के रूप में याची की नियुक्ति को रद्द कर दिया गया है और खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् ने श्री डोमिनिक स्यूटिंग (प्रत्यर्थी संख्या 5) को गैर जनजातीय व्यापारियों के वाणिज्यिक वाहनों द्वारा की जा रही अवैध क्षरण का पता लगाए जाने/उसकी पहचान किए जाने और साथ ही साथ तीन वर्षों की अवधि के लिए खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् की अधिकारिता के भीतर अपराधों के समाधान के प्रयोजनार्थ अभिकर्ता के रूप में नियुक्त कर दिया है ।

8. याची ने अभिकर्ता के रूप में उसकी नियुक्ति के रद्दकरण और प्रत्यर्थी संख्या 5 की नियुक्ति से व्यथित होकर 2008 की सिविल याचिका संख्या 212 फाइल की जिसमें यह दलील दी गई कि उसकी नियुक्ति का रद्दकरण अवैध और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है । इसके अतिरिक्त, प्रत्यर्थियों ने प्रत्यर्थी संख्या 5 को अभिकर्ता के रूप में नियुक्त करते हुए कोई निविदा सूचना जारी नहीं की किन्तु जब खंडन शपथपत्र फाइल किया गया, तो याची को ज्ञात हुआ कि निविदा सूचना जारी की जा चुकी है और प्रत्यर्थी संख्या 3 और 5 द्वारा करार भी निष्पादित किया जा चुका है । उपरोक्त तथ्यों को सम्मुख रखे जाने पर याची के विद्वान्

काउंसेल को तारीख 7 अगस्त, 2018 के आदेश द्वारा रिट याचिका वापस लिए जाने की अनुज्ञा इस स्वतंत्रता के साथ प्रदान कर दी गई वे नई याचिका फाइल कर सकते हैं । तत्पश्चात, हमारे समक्ष नई याचिका फाइल की गई है जिसमें उक्त निविदा सूचना और साथ ही करार को चुनौती दी गई है ।

9. याची के विद्वान् काउंसेल की दलील यह है कि प्रत्यर्थी- खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् किसी न किसी बहाने अभिकर्ता के रूप में याची को हटाने पर अमादा थी ताकि प्रत्यर्थी संख्या 5 को नियुक्त किया जा सके, जो उन्होंने कर भी दिया किन्तु उनके द्वारा किया गया यह कार्य विधि और न्याय की पूर्ण अवज्ञा है । उन्होंने इस दलील के समर्थन में निवेदन किया कि याची को सम्पूर्ण प्रतियोगी का अवसर देने के पश्चात् अभिकर्ता के रूप में नियुक्त किया गया है और स्वीकृतः करार निष्पादित किया गया है । काउंसिल को यह शक्ति प्राप्त है कि वह अभिकर्ता के रूप में याची की नियुक्ति को रद्द कर सके यदि याची/अभिकर्ता करार के खंड 14 में समाविष्ट शर्तों के अध्यधीन रहते हुए किन्हीं या सभी नियमों और शर्तों का अनुपालन करने में विफल रहता है और वह उन नियमों और शर्तों/मार्गदर्शक सिद्धांतों, जो निविदा सूचना के भाग हैं, की शर्त 15 के अध्यधीन है । दोनों ही खंडों और शर्तों का पालन नहीं किया गया है । उन्होंने अपनी इस दलील के समर्थन में तारीख 30 मार्च, 2016 के करार के सुसंगत खंड 14 को उद्धृत किया :–

> "14. काउंसिल को अभिकर्ता को तीन माह की पूर्व सूचना और सुने जाने का पर्याप्त अवसर देने के पश्चात् करार को रद्द करने की शक्ति होगी यदि अभिकर्ता उपरोक्त किन्हीं या सभी नियमों और शर्तों का पालन करने में विफल रहता है ।"

10. अभिकर्ता की नियुक्ति के संबंध में शिलांग स्थित खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् की कार्यकारिणी समिति के कार्यालय द्वारा जारी नियमों और शर्तों/मार्गदर्शक सिद्धांतों की सुसंगत शर्त 15 को भी नीचे उद्धृत किया गया है :–

> "15. काउंसिल को अभिकर्ता को सुनवाई का पर्याप्त अवसर प्रदान करने के पश्चात् करार को रद्द करने की शक्ति प्राप्त होगी, यदि अभिकर्ता उपरोक्त किन्हीं या सभी नियमों और शर्तों के अनुपालन में विफल रहता है ।"

11. स्वीकृततः, प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा तारीख 16 अप्रैल, 2018 को एक सूचना जारी की गई है जिसके द्वारा याची से सात दिनों के भीतर लिखित में इस बाबत कारण दर्शित किए जाने की अपेक्षा की गई कि अभिकर्ता के रूप में उसकी नियुक्ति को क्यों न रद्द कर दिया जाए जिसके उत्तर में याची ने समस्त आरोपों से इनकार किया । खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् ने कोई भी जांच संचालित किए बिना तारीख 1 मई, 2018 का आक्षेपित रद्दकरण आदेश जारी कर दिया है जिससे यह दर्शित होता है कि प्रत्यर्थियों ने अभिकर्ता की नियुक्ति को शासित करने वाले नियमों और शर्तों/मार्गदर्शक सिद्धांतों और करार के खंड 14 का प्रकट रूप से उल्लंघन करते हुए निर्णय लिया है । खंड 14 के अनुसार अपेक्षा यह है कि अभिकर्ता को तीन माह की पूर्व सूचना और सुने जाने का पर्याप्त अवसर दिया जाए । इसके बजाय प्रत्यर्थियों ने याची को सात दिनों का समय दिया और उसको सुने जाने का पर्याप्त अवसर प्रदान नहीं किया । सुने जाने का अवसर प्रदान किए जाने की बात क्या की जाए, कोई जांच भी संचालित नहीं कराई गई । जब तक कि इन शिकायतों का प्राप्त किया जाना और याची को उनकी प्रतियां प्रदान किया जाना, ताकि याची उनका खंडन करने के समर्थ हो सके और तत्पश्चात् जांच संचालित किया जाना, दर्शित नहीं किया जाता, मात्र यह कहना पर्याप्त नहीं है कि अत्यधिक शुल्क के संग्रहण के संबंध में शिकायतें प्राप्त हुई थीं । करार के खंड 14 के निबंधनों के अनुसार तीन माह की पूर्व सूचना और सुने जाने का पर्याप्त अवसर करार को रद्द किए जाने की पुरोभाव्य शर्त है । इसके बजाय, प्रत्यर्थियों द्वारा दिखायी गई हड़बड़ी से यह दर्शित होता है कि वे याची को हटाना चाहते थे और प्रत्यर्थी संख्या 5 को उसके स्थान पर रखना चाहते थे ।

12. याची के विद्वान् काउंसेल की यह दलील कि याची को सुने जाने के उसके अधिकार से वंचित किया गया है और अभिकर्ता के रूप में उसकी नियुक्ति को बिना किसी साक्ष्य के रद्द कर दिया गया है, पर विचार किया जाना उचित प्रतीत होता है ।

13. याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा एक अन्य दलील भी दी गई है कि याची ने कभी भी वार्षिक प्रीमियम के संदाय से इनकार नहीं किया, तथापि, उसने प्राधिकारियों के समक्ष यह कथन किया है कि रिट याचिका, जो उसके पहले वाले अभिकर्ता द्वारा फाइल की गई, के लम्बित रहने और जिला प्राधिकारियों के मध्यक्षेप के कारण वह अभिकर्ता के रूप में कार्य नहीं कर सका और इसलिए तीन वर्ष की अनुध्यात अवधि की गणना

2016 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 113 में पारित निर्णय की तारीख अर्थात् तारीख 27 सितम्बर, 2016 से किए जाने की अनुज्ञा प्रदान की जानी चाहिए, किन्तु उसके इस निवेदन को प्रत्यर्थियों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया । प्रत्यर्थियों को (रिट याचिका में निर्णय पारित किए जाने की तारीख से) याची को करार के खंड (2) के अनुसार वर्ष 2017-18 के लिए वार्षिक प्रीमियम जमा किए जाने के बाबत समय प्रदान करना चाहिए था ।

14. उसने अपने शपथपत्र में विनिर्दिष्ट रूप से अभिकथित किया है कि वह सदैव ही वार्षिक प्रीमियम का संदाय करने के लिए तैयार था किन्तु उसको तारीख 30 मार्च, 2016 के करार के निबंधनों के अनुसार कार्य करने की अनुज्ञा प्रदान नहीं की गई और इस तथ्य को जिला काउंसिल के संज्ञान में लाया गया था, किन्तु जिला काउंसिल ने मामले में कोई कार्यवाही करने के बजाय उसकी नियुक्ति को यह उल्लेख करते हुए अचानक रद्द कर दिया कि याची ने वर्ष 2017-18 के लिए वार्षिक प्रीमियम जमा नहीं किया है । यदि प्रत्यर्थियों ने जांच की होती या करार के खंड 14 और नियमों और शर्तों/मार्गदर्शक सिद्धांतों की शर्त 15 के अनुसार उसको सुने जाने का युक्तिसंगत अवसर प्रदान किया होता, जैसा कि ऊपर उद्धृत किया गया है, तो याची वर्ष 2017-18 के लिए वार्षिक प्रीमियम जमा कर देता । उन्होंने आगे दलील दी कि प्रत्यर्थी संख्या 5 को सुविधा प्रदान करने का प्रत्यर्थियों का आशय पूर्णतया स्पष्ट है और अभिलेखों द्वारा समर्थित है । याची की नियुक्ति को तारीख 1 मई, 2018 को समाप्त किया गया था, तारीख 2 मई, 2018 को निविदा सूचना जारी की गई थी किन्तु उसको समाचारपत्र में प्रकाशित नहीं किया गया था । तत्पश्चात्, यह दर्शित किया गया है कि पांच व्यक्तियों ने निविदा कार्यवाहियों में भाग लिया था जिसमें प्रत्यर्थी संख्या 5 सफल हुआ था और उसको तारीख 23 मई, 2018 को नियुक्ति प्रदान कर दी गई थी । निविदा सूचना को किसी भी समाचारपत्र में प्रकाशित क्यों नहीं किया गया, यह निश्चित रूप से आश्चर्य का विषय है ।

15. इसके विरोध में फाइल किए गए शपथपत्र में प्रत्यर्थियों ने अभिकथित किया कि यद्यपि समाचारपत्र में निविदा सूचना को प्रकाशित किया जाना अपेक्षित नहीं है, फिर भी निविदा सूचना का प्रचार-प्रसार विभिन्न स्थानों और कार्यालयों में चस्पा किए जाने के द्वारा व्यापक रूप से किया गया था ।

16. प्रत्यर्थियों द्वारा की गई कार्यवाही सही नहीं प्रतीत होती चूंकि

उनको एक ही समय में दो प्रकार के कथन करने की इजाजत नहीं दी जा सकती । तारीख 22 फरवरी, 2016 की प्रथम निविदा सूचना, जिसके मतावलम्बन में याची की नियुक्ति की गई थी, के विज्ञापनों को दो समाचारपत्रों में प्रकाशित किया गया था और जिनकी प्रतियां याची को भेजी गई थीं, जबकि तारीख 2 मई, 2018 की निविदा सूचना प्रकाशनार्थ किसी भी समाचारपत्र को नहीं भेजी गई । इसके अतिरिक्त, चार जिलों से अर्हता प्राप्त व्यक्ति इस प्रक्रिया में भाग नहीं ले सके । केवल एक ही व्यक्ति ने भाग लिया, इससे यह प्रतीत होता है कि (निविदा सूचना का) उचित रूप से प्रचार-प्रसार नहीं किया गया । याची के विद्वान् काउंसेल ने इस संबंध में **नगर निगम, मेरठ** बनाम **अल-फहीम मीट एक्सपोर्ट्स (प्रा.) लिमिटेड और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलम्ब लिया । उक्त निर्णय का पैरा 18 सुसंगत है जिसे नीचे उद्धृत किया गया :–

> "18. अतः इस बाबत विधि स्पष्ट है कि सामान्यतया सरकार या सरकार के किसी अभिकरण द्वारा किए गए समस्त करारों को व्यापक प्रचलन वाले सुविख्यात समाचारपत्रों में विज्ञापन प्रकाशित किए जाने के द्वारा और केवल सार्वजनिक नीलामी या निविदाएं आमंत्रित किए जाने के द्वारा प्रदान किया जाना चाहिए ताकि सभी अर्हता प्राप्त व्यक्तियों को नीलामी में बोली लगाने के अवसर प्राप्त हों और पूर्ण पारदर्शिता का पालन हो । हमारे विचार में किसी भी लोकतंत्र, जहां सामान्य जनता ही सर्वोच्च होती है, में यह एक आवश्यक अपेक्षा होती है कि समस्त शासकीय कार्य लोक हित में किए जाने चाहिए और ऐसी रीति में किए जाने चाहिए जिससे जनसामान्य में विश्वास की भावना बनी रहे ।"

17. प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि विवाद संविदात्मक प्रकृति का है और इसलिए संविदा से संबंधित विवाद को इस न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया जा सकता और न ही संविदा के निबंधनों को संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट अधिकारिता के माध्यम से परिवर्तित किया जा सकता है । उन्होंने इस संबंध में **राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास और निवेश निगम और एक अन्य** बनाम **डायमण्ड एण्ड जेम डवलपमेंट कारपोरेशन और एक अन्य**[2] वाले मामले में दिए गए निर्णय

---

[1] (2006) 13 एस. सी. सी. 382.

[2] (2013) 5 एस. सी. सी. 470.

का अवलंब लिया । किन्तु उक्त विनिश्चय प्रस्तुत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टि में रखते हुए याची के पक्षकथन की पुष्टि करता है । इस निर्णय के पैरा 21 को नीचे उद्धृत किया गया है :–

> "21. उपरोक्त को दृष्टि में रखते हुए यह स्पष्ट है कि न्यायालयों को सामान्यतया संविदात्मक बाध्यताओं के प्रवर्तन के प्रयोजनार्थ अपनी रिट अधिकारिता का प्रयोग नहीं करना चाहिए । परमादेश की रिट का प्राथमिक प्रयोजन अधिकारों को संरक्षण प्रदान करना है और उनको स्थापित करना है और विधि में विद्यमान सदृश्य अनिवार्य कर्तव्य को अधिरोपित करना है । इस अनुच्छेद को न्याय को प्रोन्नत किए जाने के प्रयोजनार्थ रूपांकित किया गया है (ex debito justitice = न्यायानुसार या अधिकारतः) । रिट प्रदान किया जाना या उससे इनकार किया जाना न्यायालय के विवेकाधिकार पर निर्भर करता है । रिट को तब तक प्रदान नहीं किया जा सकता जब तक कि इस बात को साबित नहीं कर दिया जाता कि याची का कोई विधिक अधिकार या प्रत्यर्थी का कोई विधिक कर्तव्य विद्यमान है । अतः रिट किसी विधिक अधिकार को सृजित किए जाने या उसको स्थापित किए जाने के प्रयोजनार्थ जारी नहीं की जा सकती, किन्तु किसी ऐसे अधिकार को प्रवर्तित किए जाने के प्रयोजनार्थ जारी की जा सकती है जिसको पहले ही स्थापित किया जा चुका है । न्यायालय को किसी रिट याचिका पर विचार करते समय विविध प्रकार की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उन अत्यावश्यक परिस्थितियों जो ऐसे विवेकाधिकार के प्रयोग की अपेक्षा करती हैं, रिट को प्रदान किए जाने या उसको प्रदान किए जाने से इनकार किए जाने और क्षति की प्रकृति और उसकी मात्रा, जो रिट को प्रदान किए जाने या प्रदान किए जाने से इनकार किए जाने के कारण होने की संभाव्यता है, के परिणामों को ध्यान रखते हुए अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करना चाहिए ।"

18. प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने पुनः **बिहार राज्य और अन्य** बनाम **जैन प्लास्टिक एण्ड केमिकल्स लिमिटेड**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया । इस मामले के तथ्य पूर्णतया भिन्न हैं । अतः, हमारे समक्ष मामले में लागू नहीं होते ।

---

[1] (2002) 1 एस. सी. सी. 216.

19. प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने इसके पश्चात् **स्टेट बैंक आफ पटियाला और अन्य** बनाम **एस. के. शर्मा**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया । उक्त निर्णय याची के पक्षकथन का समर्थन करता है क्योंकि याची ने यह दलील दी है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अतिक्रमण हुआ है चूंकि उसको निविदा सूचना के संबंध में लागू होने वाले नियमों और शर्तों/मार्गदर्शक सिद्धांतों की शर्त 15 और ऊपर उद्धृत करार के खंड 14 के निबंधनों के अनुसार समुचित अवसर प्रदान नहीं किया गया । यहां पर उक्त निर्णय के पैरा 28 को उद्धृत किया जाना लाभदायक होगा ।

> "28. ऊपर उद्धृत विनिश्चयों से एक बात स्पष्ट हो जाती है और वह यह है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को किसी एकनिष्ठ फार्मूला से नहीं बांधा जा सकता । जैसा कि रसेल **बनाम** ड्यूक आफ नौरफाक [(1949) 1 आल ई. आर. 109 = 65 टी. एल. आर. 225] वाले मामले में काफी समय पूर्व वर्ष 1947 में कहा गया है, ये सिद्धांत किसी पक्के सिद्धांत (Strgigle jacket formule) के अन्तर्गत नहीं रखे जा सकते । इनका उपयोजन प्रत्येक मामले के संदर्भ और तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है – देखें : मोहिन्दर सिंह गिल **बनाम** मुख्य निर्वाचन आयुक्त (1978) 1 एस. सी. सी. 405 = [1978] 2 एस. सी. आर. 272 । उद्देश्य यह है कि किसी व्यक्ति, जिसके अधिकार प्रभावित होने वाले हैं, को सुनवाई का उचित अवसर और उचित व्यवहार सुनिश्चित किया जाए, ए. के. राय **बनाम** भारत संघ (1982) 1 एस. सी. सी. 271 = [1982] एस. सी. आर. (क्रिमिनल) 152 । जैसा कि इस न्यायालय द्वारा ए. के. क्राइपक और अन्य **बनाम** भारत संघ और अन्य (1969) 2 एस. सी. सी. 262 वाले मामले में बताया गया है, (किसी पक्ष के अधिकारों को प्रभावित करने वाले) अर्ध-न्यायिक कार्यों और प्रशासनिक कार्यों के मध्य विभाजन रेखा अत्यधिक महीन होती है और लगभग अविभेद्य होती है एक ऐसा तथ्य जिस पर हाउस आफ लार्ड्स द्वारा काउंसिल आफ सिविल सर्विस यूनियन्स **बनाम** मिनिस्टर फार द सिविल सर्विस (1984) 3 आल ई. आर. 935 = (1984) 3 डब्ल्यू. एल. आर. 1174 = 1985 ए. सी. 374 एच. एल. वाले मामले में जोर दिया,

---

[1] (1996) 3 एस. सी. सी. 364.

जिसमें नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों और सुनवाई के उचित अवसर पर एक ही प्रकार से विचार किया गया । चाहे जो भी मामला हो, उचित सुनवाई का अवसर दिए जाने वाला बिन्दु महत्वपूर्ण है – प्रतिकूल रूप से प्रभावित होने वाले परीक्षण को लागू करते हुए, जैसा कि कहा जाता है – 'दोनों पक्षों को सुनो' के नियम का अतिक्रमण करने वाली प्रत्येक शिकायत का परीक्षण किया जाना चाहिए । वास्तव में, ऐसी भी परिस्थितियां हो सकती हैं जहां पूर्व सूचना/कोई सुनवाई नहीं की अपेक्षा का अननुपालन सम्पूर्ण कार्यवाही को विफल कर दे – जिसके परिणामस्वरूप लोकहित अत्यधिक प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो जाए । इसी कारणवश कुछ मामलों में नैसर्गिक न्याय के पर्याप्त अनुपालन के रूप में निर्णय के पश्चात् की जाने वाली सुनवाई के सिद्धांत को अन्तर्वलित किया गया अर्थात् लिबर्टी आयल मिल्स **बनाम** भारत संघ (1984) 3 एस. सी. सी. 465 । ऐसे भी मामले हो सकते हैं जिनमें लोक हित या राज्य की सुरक्षा का हित या इसी प्रकार के अन्य विचार 'दोनों पक्षो को सुनो' के नियम का पालन पूर्णतया अनुचित हो [जैसा कि अनुच्छेद 311(2) के परन्तुक के खंडों (ख) और (ग) द्वारा अनुध्यात परिस्थितियों में होता है] या ऐसी सामग्री का प्रकटीकरण करे जिसके आधार पर कोई विशेष कार्यवाही की जानी है । ऐसी अनेक परिस्थितियां हो सकती हैं जहां किसी के लिए इस बात की कल्पना किया जाना संभव न हो । हमारे ससम्मान विचार में निर्णीत मामलों से उद्भूत होने वाले सिद्धांतों को अनुशासनिक आदेशों और जांचों के संबंध में निम्नलिखित निबंधनों में अभिकथित किया जा सकता है : एक ऐसा विभेद जिसको नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत, दोनों पक्षों को सुनो और उक्त सिद्धांतों के पहलुओं के अतिक्रमण के मध्य किया जा सकता है । अन्य शब्दों में, 'कोई सूचना नहीं'/'कोई सुनवाई नहीं' और 'पर्याप्त सुनवाई नहीं' या अन्य शब्दों 'कोई अवसर नहीं' और 'पर्याप्त अवसर नहीं' के मध्य विभेद किया जाना है । उदाहरणस्वरूप – किसी ऐसे मामले पर विचार करते हैं जहां किसी व्यक्ति को सेवा से सुनवाई का कोई भी अवसर दिए बिना बर्खास्त कर दिया गया है [जैसे कि रिज **बनाम** बाल्डबिन : 1964 ए. सी. 40 = (1963) 2 आल ई. आर. 66 = (1963) 2 डब्ल्यू. एल. आर. 935 वाला मामला] । यह मामला प्रथम श्रेणी में आने वाले मामलों के

अन्तर्गत आता है और इस मामले में सेवा से बर्खास्तगी का आदेश अविधिमान्य या व्यर्थ होगा, यदि कोई भी पक्ष अभिव्यक्ति का प्रयोग करने का विकल्प चुनता है [केल्विन **बनाम** कार : 1980 ए. सी. 574 = (1979) 2 आल ई. आर. 440 = (1979) 2 डब्ल्यू. एल. आर. 755, पी. सी.] । किन्तु जहां किसी व्यक्ति को जांच अधिकारी की रिपोर्ट की प्रति उपलब्ध कराए बिना ही सेवा से बर्खास्त कर दिया गया हो (प्रबन्ध निदेशक, ई. सी. आई. एल. **बनाम** बी. करुणाकर : [(1993) 4 एस. सी. सी. 727 = 1993 एस. सी. सी. (एल. एण्ड एस.) 1184 = (1993) 25 ए. टी. सी. 704] या उसको साक्षी की प्रतिपरीक्षा करने का सम्यक् रूप से अवसर उपलब्ध कराए बिना ही सेवा से बर्खास्त कर दिया गया हो [के. एल. त्रिपाठी : (1984) 1 एस. सी. सी. 43 = (1984) एस. सी. सी. (एल. एण्ड एस.) 62], तो यह पश्चात्वर्ती कोटि – नैसर्गिक न्याय के उपरोक्त नियम के पहलू के अतिक्रमण – जिस मामले में आदेश की विधिमान्यता का परीक्षण प्रतिकूल प्रभाव पड़ने वाली कसौटी के आधार पर होगा अर्थात् क्या समस्त परिस्थितियों में संबद्ध व्यक्ति को सुनवाई का उचित अवसर प्रदान किया गया या नहीं – के अन्तर्गत आने वाला मामला होगा । उपरोक्त विनिश्चयों के प्रकाश में यह कहना सही नहीं होगा कि नैसर्गिक न्याय के पहलू के प्रत्येक अतिक्रमण या उक्त पहलू को सम्मिलित करने वाले प्रत्येक नियम के लिए पारित किया गया आदेश पूर्णतया व्यर्थ है और बिना किसी जांच के अपास्त किए जाने योग्य है । हमारे विचार में, **बी. करुणाकर** (उपरोक्त) वाले मामले में अंगीकृत दृष्टिकोण और परीक्षण सभी मामलों में लागू होने चाहिए । यहां यह शिकायत नहीं की गई है कि कोई सुनवाई नहीं की गई (कोई सूचना नहीं, कोई अवसर नहीं और कोई सुनवाई नहीं) किन्तु उचित सुनवाई प्रदान न किया जाना (अर्थात् पर्याप्त या पूर्ण सुनवाई) या जांच पर लागू होने वाले किसी प्रक्रियाजन्य नियम या अपेक्षा का अतिक्रमण ; शिकायत का परीक्षण यथापूर्वोक्त प्रतिकूल प्रभाव की कसौटी पर किया जाना चाहिए ।"

20. वर्तमान मामले में उपरोक्त विधि को लागू करते हुए यह सर्वथा स्पष्ट हो गया है कि याची को न तो उचित अवसर प्रदान किया गया और न ही उचित सुनवाई हुई । अभिकर्ता के रूप में याची की नियुक्ति और

साथ ही करार को लापरवाह तरीके से रद्द कर दिया गया है ।

21. याची के विद्वान् काउंसेल ने मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की उपरोक्त पृष्ठभूमि में इस रिट याचिका की पोषणीयता को चुनौती देते हुए **मिशीगेन रबर (इंडिया) लिमिटेड** बनाम **कर्नाटक राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया । इस निर्णय के पैरा 24 को इस मामले में अन्तर्वलित विवाद के प्रयोजनार्थ उद्धृत किया जा रहा है :–

> "24. इसलिए, किसी न्यायालय को निविदा या संविदात्मक मामलों मध्यक्षेप करने के पूर्व अपनी न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्तियों का प्रयोग करते हुए स्वयं से निम्नलिखित प्रश्न करने चाहिए –
>
> (i) क्या प्राधिकारियों द्वारा अंगीकृत प्रक्रिया या लिया गया विनिश्चय सद्भाविक है या किसी के पक्ष में आशयित है ; या क्या अंगीकृत प्रक्रिया या लिया गया विनिश्चय इतना अधिक मनमानापूर्ण और असंगत है कि न्यायालय यह कह सकता है, 'यह विनिश्चय ऐसा है कि युक्तिसंगत रूप से और सुसंगत विधि के अनुसार कार्य करने वाला कोई जिम्मेदार प्राधिकारी इस प्रकार का निर्णय नहीं ले सकता था' ? और
>
> (ii) क्या लोक हित प्रभावित हुआ है ?
>
> यदि उपरोक्त प्रश्नों के उत्तर नकारात्मक में हैं तो अनुच्छेद 226 के अधीन मध्यक्षेप नहीं किया जा सकता ।"

22. वर्तमान मामले में उपरोक्त परीक्षण को लागू करते हुए यह नितान्त रूप से स्पष्ट हो जाता है कि याची को अस्पष्ट आधारों पर और उसको सुनवाई का युक्तिसंगत अवसर प्रदान किए बिना निकाला गया है, जबकि तारीख 30 मार्च, 2016 के करार के खंड 14 के निबंधनों के अनुसार सुनवाई अनिश्चित काल के लिए स्थगित थी । करार के अन्तर्गत अभिकर्ता के रूप में उसकी नियुक्ति को तारीख 1 मई, 2018 को चुपचाप रद्द कर दिया गया, तारीख 2 मई, 2018 को बिना व्यापक प्रचार-प्रसार के निविदा सूचना जारी कर दी गई और उसको किसी भी समाचारपत्र में प्रकाशित नही किया गया जिसके परिणामस्वरूप जिला काउंसेल की

---

[1] (2012) 8 एस. सी. सी. 216.

अधिकारिता के अन्तर्गत आने वाले चार जिलों में से मात्र पांच व्यक्तियों ने निविदा में भाग लिया और तत्पश्चात् प्रत्यर्थी संख्या 5 को अभिकर्ता के रूप में नियुक्त कर दिया गया जिससे स्पष्टतः यह दर्शित होता है कि प्रत्यर्थी संख्या 5 का पक्ष लेने का आशय था । अभिकर्ता के रूप में याची की नियुक्ति और करार के रद्दकरण के लिए अंगीकृत पद्धति और तरीका पूर्णतया असंगत और मनमानापूर्ण प्रतीत होता है । जब ऐसा किया गया है तो न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग करते हुए इस न्यायालय द्वारा मध्यक्षेप किए जाने से इनकार नहीं किया जा सकता ।

23. प्रत्यर्थी संख्या 1 से 4 की कार्यवाही स्पष्ट, उचित, ईमानदारी से परिपूर्ण और निष्कपट होनी अपेक्षित थी । याची के विरुद्ध किसी शिकायत को दर्शित किए बिना मात्र यह कहना कि याची के विरुद्ध शिकायतें थीं और वह भी उन शिकायतों के संबंध में कोई जांच संचालित किए बिना, और तत्पश्चात् उन शिकायतों को न्यायालय में प्रस्तुत करने में विफल रहने से मात्र यह स्पष्ट होता है कि प्रत्यर्थियों ने याची को हटाने का पक्का निश्चय कर लिया था जो उन्होंने अत्यन्त मनमानेपूर्ण तरीके से किया ।

24. याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा **कलिंग माइनिंग कारपोरेशन** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया जाना निश्चित रूप से सुसंगत है । वर्तमान मामले के तथ्यों और पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए इस निर्णय का पैरा 62 सुसंगत है जिसको नीचे उद्धृत किया गया :–

> "62. अब यह सुस्थापित हो चुका है कि भारत सरकार द्वारा पारित प्रशासनिक कार्यवाही आदेशों/अर्धन्यायिक आदेशों का न्यायिक पुनर्विलोकन मात्र विधि की त्रुटियों या मूल प्रक्रियाजन्य अपेक्षाओं, जिनके कारण घोर अन्याय कारित हो सकता है, के शुद्धिकरण तक सीमित है । जब प्राधिकारी द्वारा निकाले गए निष्कर्ष साक्ष्य पर आधारित होते हैं तो उनका पुनर्मूल्यांकन न्यायालय द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्तियों का प्रयोग करते हुए नहीं किया जा सकता । न्यायालय पुनर्विलोकन की शक्तियों का प्रयोग करते हुए किसी अपा ल न्यायालय की शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जा सकता । यह मात्र उन मामलों में होता है जहां या तो प्रशासनिक प्राधिकारी/अर्धन्यायिक प्राधिकारी द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष किसी

[1] (2013) 5 एस. सी. सी. 252.

साक्ष्य पर आधारित नहीं होते या इतने अधिक विधिविरुद्ध हैं कि उपलब्ध सामग्री के आधार पर कोई भी युक्तिसंगत व्यक्ति ऐसे निष्कर्ष पर नहीं पहुंच सकता और ऐसे विनिश्चय में मध्यक्षेप करने में न्यायालय न्यायानुमत होगा । न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि विनिश्चय करने की प्रक्रिया में अत्यधिक सीमित होती है और यह मात्र विनिश्चय तक सीमित नहीं होती, चाहे वह विनिश्चय त्रुटिपूर्ण ही प्रतीत क्यों न हो ।" (अधोरेखांकन पर बल दिया गया)

25. अभिलेख से बिल्कुल ही स्पष्ट है कि याचियों के विरुद्ध शिकायतों के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा निकाले गए निष्कर्ष किसी भी साक्ष्य पर आधारित नहीं हैं इसलिए, अभिकर्ता के रूप में याची की नियुक्ति की समाप्ति और उसके करार के रद्दकरण के संबंध में विनिश्चय करने की प्रक्रिया अशुद्ध होने के कारण न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि के अन्तर्गत आती है । इसलिए, इस न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों का अवलंब लेते हुए किया गया मध्यक्षेप अपेक्षित है ।

26. इसके पश्चात्, याची के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि उनके विद्यमान अधिकार का मनमानेपूर्ण ढंग से अतिक्रमण किया गया है जिससे कि प्रत्यर्थी संख्या 5 को लाभ दिए जाने के प्रयोजनार्थ मार्ग प्रशस्त किया जा सके । अभिकर्ता के रूप में याची की तारीख 1 मई, 2018 को की गई नियुक्ति को समाप्त किया जा चुका है, तारीख 2 मई, 2018 को नई निविदा सूचना जारी की जा चुकी है और तारीख 23 मई, 2018 को प्रत्यर्थी संख्या 5 को अभिकर्ता के रूप में नियुक्त किया जा चुका है । इस प्रकार जारी की गई निविदा सूचना त्रुटिपूर्ण है क्योंकि उसका व्यापक रूप से प्रचार-प्रसार नहीं किया गया और उसके बाबत किसी भी समाचारपत्र में प्रकाशन नहीं किया गया । उन्होंने अपने निवेदन के समर्थन में **राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास और निवेश निगम और एक अन्य** बनाम **डायमंड एण्ड जेम्स डवलपमेंट कारपोरेशन लिमिटेड और एक अन्य** (उपरोक्त) वाले मामले का अवलंब लिया जिसके पैरा 21 को ऊपर पहले ही उद्धृत किया जा चुका है ।

27. याची के विद्वान् काउंसेल ने प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल की इस दलील कि याची के पास नुकसान के आनुकल्पिक अनुतोष के लिए वाद फाइल करने का अवसर है, का उत्तर देते हुए दलील दी कि आनुकल्पिक अनुतोष की उपलब्धता संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उपलब्ध शक्तियों के प्रयोग के लिए कोई आत्यंतिक वर्जन नहीं है । उन्होंने

इस संबंध में **हरबंस लाल साहनिया और एक अन्य** बनाम **इंडियन आयल कारपोरेशन लिमिटेड और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया । इस निर्णय का पैरा 7 सुसंगत है जिसे नीचे उद्धृत किया गया :–

> "7. जहां तक उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचार का संबंध है, कि अपीलार्थियों को माध्यस्थम् खंड का आश्रय लेते हुए अनुतोष उपलब्ध था और इसलिए अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य थी, यह मताभिव्यक्ति किया जाना पर्याप्त होगा कि आनुकल्पिक अनुतोष की उपलब्धता द्वारा रिट अधिकारिता के अपवर्जन का नियम विवेकाधिकार का नियम है और अनिवार्यता पर आधारित नियम नहीं है । किसी समुचित मामले में, उच्च न्यायालय आनुकल्पिक अनुतोष के उपलब्ध होने पर भी अपनी रिट अधिकारिता का प्रयोग कम से कम तीन आकस्मिताओं में कर सकता है : (i) जहां रिट याचिका के माध्यम से किसी मूल अधिकार के प्रवर्तन की ईप्सा की गई है; (ii) जहां नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को लागू किए जाने में विफलता हुई या, (iii) जहां आदेश या कार्यवाहियां पूर्णतया बिना अधिकारिता के है या अधिनियम की अधिकारिता को ही चुनौती दी गई । देखें : व्हिर्लपूल कारपोरेशन **बनाम** रजिस्ट्रार आफ ट्रेडमार्क [(1998) 8 एस. सी. सी. 1] । वर्तमान मामले में प्रथम दो आकस्मिकताएं आकर्षित होती हैं । इसके अतिरिक्त, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, याची की डीलरशिप, जो उसका जीवन-यापन का साधन है, को एक असंगत और अविद्यमान कारणवश समाप्त कर दिया गया है । ऐसी परिस्थितियों में हम यह महसूस करते हैं कि अपीलार्थियों को उच्च न्यायालय द्वारा ही अनुतोष मंजूर किया जाना चाहिए बजाय इसके कि उनको माध्यस्थम् कार्यवाहियां आरम्भ किए जाने की आवश्यकता बताते हुए वापस लौटा दिया जाए ।"

28. वर्तमान मामले में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अतिक्रमण पूर्णतया स्पष्ट है, जैसी कि इसमें इसके ऊपर विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है और निर्दिष्ट किया गया है । जब प्रत्यर्थियों ने शक्तियों का प्रयोग मनमाने तरीके से और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अतिक्रमण में किया है, तो

---

[1] (2003) 2 एस. सी. सी. 107.

संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग अपेक्षित है । खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् के प्राधिकारीगण कानून से ऊपर होने का दावा नहीं कर सकते, उनके द्वारा किए जाने वाले कामकाज विधि की परिधि के भीतर होने चाहिए और उनकी कार्यवाही ऋजुता और तर्कसंगतता की कसौटी पर खरी उतरनी चाहिए । यदि आदेश मनमानेपूर्ण तरीके में पारित किए जाएंगे, तो इसका अर्थ यह होगा कि उनके पास किसी भी प्रकार से वह करने की शक्ति है, जिसकी अनुज्ञा किसी अन्य को नहीं दी जा सकती ।

29. यदि याची के विरुद्ध शिकायतें थीं तो उन शिकायतों की जांच क्यों नहीं की गई ; उन्होंने कोई जांच क्यों नहीं की, यही वह मुख्य प्रश्न है जिसका उत्तर दिया जाना अपेक्षित है । प्रत्यर्थी संख्या 3 ने तारीख 16 अप्रैल, 2018 को कारण बताओ नोटिस यह उल्लेख करते हुए जारी किया कि अत्यधिक शुल्क के संग्रहण के संबंध में अनेक शिकायतें प्राप्त हुई हैं और याची ने करार के नियमों और शर्तों का अतिक्रमण किया है । उक्त कारण बताओ नोटिस ऐसे तरीके में प्रारूपित किया गया है कि इस बात का कोई भी स्पष्ट संकेत नहीं दिया गया है कि याची को किस बात का उत्तर देना है । किन्तु इसके बावजूद याची ने उन प्रश्नों, जिनका उत्तर कारण बताओ नोटिस के निबंधनों के अनुसार दिया जाना अपेक्षित था, का उत्तर समस्त आरोपों से इनकार करते हुए सात दिनों के भीतर दे दिया । जब याची द्वारा ऐसा किया गया तो प्रत्यर्थियों को जांच संचालित करने से किसने रोका था कि वे तारीख 1 मई, 2018 का समाप्ति का आदेश पारित करने के लिए विवश हो गए ।

30. संविदा को शासित करने वाले नियमों और शर्तों/मार्गदर्शक सिद्धांतों की शर्त 15 और करार का खंड 14, जो तीन माह का पूर्व नोटिस दिए जाने और सुनवाई का पर्याप्त अवसर प्रदान किए जाने के लिए, यह उपबंधित करते हैं का पूर्णतया अनदेखा किया गया जिससे इस बात का स्पष्ट रूप से पता चलता है कि प्रत्यर्थियों ने कितने मनमानेपूर्ण ढंग से कार्य किया है । पुनः अभिकर्ता के रूप में तारीख 1 मई, 2018 को याची की नियुक्ति रद्द किए जाने के पश्चात् तारीख 2 मई, 2018 को नई निविदा सूचना जारी किया जाना और तत्पश्चात् प्रत्यर्थी संख्या 5 को तारीख 23 मई, 2018 को नियुक्त किया जाना स्वयमेव यह दर्शित करता है कि प्रत्यर्थी याची को अलग करने और प्रत्यर्थी संख्या 5 को नियुक्त करने के लिए कितनी अधिक जल्दबाजी में थे । इस प्रकार की कार्यवाही

युक्तियुक्तता और ऋजुता के परीक्षण में खरी नहीं उतर सकती, इसलिए, संविधान के अनुच्छेद 14 की भावना का उल्लंघन हुआ ।

31. समस्त कारणों और ऊपर वर्णित तथ्यों और विधि पर विचार करते हुए तारीख 1 मई, 2018 का रद्दकरण का आक्षेपित आदेश मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है और उसके आवश्यक परिणामस्वरूप तारीख 2 मई, 2018 को जारी की गई नई सूचना और तारीख 23 मई, 2018 को प्रत्यर्थी संख्या 5 की अभिकर्ता के रूप में नियुक्ति भी मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है, अतः अभिखंडित की जाती है । चूंकि प्रत्यर्थी संख्या 5 तारीख 23 मई, 2018 के आदेश के मतावलम्बन में अभिकर्ता के रूप में उसकी नियुक्ति की तारीख से कार्य कर रहा है, प्रत्यर्थी संख्या 3 उस रकम का निर्धारण करेगा जो उसने अभिकर्ता के रूप में कार्यरत अवधि के लिए अनुपातिक रूप से जमा किया है । अभिकर्ता के रूप में याची की स्थिति को उसके द्वारा 15,05,000/- रुपए (पंद्रह लाख पांच हजार रुपए) के वार्षिक प्रीमियम से तारीख 1 मई, 2018 से आज तक की शेष अवधि के लिए अनुपातिक रूप से रकम को घटाए जाने के पश्चात् जमा किए जाने की शर्त पर वर्ष 2017-18 के लिए पुनर्स्थापित किया जाता है ।

32. प्रत्यर्थी-खासी हिल्स स्वायत्त जिला परिषद् को याची के विरुद्ध शिकायतों, यदि कोई हों, के संबंध में जांच करने की स्वतंत्रता होगी, यदि वे ऐसा करना चाहे, किन्तु इस प्रक्रिया में उनको करार के खंड 14, जैसाकि ऊपर उद्धृत किया गया है, का पालन तब तक करना होगा जब तक कि जांच समाप्त न हो जाए । यदि प्रत्यर्थी याची के विरुद्ध किसी शिकायत के आधार पर और किसी नियम और शर्त के अतिक्रमण के आधार पर जांच संचालित किए जाने के विकल्प को चुनते हैं, तो याची को अभिकर्ता के रूप में कार्य करते रहने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा जब तक कि जांच, यदि संचालित की जाती है, के आधार पर कोई विनिश्चय न हो जाए ।

33. याचिका 25,000/- रुपए (पच्चीस हजार रुपए) की लागत के साथ मंजूर की जाती है जिसका संदाय प्रत्यर्थी संख्या 1 से 4 द्वारा याची को किया जाएगा ।

याचिका मंजूर की गई ।

अवि.

मेघालय महाविद्यालय अध्यापक एसोसिएशन

बनाम

मेघालय राज्य

तारीख 28 नवंबर, 2018

न्यायमूर्ति मोहम्मद याकूब मीर और मुख्य न्यायमूर्ति एस. आर. सेन

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 14, 15 और 39घ – नैसर्गिक न्याय का सिद्धांत – यू. जी. सी. मार्गदर्शक सिद्धांत – राज्य भत्ता – सहायता प्राप्त महाविद्यालय के ऐसे अध्यापक जो यू. जी. सी. वेतनमान पा रहे हैं, राज्य भत्ते भी पाने के हकदार हैं, क्योंकि यू. जी. सी. मार्गदर्शक सिद्धांतों में ऐसा कोई निषेध नहीं है, अतः अध्यापक या किसी अन्य कर्मचारी को भत्ते या अन्य फायदे और सुविधाएं एक बार मंजूर किए जाने पर इन्हें प्रत्याहृत या कम नहीं किया जा सकता ।

वर्तमान मामले में याचियों का यह पक्षकथन है कि कोई विधिमान्य कारण बताए बिना 1 जनवरी, 1996 से यू. जी. सी. वेतनमान ले रहे अभावग्रस्त महाविद्यालयों में सेवारत अध्यापकों के संबंध में प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के मकान किराया भत्ता, चिकित्सा भत्ता, पहाड़ी प्रतिपूरक भत्ता और शीतकालीन भत्ता वापस ले लिए और ऐसे प्रत्याहरण के अग्रसरण में वस्तुतः पूर्वोक्त भत्तों की वसूली को प्रभावी बनाने के अवैध और बेतुका विनिश्चय द्वारा व्यथित होकर भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन यह रिट याचिका फाइल की । याची ने तत्काल प्रभाव से राज्य सरकार के कर्मचारियों को उपलब्ध कराए जाने वाला मकान किराया भत्ता, चिकित्सा भत्ता, पहाड़ी भत्ता और शीतकालीन भत्ते के फायदे के संदाय के लिए यू. जी. सी. वेतनमान ले रहे अभावग्रस्त सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के शिक्षण कर्मचारियों को अनुज्ञात करने और ऐसे भत्तों की प्रतिपूर्ति के लिए भी, जो ऐसे शिक्षण कर्मचारियों के वेतन से वसूले गए हैं, राज्य प्रत्यर्थी को निदेश देते हुए समुचित रिट/आदेश या निदेश देने की प्रार्थना कर रहे हैं । उच्च न्यायालय ने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने, शपथपत्रों पर विचार करने और माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधियों पर विचार करने के पश्चात् याचिका मंजूर की । उच्च न्यायालय द्वारा याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – सहायता प्राप्त विद्यालयों के अध्यापकों को सरकारी विद्यालयों के अध्यापकों के समान वेतनमान और महंगाई भत्ते दिए जाएं और उक्त संदाय इन मामलों में अपीलार्थियों और याचियों द्वारा दावाकृत संपूर्ण अवधि के लिए किया जाए । न्यायालय का यह मत है कि प्राइवेट सहायता प्राप्त विद्यालय/महाविद्यालय और सरकारी विद्यालय/महाविघालय में समतुल्य नियोजित अध्यापक एक जैसे फायदे के हकदार हैं । वेतन और भत्ते एक बार संदत्त किए जाने और याचियों की कोई गलती न होने के कारण ऐसी किसी अधिक रकम की वसूली किया जाना उचित नहीं है जो उन्हें पहले ही संदत्त की जा चुकी है । न्यायालय को यह स्पष्ट होता है कि जब कोई अधिक रकम याचियों को संदत्त की गई है, जब उनकी कोई गलती नहीं हो तो इसे वसूला नहीं जा सकता । वेतन/वेतनमान एक बार नियत किए जाने पर सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना कम नहीं किया जा सकता । न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि याचियों को एक बार वेतन और अन्य भत्ते मंजूर किए जाने पर प्रत्यर्थियों के पास सुनवाई का कोई उचित अवसर दिए बिना इसे प्रत्याहृत करने या परिवर्तित करने का कोई अधिकार नहीं है । जब अपीलार्थी को स्पष्टतः सिविल परिणाम भुगतने पड़े किंतु उसे अपने मूल वेतन की कटौती के विरुद्ध कारण बताने का कोई अवसर नहीं दिया गया । विभाग द्वारा उसके वेतन की कटौती के पहले उसे कोई नोटिस भी नहीं दी गई और विधि में ज्ञात किसी प्रक्रिया का अनुपालन किए बिना उसके पीछे से आदेश कर दिया गया । इस प्रकार नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का खुल्लमखुल्ला अतिक्रमण किया गया और सुनवाई का अवसर दिए बिना अपीलार्थी को भारी वित्तीय हानि भुगतना पड़ा । निष्पक्ष कार्रवाई की अपेक्षा है कि ऐसा कोई आदेश जिससे कर्मचारी को सिविल परिणामों से भुगतना पड़ता है, संबद्ध व्यक्ति को नोटिस दिए बिना और मामले में सुनवाई का अवसर दिए बिना पारित नहीं किया जाना चाहिए । चूंकि ऐसा नहीं किया गया, इसलिए आदेश तारीख 25 जुलाई, 1991 जो अधिकरण के समक्ष आक्षेपित है, निश्चय ही कायम नहीं रखा जा सकता और केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण ने अपीलार्थी की याचिका को खारिज करने की त्रुटि की है । न्यायालय को यह स्पष्ट है कि अध्यापकों/याचियों के भत्तों का अचानक प्रत्याहरण वस्तुतः खेदजनक है और न्यायालय यह पाता है कि सरकार का विनिश्चय पूर्णतः अन्यायोचित और मनमाना प्रकृति का है और अनुच्छेद 14, 15 और भारत के संविधान के राज्य की नीति के निदेशक तत्व के अनुच्छेद 39(घ) के विरुद्ध है

जिसका कतई पालन नहीं किया गया है, जिसके लिए न्यायालय घोर नाराज है और रोष प्रकट करता है । यू. जी. सी. मार्गदर्शक सिद्धांत ने ऐसे किसी व्यक्ति को राज्य भत्ते पाने से भी वर्जित नहीं किया जो यू. जी. सी. वेतनमान पा रहे हैं । न्यायालय ने पहले भी दोहराया है कि अध्यापक समाज की रीढ़ की हड्डी है और सभी व्यक्तियों द्वारा इनका ध्यान रखने और सम्मान किए जाने की आवश्यकता है । उपरोक्त विमर्शित विनिश्चयों में, व्यक्त निर्णयों में से एक निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय ने ऐसा ही मत व्यक्त किया है । न्यायालय इस बाबत भी स्पष्ट है कि यह याचिका माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यथा अधिकथित विलंब और प्रमाद द्वारा प्रभावित नहीं है कि जब दोष सतत है या जब यह तीसरे पक्षकारों के अधिकारों को प्रभावित नहीं करता, अनुतोष मंजूर किया जाए । इन सभी अधिसूचनाओं और सरकारी आदेशों पर विचार करने के पश्चात्, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि मेघालय सरकार एक अपवाद है और आगे न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि अध्यापकों की सामाजिक सुरक्षा और अन्य फायदों के बारे में सोचने के बजाय, हमेशा प्रतिकूल विनिश्चय ले रहे हैं जिसे मंजूर नहीं किया जा सकता और विधि की दृष्टि से अस्वीकार्य है । अतः न्यायालय उच्च और तकनीकी शिक्षा संयुक्त निदेशक, मेघालय, शिलांग द्वारा जारी पत्र सं. सी.ई./एम.सी.टी.ए./ 1/98/123 तारीख 6 अगस्त, 2002 को अपास्त करने के लिए मजबूर हैं । तद्नुसार रिट याचिका का उपाबंध 10 अपास्त किया जाता है । माननीय उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त मताभिव्यक्तियों से यह भी स्पष्ट है कि एक बार अध्यापकों या किसी अन्य कर्मचारी को भत्ते या अन्य फायदे और सुविधाएं मंजूर किए जाने पर, इसे प्रत्याहृत या कम नहीं किया जा सकता । अतः, वसूली का प्रश्न जो सरकार द्वारा अपनाया गया है, विधि के नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के प्रतिकूल है । (पैरा 8, 9, 10, 11, 18, 19 और 20)

अवलंबित निर्णय

पैरा

[2018] (2018) 9 एस. सी. सी. 92 :
अहल्या ए. सामतने बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य** ; 15

[2017] (2017) 4 एस. सी. सी. 449 :
सचिव, महात्मा गांधी मिशन और एक अन्य
बनाम **भारतीय कामगार सेना और एक अन्य** ; 17

[2016] (2016) 13 एस. सी. सी. 797 :
अशगर इब्राहीम अमीन बनाम **भारतीय जीवन बीमा निगम** ; 16

[2015] ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2904 :
रमेश कुमार बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 14

[2000] ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 634 :
चंडीगढ़ प्रशासन और अन्य बनाम **श्रीमती रजनी बाली और अन्य** ; 13

[1996] (1996) 5 एस. सी. सी. 273 :
हरियाणा राज्य और अन्य बनाम **राजपाल शर्मा और अन्य** ; 8

[1995] (1995) 4 एस. सी. सी. 507 :
हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य मान्यता प्राप्त और सहायता प्राप्त विद्यालय प्रबंध समिति और अन्य** ; 12

[1995] (1995) 5 एस. सी. सी. 628 :
एम. आर. गुप्ता बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 7

[1994] ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 2480 :
भगवान शुक्ला बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 11

[1994] (1994) 2 एस. सी. सी. 521 :
श्याम बाबू वर्मा और अन्य बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 9

[1975] (1975) 3 एस. सी. सी. 1 :
खंड अधीक्षक, पूर्वी रेलवे, दीनापुर और अन्य बनाम **श्री एल. एन. केशरी और अन्य ।** 10

रिट याचिका (सिविल) अधिकारिता : 2017 की रिट याचिका (सिविल) सं. 384.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से सर्वश्री बी. के. शर्मा, वरिष्ठ अधिवक्ता और आर. मजूमदार

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री ए. कुमार, महाधिवक्ता और प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से एच. अब्राहम, सरकारी अधिवक्ता, प्रत्यर्थी सं. 3 से 17 की ओर से सुश्री बी. घोष, प्रत्यर्थी सं. 18 और 19 की ओर से डा. एन. मोजिका, केंद्रीय सरकारी काउंसेल

न्यायालय का निर्णय मुख्य न्यायमूर्ति एस. आर. सेन ने दिया ।

मु. न्या. सेन – याचीगण-एसोसिएशन की ओर से विद्वान् काउंसेल, श्री बी. के. शर्मा विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल और श्री आर. मजूमदार तथा प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से ए. कुमार विद्वान् महाधिवक्ता और श्री एच. अब्राह्म, सरकारी अधिवक्ता को सुना । प्रत्यर्थी सं. 3 से 17 की ओर से सुश्री बी. घोष विद्वान् काउंसेल और प्रत्यर्थी सं. 18 और 19 की ओर से डा. एन. मोजिका विद्वान् केंद्रीय सरकारी काउंसेल मौजूद हैं किंतु कोई निवेदन नहीं किया ।

2. याची के पक्षकथन का संक्षिप्त कथन संक्षेप में इस प्रकार है :–

"याचियों ने कोई विधिमान्य कारण बताए बिना 1 जनवरी, 1996 से यू. जी. सी. वेतनमान ले रहे अभावग्रस्त महाविद्यालयों में सेवारत अध्यापकों के संबंध में प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के मकान किराया भत्ता, चिकित्सा भत्ता, पहाड़ी प्रतिपूरक भत्ता और शीतकालीन भत्ता वापस लेने और ऐसे प्रत्याहरण के अग्रसरण में वस्तुतः पूर्वोक्त भत्तों की वसूली को प्रभावी बनाने के अवैध और बेतुका विनिश्चय द्वारा व्यथित होकर भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन यह रिट याचिका फाइल की । याची ने तत्काल प्रभाव से राज्य सरकार के कर्मचारियों को उपलब्ध कराए जाने वाला मकान किराया भत्ता, चिकित्सा भत्ता, पहाड़ी भत्ता और शीतकालीन भत्ते के फायदे के संदाय के लिए यू. जी. सी. वेतनमान ले रहे अभावग्रस्त सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के शिक्षण कर्मचारियों को अनुज्ञात करने और ऐसे भत्तों की प्रतिपूर्ति के लिए भी, जो ऐसे शिक्षण कर्मचारियों के वेतन से वसूले गए हैं, राज्य प्रत्यर्थी को निदेश देते हुए समुचित रिट/आदेश या निदेश देने की प्रार्थना कर रहे हैं ।"

3. याचीगण (मेघालय कालेज अध्यापक एसोसिएशन और एक अन्य)

की ओर से विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने यह निवेदन किया कि याची अभावग्रस्त सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के अध्यापकों को संदत्त किए जाने वाले कतिपय भत्तों के संदाय को रोकने के मेघालय सरकार के एकतरफा विनिश्चय द्वारा व्यथित हैं । भत्ता, मकान किराया भत्ता, चिकित्सा भत्ता, पहाड़ी प्रतिपूरक भत्ता और शीतकालीन भत्ता है । विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने आगे यह निवेदन किया कि उक्त भत्तों को प्रत्याहृत करने/रोकने के पूर्व अध्यापकों को कोई नोटिस नहीं दी गई । अतः, यह रिट याचिका फाइल की गई ।

उन्होंने आगे यह भी निवेदन किया कि सभी अध्यापकों ने यू. जी. सी. वेतनमान आहरित करने के सिवाय उन भत्तों के संबंध में कभी कोई भेदभाव नहीं किया गया और उन्हें सभी सरकारी महाविद्यालयों के अध्यापकों सहित राज्य सरकार कर्मचारियों के समतुल्य भत्ते संदत्त किए जा रहे थे, किंतु मेघालय सरकार, शिक्षा विभाग द्वारा अधिसूचना सं. ई.डी.एन. 136/98/80 तारीख 20 दिसंबर, 1999 (रिट याचिका का उपाबंध 7) जारी करने के साथ स्थिति में परिवर्तन हुआ । उक्त अधिसूचना द्वारा अध्यापकों के यू. जी. सी. वेतनमान और अन्य सेवा शर्तों के अंगीकरण और क्रियान्वयन के विनिश्चय को 1 जनवरी, 1996 से अधिसूचित किया गया । उक्त अधिसूचना में यह कभी नहीं स्पष्ट किया गया कि पूर्वोक्त भत्ते प्रत्याहृत किए जाते हैं । समानांतर स्तम्भ में भत्ते संदत्त किए जाते रहे ।

उन्होंने आगे यह भी दलील दी कि जब याचियों ने प्राधिकारी के समक्ष अपनी शिकायतें कीं तो उन्हें पत्र सं. सी.ई./एम.सी.टी.ए./1/98/80 तारीख 24 मार्च, 2001 (रिट याचिका का उपाबंध 8) के द्वारा यह अधिसूचित किया गया कि इस विषय पर सरकार का विनिश्चय अब भी प्रतीक्षित है । यहां, यह उल्लेख करना प्रासंगिक होगा कि यू. जी. सी. वेतनमान के साथ अध्यापकों को केंद्रीय महंगाई भत्ता अनुज्ञात था । तथापि, अचानक सरकार ने पत्र सं. सी.ई./एम.सी.टी.ए./1/98/123 तारीख 6 अगस्त, 2002 (रिट याचिका का उपाबंध 10) द्वारा राज्य सरकार के भत्ते के फायदे देने में अपनी असमर्थता व्यक्त की । इसी बीच, ऐसे भत्ते जो अध्यापकों को 1 जनवरी, 1996 के पश्चात् संदत्त किए गए थे, प्रभावित अध्यापकों को सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना वेतन से वसूल लिए गए, जिसके लिए याची आंदोलन कर रहे हैं किंतु कोई फायदा नहीं हुआ ।

विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने यह भी निवेदन किया कि अधिसूचना सं.

ई.डी.एन. 34/2009/91 तारीख 22 मार्च, 2010 (रिट याचिका का उपाबंध 11) द्वारा, मेघालय सरकार ने एक बार पुनः अध्यापकों को केंद्रीय महंगाई भत्ता के साथ पुनरीक्षित यू. जी. सी. वेतनमान विस्तारित किया, किंतु उपरोक्त अन्य भत्तों की हकदारी के संबंध में कोई उल्लेख नहीं था । उन्होंने यह भी निवेदन किया कि याचियों ने अभ्यावेदन दिए किंतु आज की तारीख तक कोई सकारात्मक उत्तर प्राप्त नहीं हुआ ।

4. विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने यह भी निवेदन किया कि 1 जनवरी, 1996 से भत्ते प्रत्याहृत करने और इसे वसूलने का सरकार का एकतरफा विनिश्चय नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी होते हुए विधि में अमान्य है । उन्होंने आगे यह तर्क किया कि 1 जनवरी, 1996 के परे अध्यापकों द्वारा भत्तों का आहरित किया जाना कोई कपट या दुर्व्यपदेशन नहीं है । राज्य सरकार ने स्वयं भत्तों का संदाय किया और अध्यापकों ने रकम खर्च कर दी, इसलिए राज्य सरकार कोई नोटिस दिए बिना या सुनवाई किए बिना एकतरफा विनिश्चय द्वारा इसकी वसूली नहीं कर सकती । उन्होंने आगे यह तर्क किया कि सरकार ऐसे भत्तों को प्रत्याहृत करने का कोई तार्किक स्पष्टीकरण देने में असफल रही । यू. जी. सी. मार्गदर्शक सिद्धांतों ने यह कभी नहीं कहा कि केंद्रीय महंगाई भत्ते के साथ यू. जी. सी. वेतनमान के दिए जाने के कारण, अध्यापकों के राज्य भत्तों के उनके अधिकार समपहृत हो जाएंगे । बल्कि, मेघालय महाविद्यालय अध्यापकों के समान स्थित अन्य राज्यों के महाविद्यालयों के अध्यापक राज्य भत्ते आहरित कर रहे हैं । उन्होंने दलील दी कि अभावग्रस्त सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के अध्यापकों की शिकायतें सतत दोष है और उनके वाद हेतुक उस वेतन की प्राप्ति पर प्रत्येक माह उद्भूत होते हैं, जो उतनी रकम से कम हैं जिसके वे हकदार हैं और उन्हें अवैध रूप से विधारित नहीं किया जा सकता । उन्होंने यह भी निवेदन किया कि अभावग्रस्त सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के अध्यापक सरकारी महाविद्यालयों के अध्यापकों के जैसे ही सेवाएं दे रहे हैं । अपने निवेदन के समर्थन में विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल ने निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया :–

1. (1995) 5 एस. सी. सी. 628 (एम. आर. गुप्ता **बनाम** भारत संघ और अन्य)

2. (1996) 5 एस. सी. सी. 273 (हरियाणा राज्य और अन्य **बनाम** राजपाल शर्मा और अन्य)

3. (1994) 2 एस. सी. सी. 521 (श्याम बाबू वर्मा और अन्य **बनाम** भारत संघ और अन्य)

4. (1975) 3 एस. सी. सी. 1 (खंड अधीक्षक, पूर्वी रेलवे, दीनापुर और अन्य **बनाम** श्री एल. एन. केशरी और अन्य)

5. ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 2480 (भगवान शुक्ला **बनाम** भारत संघ और अन्य)

5. उत्तर में मेघालय सरकार के विद्वान् महाधिवक्ता ने यह निवेदन किया कि याची न्यायालय में आवेदन नहीं कर सकते क्योंकि काफी विलंब हो गया है और यह विलंब और प्रमाद के सिद्धांत द्वारा बाधित है । उन्होंने आगे यह निवेदन किया कि चूंकि अध्यापक यू. जी. सी. वेतनमान पा रहे हैं, इसलिए वे राज्य भत्तों के हकदार नहीं है जैसा रिट याचिका में अनुरोध किया गया है ।

6. दोनों पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा दिए गए निवेदनों को सुनने के पश्चात्, हमारे समक्ष तीन मुद्दे उभरते हैं :–

(i) क्या सरकार अचानक ऐसे सभी भत्तों को रोक सकती है जिसका उपभोग अध्यापक 1 जनवरी, 1996 के पहले से कर रहे हैं ?

(ii) क्या सरकार का विनिश्चय समता और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के प्रतिकूल है ? और,

(iii) क्या याचियों का मामला विलंब और प्रमाद के सिद्धांत द्वारा प्रभावित है ?

इन मुद्दों का उत्तर देने के लिए अब हम विधि की स्थिति की परीक्षा करते हैं ।

7. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **एम. आर. गुप्ता** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले के पैरा 6 में स्पष्ट किया कि उचित वेतनमान नियतन पर संगणित सही वेतन का दावा ऐसा अधिकार है जो सेवा की संपूर्ण अवधि के दौरान विद्यमान रहता है और वेतन के प्रत्येक संदाय के समय प्रयोग नहीं किया जा सकता जिसका कर्मचारी नियम के अनुसार सही संगणित वेतन का हकदार है । उक्त निर्णय के पैरा 6 को तत्काल

[1] (1995) 5 एस. सी. सी. 628.

निर्देश के लिए यहां नीचे दोहराया जा रहा है :–

> "6. अधिकरण स्वयं भाग गया था जब उसने अपीलार्थी के दावे को 'एक ही कार्रवाई' के रूप में माना था, जिसका यह अर्थ है कि आवर्ती वाद हेतुक के आधार पर यह सतत दोष नहीं था । उचित वेतनमान नियतन के आधार पर संगणित सही वेतन संदत्त किए जाने का दावा एक ऐसा अधिकार है, जो सेवा की संपूर्ण अवधि के दौरान विद्यमान रहता है और वेतन के प्रत्येक संदाय के समय प्रयोग किया जा सकता है जब कर्मचारी नियमों के अनुसार सही संगणित वेतन का हकदार है । नियमों के अनुसार की गई संगणना के अनुसार उसकी संपूर्ण अवधि के दौरान सही वेतन संदत्त किए जाने का सरकारी सेवा का यह अधिकार, उस मोचन के अधिकार से जुड़ा है, जो विद्यमान बंधक के आनुषंगिक है और स्वयं बंधक की विद्यमानता तक विद्यमान रहता है जब तक मोचन की साम्या निर्वापित नहीं हो जाती । यह स्थिर है कि मोचन का अधिकार इसी तरह का है ।"

उक्त निर्णय के परिशीलन के पश्चात्, हमारा यह मत है कि जहां अंतर्वलित विवाद्यक सही वेतनमान के बारे में हो, वहां अधिकार सेवा के संपूर्ण अवधि के दौरान विद्यमान रहता है ।

8. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **हरियाणा राज्य और अन्य** बनाम **राजपाल शर्मा और अन्य**[1] वाले मामले के पैरा 5 में स्पष्ट किया कि 'इन मताभिव्यक्तियों से संदेह की कोई गुंजाइश नहीं है कि इस न्यायालय ने यह निदेश दिया है कि सहायता प्राप्त विद्यालयों के अध्यापकों को सरकारी विद्यालयों के अध्यापकों के समान वेतनमान और महंगाई भत्ते दिए जाएं और उक्त संदाय इन मामलों में अपीलार्थियों और याचियों द्वारा दावाकृत संपूर्ण अवधि के लिए किया जाए ।' उक्त निर्णय के पैरा 5 को तत्काल निर्देश के लिए यहां नीचे दोहराया जा रहा है :–

> 5. चमनलाल **बनाम** हरियाणा राज्य वाले मामले में विचारार्थ प्रश्न यह था कि क्या ऐसे अध्यापक जिन्होंने बेसिक प्रशिक्षित अध्यापक के रूप में कार्य आरंभ किया था और बाद में उच्च अर्हता अर्जित की थी, उच्च वेतनमान पाने के हकदार होंगे ? इस न्यायालय ने कोठारी आयोग की सिफारिशों और हरियाणा राज्य के विभिन्न परिपत्रों पर विचार किया और यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसे

[1] (1996) 5 एस. सी. सी. 273.

अध्यापक जिन्होंने उच्च अर्हता अर्जित कर ली है यथाशीघ्र उच्च वेतनमान के हकदार होंगे जैसे ही वे अर्हता अर्जित करते हैं, उस तारीख पर ध्यान न देते हुए भी कि जब उन्हें मास्टर के पदों पर समायोजित किया गया हो । इस मामले में निःसंदेह अपीलार्थी सरकारी विद्यालय के अध्यापक थे । इस मामले में मान्यता प्राप्त सहायता प्राप्त विद्यालय के अध्यापकों और सरकारी विद्यालय के अध्यापकों के बीच वेतनमान की समानता का प्रश्न हरियाणा राज्य अध्यापक संघ **बनाम** हरियाणा राज्य वाले मामले में विचारार्थ उद्भूत हुआ । इस न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि सहायता प्राप्त विद्यालयों के अध्यापकों को उनके द्वारा की गई संपूर्ण सेवा अवधि के लिए सरकारी विद्यालयों के अध्यापकों के जैसे ही वेतनमान और महंगाई भत्ते दिए जाएं और उस खाते का व्यय राज्य और प्रबंध मंडल के बीच उसी अनुपात में समायोजित किया जाए जिसमें वे अध्यापकों के विद्यमान परिलब्धियों का भार वहन कर रहे हैं । इस न्यायालय के पूर्वोक्त विनिश्चय पर हरियाणा राज्य अध्यापक संघ **बनाम** हरियाणा राज्य वाले मामले में तीन न्यायाधीशों की न्यायपीठ द्वारा विचार किया गया और पूर्व विनिश्चय को स्पष्ट करते हुए इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया –

> "इन मताभिव्यक्तियों से संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती कि इस न्यायालय ने यह निदेश दिया है कि सहायता प्राप्त विद्यालयों के अध्यापकों को सरकारी विद्यालयों के अध्यापकों के समान वेतनमान और महंगाई भत्ते संदत्त किए जाएं और यह कि उक्त संदाय अपीलार्थियों और इस मामले में याचियों द्वारा दावाकृत संपूर्ण अवधि के लिए किया जाए ।"

निर्णय के पैरा 12 में न्यायालय ने निम्नलिखित निदेश दिए –

> "(i) सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों के अध्यापकों का वेतनमान इस प्रकार पुनरीक्षित किया जाए जिससे कि उन्हें 1 अप्रैल, 1979 से सरकारी विद्यालयों के अध्यापकों के वेतनमान के समतुल्य लाया जा सके और वेतनमान में ऐसे पुनरीक्षण के परिणामस्वरूप हुए अंतर रकम का संदाय चार छमाही किश्तों में संदत्त किया जाएगा, पहली किश्त 30 जून, 1990 को संदेय होगी ।
>
> (ii) सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों के अध्यापकों को

1 अप्रैल, 1979 से 31 दिसंबर, 1985 तक पुनरीक्षित वेतनमान के आधार पर अतिरिक्त महंगाई भत्ता संदत्त किया जाएगा और ऐसे पुनरीक्षण के परिणामस्वरूप संदेय ऐसे अतिरिक्त महंगाई भत्ते के बकाय का संदाय अतिरिक्त महंगाई भत्ते के पांचवें किश्त के अंतिम भाग के साथ संदत्त किया जाएगा जो सितंबर, 1990 में संदत्त किया जाए ।

(iii) सहायता प्राप्त विद्यालयों में नियोजित और सरकारी विद्यालयों में नियोजित अध्यापकों के वेतनमान और महंगाई भत्ते में समतुल्यता बनाई रखी जाएगी और उस प्रयोजन के लिए सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों में नियोजित अध्यापकों के वेतनमान पुनरीक्षित किए जाएंगे और 1 जनवरी, 1986 से सरकारी विद्यालयों में नियोजित अध्यापकों को संदेय वेतनमान और महंगाई भत्ते के समतुल्य लाया जाएगा ।

(iv) सहायता प्राप्त विद्यालयों में नियोजित अध्यापकों को 1 अप्रैल, 1990 से वही वेतन और महंगाई भत्ता दिया जाएगा जो सरकारी विद्यालयों में नियोजित अध्यापकों को दिया जाता है ।

(v) 1 जनवरी, 1986 से 31 मार्च, 1990 तक की अवधि के लिए ऐसे पुनरीक्षण के परिणामस्वरूप संदेय वेतन और महंगाई भत्ते के बकाये का संदाय चार छमाही किश्तों में संदत्त किया जाएगा और ऐसी पहली किश्त 30 जून, 1990 को संदेय होगी ।"

उपरोक्त निर्णय के परिशीलन के पश्चात् हमारा यह मत है कि प्राइवेट सहायता प्राप्त विद्यालय/महाविद्यालय और सरकारी विद्यालय/महाविद्यालय में समतुल्य नियोजित अध्यापक एक जैसे फायदे के हकदार हैं ।

9. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **श्याम बाबू वर्मा और अन्य** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले के पैरा 11 में यह स्पष्ट किया कि वेतन और भत्ते एक बार संदत्त किए जाने और याचियों की कोई गलती न होने के कारण ऐसी किसी अधिक रकम की वसूली किया जाना उचित

[1] (1994) 2 एस. सी. सी. 521.

नहीं है जो उन्हें पहले ही संदत्त की जा चुकी है । उक्त निर्णय के पैरा 11 को तत्काल प्रतिनिर्देश के लिए यहां नीचे दोहराया जा रहा है :–

> "11. यद्यपि हमने अभिनिर्धारित किया है कि याची 1 जनवरी, 1973 से तीसरे वेतन आयोग की सिफारिशों के अनुसार 330-480/- रुपए के वेतनमान के ही हकदार हैं और 10 वर्ष की अवधि के पश्चात् ही वे 330-560/- रुपए के वेतनमान के हकदार हो सकते हैं । किंतु वे अपनी किसी न खामी के कारण 1973 से 330-560/- रुपए का वेतनमान प्राप्त कर चुके हैं और यह कि वेतनमान वर्ष 1984 में 1 जनवरी, 1973 से कम कर दिया गया है, इसलिए, किसी अधिक रकम का वसूला न जाना ठीक और उचित होगा, जो पहले ही उन्हें संदत्त किया जा चुका है । तद्नुसार, हम यह निदेश देते हैं कि प्रत्यर्थियों की खामी के कारण याचियों को संदत्त किसी अधिक रकम का समायोजन करने या वसूलने का कोई कदम न उठाया जाए जिसके लिए याची किसी तरह उत्तरदायी नहीं है ।"

माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा पैरा 11 में दिए गए निदेश के परिशीलन से यह भी हमें स्पष्ट होता है कि जब कोई अधिक रकम याचियों को संदत्त किया गया है, जब उनकी कोई गलती नहीं हो तो इसे वसूला नहीं जा सकता ।

10. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **खंड अधीक्षक, पूर्वी रेलवे, दीनापुर और अन्य** बनाम **श्री एल. एन. केशरी और अन्य**[1] वाले मामले के पैरा 6 में यह स्पष्ट किया कि वेतन/वेतनमान एक बार नियत किए जाने पर सुनवाई का कोई अवसर दिए बिना कम नहीं किया जा सकता । उक्त निर्णय के पैरा 6 को तत्काल प्रतिनिर्देश के लिए यहां नीचे दोहराया जा रहा है :–

> "6. प्रत्यर्थियों की 110-180/- रुपए के वेतनमान में पुष्टि की गई थी । अपीलार्थियों के वेतनमान प्रत्यर्थियों द्वारा नियत किए जाने और पुष्ट किए जाने पर प्रत्यर्थियों को सुनवाई का अवसर दिए बिना, वेतनमान में कटौती नहीं की जा सकती । फिर भी, प्रत्यर्थी पुष्ट किए जाने पर बोर्ड द्वारा नियत पद और वेतनमान के अधिकार के हकदार हो गए ।"

---

[1] (1975) 3 एस. सी. सी. 1.

उक्त निर्णय के परिशीलन से हमें यह प्रतीत होता है कि याचियों को एक बार वेतन और अन्य भत्ते मंजूर किए जाने पर प्रत्यर्थियों के पास सुनवाई का कोई उचित अवसर दिए बिना इसे प्रत्याहृत करने या परिवर्तित करने का कोई अधिकार नहीं है ।

11. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **भगवान शुक्ला** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले के पैरा 3 में इस प्रकार मत व्यक्त किया :–

> "3. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना । यह कि याची का मूल वेतन 1970 से 190/- रुपए प्रतिमास नियत किया गया था, विवादित नहीं है । इसमें भी कोई विवाद नहीं है कि अपीलार्थी का मूल वेतन वर्ष 1991 में भूतलक्षी प्रभाव अर्थात् 18 दिसंबर, 1970 से 190/- रुपए प्रतिमास से घटाकर 181/- रुपए किया गया । अपीलार्थी को स्पष्टतः सिविल परिणामों से भुगतना पड़ा किंतु उसे अपने मूल वेतन की कटौती के प्रति कारण बताने का कोई अवसर नहीं दिया गया । विभाग द्वारा उसके वेतन की कटौती के पहले उसे कोई नोटिस भी नहीं दी गई और विधि में ज्ञात किसी प्रक्रिया का अनुपालन किए बिना उसके पीछे से आदेश कर दिया गया । इस प्रकार नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का खुल्लमखुल्ला अतिक्रमण किया गया और सुनवाई का अवसर दिए बिना अपीलार्थी को भारी वित्तीय हानि भुगतना पड़ा । निष्पक्ष कार्रवाई की अपेक्षा है कि ऐसा कोई आदेश जिससे कर्मचारी को सिविल परिणामों से भुगतना पड़ता है, संबद्ध व्यक्ति को नोटिस दिए बिना और मामले में सुनवाई का अवसर दिए बिना पारित नहीं किया जाना चाहिए । चूंकि ऐसा नहीं किया गया, इसलिए आदेश (ज्ञापन) तारीख 25 जुलाई, 1991 जो अधिकरण के समक्ष आक्षेपित है, निश्चय ही कायम नहीं रखा जा सकता और केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण ने अपीलार्थी की याचिका को खारिज करने की त्रुटि की है । अधिकरण का आदेश अपास्त किए जाने योग्य है । तद्नुसार हम यह अपील मंजूर करते हैं और 18 दिसंबर, 1970 से अपीलार्थी का वेतनमान 190/- रुपए से घटाकर 181/- रुपए करने वाले केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण के तारीख 17 सितंबर, 1993 के आदेश और अधिकरण के समक्ष आक्षेपित आदेश (ज्ञापन) तारीख 25 जुलाई, 1991 को अपास्त करते हैं ।"

---

[1] ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 2480.

उक्त निर्णय के परिशीलन से, यह स्पष्ट होता है कि "जब अपीलार्थी को स्पष्टतः सिविल परिणाम भुगतने पड़े किंतु उसे अपने मूल वेतन की कटौती के विरुद्ध कारण बताने का कोई अवसर नहीं दिया गया । विभाग द्वारा उसके वेतन की कटौती के पहले उसे कोई नोटिस भी नहीं दी गई और विधि में ज्ञात किसी प्रक्रिया का अनुपालन किए बिना उसके पीछे से आदेश कर दिया गया । इस प्रकार नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का खुल्लमखुल्ला अतिक्रमण किया गया और सुनवाई का अवसर दिए बिना अपीलार्थी को भारी वित्तीय हानि भुगतना पड़ा । निष्पक्ष कार्रवाई की अपेक्षा है कि ऐसा कोई आदेश जिससे कर्मचारी को सिविल परिणामों से भुगतना पड़ता है, संबद्ध व्यक्ति को नोटिस दिए बिना और मामले में सुनवाई का अवसर दिए बिना पारित नहीं किया जाना चाहिए । चूंकि ऐसा नहीं किया गया, इसलिए आदेश (ज्ञापन) तारीख 25 जुलाई, 1991 जो अधिकरण के समक्ष आक्षेपित है, निश्चय ही कायम नहीं रखा जा सकता और केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण ने अपीलार्थी की याचिका को खारिज करने की त्रुटि की है ।"

12. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **हिमाचल प्रदेश राज्य** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य मान्यता प्राप्त और सहायता प्राप्त विद्यालय प्रबंध समिति और अन्य**[1] वाले मामले के पैरा 18 में यह मत व्यक्त किया :–

> "18. हम उच्च न्यायालय से सहमत हैं कि वर्तमान मामले के तथ्यों में प्रत्यर्थियों को सहायता अनुदान का संवितरण की अधिकतम सीमा का अधिरोपण मनमाना और अन्यायोचित था । उपरोक्त अनुसार, प्रत्यर्थी/ विद्यालय मान्यता प्राप्त, सहायता प्राप्त हैं और राज्य सरकार के गहन और पूर्ण नियंत्रण के अधीन हैं । सरकार नियमों की स्कीम के अधीन यथा परिकल्पित प्रत्यर्थी/विद्यालयों को सहायता अनुदान उपलब्ध कराने के बाध्यताधीन है । उच्च न्यायालय ने फरवरी, 1988 से 95% सहायता अनुदान देने के लिए हिमाचल प्रदेश राज्य को निदेश दिया है । उच्च न्यायालय का निर्णय 9 सितंबर, 1992 को दिया गया । हम उच्च न्यायालय के निर्णय को इस विस्तार तक उपांतरित करते हैं कि बढ़ा हुआ सहायता अनुदान 1 अप्रैल, 1993 से सहायता प्राप्त विद्यालयों को संदत्त किया जाए ।"

13. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **चंडीगढ़ प्रशासन और अन्य** बनाम

---

[1] (1995) 4 एस. सी. सी. 507.

श्रीमती रजनी बाली और अन्य[1] वाले मामले के पैरा 9 और 10 में यह अभिनिर्धारित किया :–

> "9. पूर्वोक्त विनिश्चयों में अधिकथित सिद्धांतों की कसौटी पर परखने के पश्चात्, स्थिति स्पष्ट है कि प्रत्यर्थियों के वेतनमान की समता के दावे से इनकार करने का कोई औचित्य नहीं है और अपीलार्थियों की दलील को स्वीकार करना प्रत्यर्थियों के विरुद्ध विभेदकारी बर्ताव को पुष्ट करने के समान होगा । इसलिए, उच्च न्यायालय ने उचित ही अपीलार्थियों के मामले को खारिज किया । आक्षेपित निर्णय में प्रत्यर्थी सं. 1 से 12 तक को वही वेतनमान देना जो परिस्थितियों में चंडीगढ़ की प्राइवेट प्रबंधित सरकारी सहायता प्राप्त विद्यालयों में उनके समतुल्यों को संदत्त किया जा रहा है, जारी निदेश चुनौती योग्य नहीं है ।"
>
> 10. अपीलार्थियों की इस दलील पर विचार करते हुए कि चंडीगढ़ प्रशासन को अतिरिक्त वित्तीय भार वहन करने में कठिनाई होगी यदि प्रत्यर्थी सं. 1 से 12 तक के दावे को स्वीकार किया जाता है, हम केवल यह कहना चाहते हैं कि समान प्रकृति के भिन्न-भिन्न मामलों में उठाई गई ऐसी दलील को इस न्यायालय द्वारा नामंजूर किया गया है । राज्य प्रशासन संसाधनों की कमी के अभिवाक् पर विद्यालयों और महाविद्यालयों में उचित शिक्षा सुनिश्चित करने के अपने दायित्व से मुंह नहीं मोड़ सकता । यह प्रशासन चलाने वाले प्राधिकारियों का दायित्व है कि प्रयोजन के लिए निधि सुनिश्चित करने के साधनों का पता लगाए । हम आगे विस्तार से इस प्रश्न पर विचार करना आवश्यक नहीं समझते । इस बाबत अपीलार्थियों द्वारा उठाई गई दलील नामंजूर की जाती है । तथापि, यह स्पष्ट किया जाता है कि ऐसा अनुपात जो अतिरिक्त भार चंडीगढ़ प्रशासन और विद्यालय की प्रबंधमंडल द्वारा साझा किया जाएगा, समय-समय पर विद्यालय को लागू सहायता अनुदान स्कीम के अनुसार होगा । उच्च न्यायालय का यह निर्णय कि वित्तीय भार का सहभाजन 95% से 5% के अनुपात में होगा, को तद्नुसार उपांतरित किया जाता है ।
>
> उक्त निर्णय के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि वेतन की समानता बनाई रखी जाए ।

---

[1] ए. आई. आर. 2000 एस. सी. 634.

14. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **रमेश कुमार** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले के पैरा 13 में यह मत व्यक्त किया :–

> "13. हमें यह बोध है कि कानूनी उपबंध के अभाव में भी, सामान्य नियम 'काम नहीं तो वेतन नहीं' है । समुचित मामलों में, न्यायालय सभी तथ्यों को उनकी समग्रता में विचार करते हैं और विधि के अनुकूल समुचित आदेश पारित करते हैं । 'काम नहीं तो वेतन नहीं' का सिद्धांत वहां लागू नहीं होगा, जहां प्रत्यर्थी अपीलार्थी के प्रोन्नति के मामले पर विचार न करने की खामी से ग्रस्त हैं और अपीलार्थी को उच्च वेतनमान वाले नायब तहसीलदार के पद पर काम करने की अनुज्ञा नहीं दे रहे हैं । वर्तमान मामलों के तथ्यों में जब अपीलार्थी को 1 अगस्त, 1997 से पूर्व दिनांकित वरिष्ठता के साथ 1 जनवरी, 2000 से प्रोन्नति दी गई और उनके बैच के साथियों के साथ उनकी ज्येष्ठता बनाई रखी गई, वहां नायब सूबेदार के प्रोन्नतिगत पद पर उसके उच्चतर वेतन और भत्तों से उसे वंचित करना अन्यायोचित होगा ।"

15. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **अहल्या ए. सामतने** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य**[2] वाले मामले के पैरा 23, 24, 25 और 26 में यह मत व्यक्त किया :–

> "23. हम एक कर्मचारी और वह भी अध्यापक, के फायदे से इनकार करने वाले ऐसे बनावटी अवरोध की निन्दा करने के पूर्वोक्त निर्णय में उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से पूर्णतः सहमत हैं । हम, इस तथ्य की अनदेखी नहीं कर सकते कि ऐसे अध्यापक जो अपना जीवन छात्रों को शिक्षा देने के लिए समर्पित करता है, के कालावधि की सुरक्षा सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । ऐसे प्राध्यापक या अध्यापक के नियोजन में असुरक्षा नहीं सृजित की जानी चाहिए जबकि वे बनावटी अवरोध देने की वास्तविक चालबाजी की प्रक्रिया से गुजर रहे हैं । दूसरा अतिरिक्त बिंदु यह है कि उसका बनावटी अवरोध शैक्षणिक पाठ्यक्रम में परिवर्तन का परिणाम भी है । यह वस्तुतः पाठ्यक्रम में परिवर्तन से उद्भूत आंतरिक समायोजन का विषय है और अपीलार्थी दो दशकों से लगातार सेवा में रहा है किंतु,

---

[1] ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 2904.

[2] (2018) 9 एस. सी. सी. 92.

यह एक दिन का अवरोध है । महाविद्यालय और राज्य सरकार द्वारा वस्तुतः यह कैसे समझा गया क्योंकि उन लोगों ने उसे पेंशन दिया, जो 20 वर्ष की सेवा के पश्चात् ग्राह्य है ।

24. हमारा यह भी मत है कि उसके मुद्दे पर ध्यान दिया गया और भिन्न-भिन्न प्राधिकारियों के समक्ष उठाया गया और रिट याचिका फाइल करने में अभिकथित विलंब सेवा के फायदे के लिए अपीलार्थी के मार्ग में नहीं आ सकता । सुसंगत वेतनमान उन परिलब्धियों के लिए उसे हकदार बनाएगा, जो उसे पहले ही किए गए कार्य के लिए ग्राह्य थे ।

25. इस प्रकार हम बिना हिचकिचाहट यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि अपीलार्थी 700-1600/- रुपए के वेतनमान में समझे जाने का हकदार है और संकल्प तारीख 27 नवंबर, 1991 के सभी फायदों का हकदार है ।

26. इस प्रकार, हम प्रत्यर्थियों को आज से तीन मास की अवधि के भीतर पूर्वोक्त निबंधनों में अपीलार्थी को शोध्य परिलब्धियों की गणना करने और उसी कालावधि के दौरान उसे सौंपने का निदेश देते हैं । विशिष्ट तथ्यों में, हम इस मामले में कोई पिछला ब्याज मंजूर नहीं कर रहे हैं, किंतु तीन मास से परे किसी विलंब की दशा में, अपीलार्थी को शोध्य और संदेय रकम पर 12% प्रतिवर्ष का साधारण ब्याज ग्राह्य होगा ।"

16. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **अशगर इब्राहीम अमीन** बनाम **भारतीय जीवन बीमा निगम**[1] वाले मामले के पैरा 4 में यह मत व्यक्त किया :–

"4. पेंशन के दावे से संबंधित मामलों में विलंब के मुद्दे के बारे में, भारत संघ **बनाम** तरसेम सिंह वाले मामले के पैरा 7 में इस न्यायालय द्वारा पहले ही मत व्यक्त किया गया है कि सतत या क्रमवर्ती दोष के मामलों में विलंब या प्रमाद या परिसीमा दावे को तब तक विफल नहीं करती, जब तक दावा, यदि मंजूर किया जाता है, स्थिर तीसरे पक्षकार के दावों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालता । इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया –

---

[1] (2016) 13 एस. सी. सी. 797.

'7. संक्षेप में, सामान्यतः विलंबित सेवा संबंधी दावे को विलंब या प्रमाद (जहां उपचार की ईप्सा रिट याचिका फाइल कर की गई हो) या परिसीमा (जहां उपचार की ईप्सा प्रशासनिक अधिकरण के समक्ष आवेदन द्वारा की गई हो) के आधार पर नामंजूर किया जाएगा । उक्त नियम के अपवादों में से एक अपवाद सतत दोष से संबंधित मामले हैं । जहां सेवा संबंधी दावा सतत दोष पर आधारित है, अनुतोष मंजूर किया जा सकता है, यदि उस तारीख जिस पर सतत दोष आरंभ हुआ, के प्रतिनिर्देश से उपचार की ईप्सा करने में काफी विलंब हुआ है, यदि ऐसा सतत अनुतोष सतत क्षति सृजित करता है । किंतु इस अपवाद का एक अपवाद है । यदि शिकायत ऐसे किसी आदेश या प्रशासनिक विनिश्चय के संबंध में है जो कई अन्य लोगों से संबंधित है या उनको भी प्रभावित करता है और यदि मुद्दे को फिर से उजागर करने से तीसरे पक्षकारों के स्थिर अधिकार प्रभावित होंगे तो दावे को ग्रहण नहीं किया जाएगा । उदाहरणार्थ यदि मुद्दा वेतन या पेंशन के भुगतान या नियतन के संबंध में है तो विलंब के बावजूद अनुतोष मंजूर किया जा सकता है क्योंकि यह तीसरे पक्षकार के अधिकारों को प्रभावित नहीं करता । लेकिन यदि अंतर्वलित दावा ज्येष्ठता या प्रोन्नति, आदि के संबंध में है, जो अन्य लोगों को प्रभावित करता है तो विलंब दावे को पुराना ठहराएगा और प्रमाद/परिसीमा का सिद्धांत लागू होगा । जहां तक पिछली अवधि के लिए बकाय की बरामदगी के पारिणामिक अनुतोष का संबंध है, आवर्ती/क्रमवर्ती दोष का सिद्धांत लागू होगा । परिणामस्वरूप उच्च न्यायालय प्रसामान्यतः रिट याचिका फाइल करने की तारीख से तीन वर्ष पूर्व की अवधि के बकाये से संबंधित पारिणामिक अनुतोष तक सीमित करेंगे ।'

हम, ससम्मान इन मताभिव्यक्तियों से सहमत हैं, जिनका यदि वर्तमान मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में स्पष्ट या लागू किया जाए, तो पेंशन का दावा, यदि विधि में अन्यथा कायम रखे जाने योग्य है, तब से पूर्व तीन वर्ष की अवधि के लिए सीमित करने का प्रभाव पैदा करेगा, जब यह न्यायिक मंच के समक्ष उठाया गया था । ऐसा दावा प्रतिमास पुनः पुनः घटित होता है और मात्र इस कारण कि इसका काल-बाधित भाग से संबंधित विधिक उपचार अनुपलब्ध हो गया है,

चिरभोग की विधि के लागू होने पर निर्वापित नहीं हो जाएगा । यह हमारे विधिशास्त्र में अच्छी तरह से संस्थापित है और नए सिरे से विचार को प्रतिबंधित करता है ।"

17. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **सचिव, महात्मा गांधी मिशन और एक अन्य** बनाम **भारतीय कामगार सेना और एक अन्य**[1] वाले मामले के खंड (ख) में यह मत व्यक्त किया :–

"शिक्षा और विश्वविद्यालय – शैक्षणिक संस्थानों में नियोजन और सेवा मामले – गैर-शैक्षणिक स्टाफ/अन्य स्टाफ/कर्मकार – गैर-सहायता प्राप्त सहयोजित महाविद्यालयों में गैर-शिक्षण स्टाफ की सेवा-शर्तों को विनियमित करने की राज्य की शक्ति – वेतन – पुनरीक्षण – विश्वविद्यालयों से सहयोजित सहायता-प्राप्त और गैर-सहायता प्राप्त महाविद्यालयों के गैर-शिक्षण स्टाफ के साथ भिन्न-भिन्न बर्ताव - अभिनिर्धारित, विभेदकारी ।

खंड (ग) में यह मत व्यक्त किया गया –

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 14 – वर्गीकरण – विभेद – आक्षेपित विधि को अविधिमान्य करने के बजाय न्यायालय द्वारा उपचारात्मक उपाय – न्यायालय को सकारात्मक उपचारात्मक कार्रवाई द्वारा ऐसे कारकों को दूर करना चाहिए, जो समग्र विधान या अधीनस्थ विधान को आवश्यकतः अविधिमान्य करने के बजाय विभेदकारी वर्गीकरण सृजित करते हैं और तो और जहां प्राप्तव्य ईप्सित उद्देश्य नीति निर्देशक सिद्धांतों का क्रियान्वयन करना है ।"

उक्त निर्णय के पैरा 83, 86, 87, 88, 89, 97 और 98 में यह मत व्यक्त किया –

"83. समता के सिद्धांत के कई पहलू हैं । पिछले 70 वर्षों में अनुच्छेद 14 के निर्वचन पर इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि ने उनमें से कुछ को स्पष्ट किया । ई. पी. रोयप्पा **बनाम** तमिलनाडु राज्य (1974) 4 एस. सी. सी. 3 = (1974) एस. सी. सी. (एल. एंड एस.) 165 वाले मामले से आरंभ होकर अनेक निर्णयों में अनुच्छेद 14 पर चर्चा करने में इस न्यायालय का उन्मुखीकरण व्यापक रहा है । न्यायमूर्ति मैथ्यू ने बेनेट कालमैन और कंपनी **बनाम**

---

[1] (2017) 4 एस. सी. सी. 449.

भारत संघ (1972) 2 एस. सी. सी. 788 पृष्ठ 844-45 पैरा 161-162 वाले मामले के अपने विसम्मत निर्णय में बहुत संक्षिप्त रूप से प्रश्न की पहचान की, जिसे इस न्यायालय को अनुच्छेद 14 का निर्वचन करते समय ध्यान देना चाहिए –

> 162. अनुच्छेद 14 के संबंध में आज का यह निर्णायक प्रश्न है कि क्या इसमें निहित समादेश राज्य द्वारा असमानताओं के सृजन पर मात्र अवरोध गठित करता है या समादेश का अभिप्राय राज्य कार्रवाई द्वारा उस पर किसी योगदान के बिना विद्यमान असमानताओं को दूर करना भी है । इस प्रश्न का उत्तर कतिपय क्षेत्रों में निर्दिष्ट दो मामलों में समान संरक्षण खंड के अधीन यूनाइटेड स्टेट में पहले ही दिया गया है । वस्तुतः, यू. एस. सुप्रीम कोर्ट ने राज्यों से ऐसा मानक स्वीकार करने की अपेक्षा करने की शुरुआत की, जो अपने नागरिकों के भिन्न-भिन्न आर्थिक और सामाजिक स्थितियों पर विचार करे, जब कभी ऐसा अंतर उनके मूल अधिकारों के निर्वहन के संबंध में समान पहुंच के मार्ग में आए । यह कहा गया है कि न्याय व्यक्तियों के बीच असमानता को समाप्त करने के लिए व्यक्ति का प्रयास है । संविधान के नीति-निदेशक तत्व के सिद्धांतों का संपूर्ण अभियान इस लक्ष्य को प्राप्त करना है और यह समता के नए अवधारणा के अनुकूल है । केवल यह मानक जो संविधान समुदाय के भौतिक संसाधनों के वितरण के लिए प्रस्तुत करता है, आम हित का व्यापक लचीला मानक है (अनुच्छेद 39ख देखें) । मैं यह नहीं सोचता कि मैं यह कह सकता हूं कि (न्यूज प्रिंट) के वितरण के लिए अपनाया गया सिद्धांत आम हित के लिए नहीं है ।"

86. उप-पैरा 65 इस प्रकार है –

> "65. यात्रा का यह अंत है । सामाजिक आर्थिक न्याय के क्षितिज को बढ़ाने के साथ-साथ सामाजिक गणराज्य और कल्याणकारी राज्य जो हम गठित करने का प्रयास कर रहे हैं और व्यापकतः इस तथ्य द्वारा प्रभावित हैं कि वृद्ध व्यक्ति जो तब सेवानिवृत्त हुए जब परिलब्धियां तुलनात्मक रूप से कम थी और लगातार बढ़ती कीमत, महंगाई के परिणामस्वरूप रुपए के गिरते मूल्य के अनियमितताओं से ग्रस्त हैं, हमारा यह समाधान

है कि उदारीकृत पेंशन स्कीम के लिए पात्र होने और तद्द्वारा सहजातीय वर्ग को विभाजित करने के लिए मनमाना पात्रता मापदंड ; 'विनिर्दिष्ट तारीख के पश्चात् सेवारत और सेवानिवृत्त' योजना लागू करना, वर्गीकरण किसी ज्ञेय तात्विक सिद्धांत पर आधारित न होने और उदारीकृत पेंशन की मंजूरी द्वारा प्राप्तव्य ईप्सित उद्देश्यों से पूर्णतः असंबंधित पाए जाने और पात्रता मानदंड पूर्णतः मनमाना बनाने जाने के कारण हमारा यह मत है कि आक्षेपित ज्ञापन प्रदर्श पी. 1 और पी. 2 में 'विनिर्दिष्ट तारीख को सेवा में होने और उस तारीख के पश्चात् सेवानिवृत्त होने' की उदारीकृत पेंशन स्कीम की पात्रता अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण करता है और असंवैधानिक है और अभिखंडित किया जाता है । दोनों ज्ञापन जैसा पढ़ा गया, ... प्रवृत्त और क्रियान्वित किए जाएंगे । असंवैधानिक भाग को छोड़कर यह घोषित किया जाता है कि 1972 नियम और सेना पेंशन विनियम द्वारा शासित सभी पेंशनभोगी सेवानिवृत्ति की तारीख पर ध्यान दिए बिना विनिर्दिष्ट तारीख से उदारीकृत पेंशन स्कीम के अधीन यथा संगणित पेंशन के हकदार होंगे । नए सिरे से की गई संगणना के अनुसार विनिर्दिष्ट तारीख के पूर्व पेंशन का बकाया ग्राह्य नहीं है । इस आशय की रिट जारी की जाए । किंतु मामले की परिस्थितियों में खर्चे के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया गया ।"

"87. जब न्यायमूर्ति मैथ्यू ने यह घोषित किया कि अनुच्छेद 14 राज्य को असमानता सृजित करने से निषेध करता है तो वे प्रत्यक्ष पर बल दे रहे थे । इसके अतिरिक्त, उन्होंने सकारात्मक तटस्थता के बजाय सकारात्मक कार्रवाई के माध्यम से विद्यमान असमानताओं को दूर करने के लिए राज्य को उपचारात्मक उपाय करने का व्यादेश दिया है ।"

"88. जहां विधान या कार्यपालिका कार्रवाई द्वारा असमानताएं सृजित की जाती हैं, वहां ऐसी स्थिति से निपटने के लिए नागरिक के पास क्या उपचार है और तत्समान न्यायपालिका की क्या बाध्यता है ? पारंपरिक रूप से, यह न्यायालय और उच्च न्यायालय ऐसी विधि जो असमानताएं सृजित करते हैं, को असंवैधानिक घोषित करते रहे हैं, किंतु **नकारा** [डी. एस. नकारा **बनाम** भारत संघ (1983) 1 एस.

सी. सी. 305] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह महसूस किया कि कार्रवाई का ऐसा अनुक्रम नीति-निदेशक तत्व के सिद्धांतों और अनुच्छेद 14 को संयोजित रूप से पढ़ने से उद्‌भूत बाध्यताओं को पूरा नहीं करता । अतः, इस न्यायालय ने **नकारा** वाले मामले में प्रभावपूर्ण ढंग से यह अधिकथित किया कि ऐसे कारकों को दूर कर समुचित आगमनात्मक अनुतोष देना संभव है, जो कृत्रिम वर्गीकरण सृजित करता है, जिससे विधि का लागू किया जाना विभेदकारी होता है ।"

"89. यद्यपि, यह न्यायालय अन्य देशों के नगरपालिका न्यायालयों द्वारा घोषित विधि द्वारा बाध्य नहीं है, किंतु इस न्यायालय ने पिछले 70 वर्षों से हमेशा संवैधानिक विधि के प्रश्नों पर अमेरिकन सुप्रीम कोर्ट के विनिश्चयों पर सम्यक् विचार किया । तुलना करने की स्थिति में अमेरिकन कोर्ट विधायी आदेश की उपेक्षाकर और कतिपय वर्ग के लोगों को, जो विधान द्वारा उपबंधित उस फायदा को प्राप्त करने से व्यक्ततः अपवर्जित हैं, विधान के अधीन उपबंधित फायदा का विस्तार कर संवैधानिक अधिदेश का पालन करने के लिए राज्य को बाध्य करने हेतु समुचित व्यादेशात्मक आदेश मंजूर करते हुए, अधिकारिता का प्रयोग करते हैं ।"

"97. अन्यथा भी, यदि अपीलार्थी विधि के अधीन बाध्यताधीन हैं, जैसाकि हमने पहले ही निष्कर्ष निकाला है कि वे वस्तुतः बाध्यताधीन हैं तो पुनरीक्षित वेतनमान देने की बाध्यता से उद्‌भूत वित्तीय दायित्व पूरा करने के लिए उपचार करना और साधन का पता लगाना अपीलार्थियों का कर्तव्य है ।"

"98. परिणामतः अपीलें सारहीन होने के कारण खारिज की जाती हैं और खर्चों के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाता ।"

18. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों द्वारा दी गई दलीलों की सुनवाई करने और हमारे समक्ष प्रस्तुत याचिका, शपथपत्रों पर विचार करने और उपरोक्त निर्दिष्ट माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधियों पर विचार करने के पश्चात् हमें यह स्पष्ट है कि अध्यापकों/याचियों के भत्तों का अचानक प्रत्याहरण वस्तुतः खेदजनक है और हम यह पाते हैं कि सरकार का विनिश्चय पूर्णतः अन्यायोचित और मनमाना प्रकृति का है और अनुच्छेद 14, 15 और भारत के संविधान के राज्य की नीति के निदेशक तत्व के अनुच्छेद 39(घ) के विरुद्ध है जिसका कतई पालन नहीं किया गया है, जिसके लिए हम घोर नाराजगी और रोष प्रकट करते हैं । यू. जी. सी.

मार्गदर्शक सिद्धांत ने ऐसे किसी व्यक्ति को राज्य भत्ते पाने से भी वर्जित नहीं किया जो यू. जी. सी. वेतनमान पा रहे हैं । हमने पहले भी दोहराया है कि अध्यापक समाज की रीढ़ की हड्डी है और सभी व्यक्तियों द्वारा इनका ध्यान रखने और सम्मान किए जाने की आवश्यकता है ।

उपरोक्त विमर्शित विनिश्चयों में, व्यक्त निर्णयों में से एक निर्णय में माननीय उच्चतम न्यायालय ने ऐसा ही मत व्यक्त किया है । हमें यह भी स्पष्ट है कि यह याचिका माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा यथा अधिकथित विलंब और प्रमाद द्वारा प्रभावित नहीं है कि **जब दोष सतत है या जब यह तीसरे पक्षकारों के अधिकारों को प्रभावित नहीं करता, अनुतोष मंजूर किया जाए** ।

उत्तर-पूर्व राज्य सहित विभिन्न राज्यों की अधिसूचनाएं और सरकारी आदेश इस प्रकार हैं :–

(i) वित्त (वेतन अनुसंधान यूनिट) विभाग, असम सरकार, दिशपुर, गुवाहाटी-6 द्वारा जारी सं. एफ.पी.सी.5/2010/154 तारीख 11 मई, 2010, दिशपुर ।

(ii) अरुणाचल प्रदेश लोक सेवा आयोग, इटानगर द्वारा जारी सं. पी.एस.सी.-आर.(बी.) 07/2015 तारीख 3 अगस्त, 2015.

(iii) हिमाचल प्रदेश, उच्च शिक्षा विभाग (उच्च शिक्षा - ए. अनुभाग), शिमला -2 द्वारा जारी सं. ई.डी.एन.-ए.-ख(15)13/2010 तारीख 17 मार्च, 2012.

(iv) उच्च और तकनीकी शिक्षा विभाग, नागालैंड सरकार, नागालैंड, कोहिमा 79004 द्वारा जारी सं. ई.डी.एस./एच.टी.ई./24/91 (पी.टी.) तारीख 24 अगस्त, 2010.

(v) उच्च शिक्षा विभाग, उड़ीसा सरकार द्वारा जारी सं. आई.-एच.ई.-यू.ए.-5/2009.34492/एच.ई. तारीख 24 दिसंबर, 2009.

(vi) उच्च शिक्षा विभाग, सी.एस. ब्रांच पश्चिमी बंगाल सरकार, विकास भवन, शाल्ट लेक, कोलकाता - 700091 द्वारा जारी सं. 533-ई.डी.एन. (सी.एस.) 5 पी. - 52/98 तारीख 28 अगस्त, 2009.

(vii) कर्नाटक सरकार द्वारा जारी जी.ओ. सं. ई.डी. 96 डी.टी.ई. 2010 तारीख 7 मार्च, 2011.

(viii) उच्च और तकनीकी शिक्षा विभाग, मिजोरम सरकार द्वारा जारी सं. जी. 12017/6/2009-एस.टी.ई. तारीख 25 नवंबर, 2010.

उपरोक्त अधिसूचनाओं और सरकारी आदेशों से हमें यह भी स्पष्ट है कि अन्य राज्यों में ऐसे अध्यापक जो यू. जी. सी. वेतनमान पा रहे हैं, यथा उपरोक्त निर्दिष्ट राज्य भत्ते भी पा रहे हैं ।

19. इन सभी अधिसूचनाओं और सरकारी आदेशों पर विचार करने के पश्चात्, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मेघालय सरकार एक अपवाद है और आगे हमें यह प्रतीत होता है कि अध्यापकों की सामाजिक सुरक्षा और अन्य फायदों के बारे में सोचने के बजाय, हमेशा प्रतिकूल विनिश्चय ले रहे हैं जिसे मंजूर नहीं किया जा सकता और विधि की दृष्टि से अस्वीकार्य है । अतः हम उच्च और तकनीकी शिक्षा संयुक्त निदेशक, मेघालय, शिलांग द्वारा जारी पत्र सं. सी.ई./एम.सी.टी.ए./1/98/123 तारीख 6 अगस्त, 2002 (रिट याचिका का उपाबंध 10) को अपास्त करने के लिए मजबूर हैं । तद्नुसार रिट याचिका का उपाबंध 10 अपास्त किया जाता है ।

20. माननीय उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त मताभिव्यक्तियों से यह भी स्पष्ट है कि एक बार अध्यापकों या किसी अन्य कर्मचारी को भत्ते या अन्य फायदे और सुविधाएं मंजूर किए जाने पर, इसे प्रत्याहृत या कम नहीं किया जा सकता । अतः, वसूली का प्रश्न जो सरकार द्वारा अपनाया गया है, विधि के नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के प्रतिकूल है ।

21. उपरोक्त विमर्शित कारणों से हम राज्य प्रत्यर्थियों को वसूले गए ऐसे भत्ते जो अध्यापकों को पहले संदत्त किए गए थे, वापस करने और उस तारीख जिससे यह रोका गया था, सरकारी महाविद्यालय अध्यापकों द्वारा लिए जा रहे उक्त सभी भत्तों को प्रत्यावर्तित करने का निदेश देते हैं । हम राज्य सरकार को उनकी वेतन वृद्धि और अन्य भत्ते जब कभी यह शोध्य है, देने का भी निदेश देते हैं ।

22. इन मताभिव्यक्तियों और निदेशों के साथ रिट याचिका मंजूर की जाती है और निपटाई जाती है । आगे यह निदेश दिया जाता है कि इस निर्णय और आदेश की तारीख से 45 दिनों के भीतर संपूर्ण प्रक्रिया पूरी की जाए ।

याचिका मंजूर की गई ।

पा.

रवीन्द्र कुमार बंसल और अन्य

बनाम

पंकज गुप्ता और अन्य

तारीख 16 जुलाई, 2018

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 1, नियम 10(2) – धनीय वाद – प्रतिदाय में व्यतिक्रम – आवश्यक पक्षकार बनाने के लिए आवेदन – करार के हिताधिकारी को पक्षकार बनाने के लिए आवेदन – प्रतिवादी द्वारा लिए गए ऋण के संदाय के संबंध में दो पूर्व-दिनांकित चैक जारी किया जाना – इस तथ्य का उल्लेख वादपत्र या आवेदन में न होना – साक्ष्य से यह साबित होना कि प्रस्तावित प्रोफार्मा प्रतिवादी द्वारा धन की वसूली के लिए कोई कार्यवाही आरंभ नहीं की गई है – विवाद के न्यायनिर्णयन के लिए प्रस्तावित प्रोफार्मा प्रतिवादी को पक्षकार बनाना न तो आवश्यक है और न ही युक्तियुक्त है ।

आवेदक-वादियों की ओर से सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 के साथ पठित धारा 151 के अधीन फाइल किए गए वर्तमान आवेदन द्वारा प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 4 के रूप में श्री वीरभान गोयल का नाम जोड़ने के लिए अनुरोध किया गया है । ऊपर निर्दिष्ट आवेदन में किए गए अनुरोध का अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा आवेदन में विस्तृत उत्तर फाइल करके विरोध किया गया है । आवेदक-वादियों ने तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के निबंधनों में 4,74,32,000/- रुपए की धनराशि की वसूली के लिए ऊपर उल्लिखित वाद फाइल किया था । आवेदक-वादी तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के अनुसार अपने सम्पूर्ण साधारण अंशों को अतुल कास्टिंग्स लिमिटेड को अंतरित करने के लिए सहमत हुए थे । उक्त ए. सी. एल. का रजिस्ट्रीकृत कार्यालय ग्राम डांडी कानिया, तहसील नालगढ़, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में स्थित है । उक्त करार प्रत्यर्थियों के हक में 8,51,00,000/- रुपए के कुल प्रतिफल के लिए किया गया था । चूंकि अनावेदक-प्रतिवादी ऊपर निर्दिष्ट करार के निबंधनों में अभिकथित रूप से सम्पूर्ण संदाय करने में विफल रहे इसलिए 2016 का वाद सं. 25, रवीन्द्र कुमार बसंल और अन्य बनाम पंकज गुप्ता और अन्य के शीर्षक से उक्त

धनराशि की वसूली के लिए फाइल किया गया था, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है । न्यायालय द्वारा आवेदन अस्वीकृत किए जाने पर वर्तमान रिट याचिका फाइल की गई । रिट याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अन्यथा भी, जब एक बार यह विवादित नहीं है कि करार के अनुसार यह धनराशि प्रतिवादियों द्वारा संदत्त कर दी गई है या कर दी गई थी तो उपर्युक्त खंड में यथा उल्लिखित धनराशि के संदाय के लिए आवेदक-वादियों से मांग करने के लिए श्री वीरभान गोयल के लिए कोई अवसर नहीं है या कोई अवसर नहीं था । यदि सभी बातों की उपेक्षा भी की जाए, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, तो दो पूर्व दिनांकित चैक पहले ही उपर्युक्त खंड में उल्लिखित चैक धनराशि के संबंध में श्री वीरभान गोयल के हक में जारी कर दिए गए थे और इस प्रकार श्री वीरभान गोयल करार में यथा उल्लिखित तारीख 5 अप्रैल, 2013 के पर्यवसान के पश्चात् कभी भी संबंधित बैंक में इन चैकों को पेश कर सकता था । चैकों का अनादर होने की दशा में वह अनावेदकों-प्रतिवादियों के जिन्होंने श्री वीरभान गोयल के हक में चैक जारी किए थे, विरुद्ध परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन कार्यवाहियां आरंभ कर सकता था । यद्यपि आवेदकों-वादियों ने वादपत्र के पैरा 6 और 7 में यह कहा है कि तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के निबंधनों में श्री वीरभान गोयल के हक में जारी किए गए चैक वस्तुतः छीन लिए गए थे और अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा नष्ट कर दिए गए थे और इस संबंध में पुलिस में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट भी लिखाई गई थी तथापि, अनावेदकों-प्रतिवादियों ने अपने लिखित कथन में उपर्युक्त तथ्य को विवादित करते हुए स्पष्ट रूप से यह कहा है कि प्रश्नगत चैकों की धनराशि के बदले में मैसर्स श्री कांगड़ा स्टील लिमिटेड को सामग्री का प्रदाय किया गया था । अन्यथा भी इन अभिकथनों-उत्तर अभिकथनों पर आवेदन को विनिश्चित करने के प्रक्रम पर विचार नहीं किया जा सकता है तथापि, इनका संबंधित पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर पेश किए गए साक्ष्य के आधार पर मुख्य वाद में विनिश्चय किया जाएगा । यह बात विवादित नहीं है कि श्री वीरभान गोयल के जिसे पक्षकार के रूप में जोड़ने के लिए आवेदन दिया गया है, विरुद्ध किसी प्रकार का दावा नहीं किया गया है या अनुतोष नहीं मांगा गया है तथापि, आवेदकों-वादियों ने स्वयं ही पैरा 5 में यह स्वीकार किया है कि श्री वीरभान गोयल के विरुद्ध किसी अनुतोष का दावा नहीं किया गया है और इसके साथ-साथ उन्होंने अपनी इस दलील को साबित करने के लिए कोई तर्कसंगत और स्वीकार किए

जाने योग्य कारण नहीं दिए हैं कि श्री वीरभान गोयल को पक्षकार बनाना वर्तमान मामले के न्यायनिर्णयन के लिए आवश्यक तथा युक्तियुक्त है । यह सही है कि तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के अनुसार श्री वीरभान गोयल को कुछ धनराशि प्राप्त करनी है तथापि, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि यह धनराशि अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा संदेय है और इस संबंध में श्री वीरभान गोयल द्वारा अनावेदकों-प्रतिवादियों के विरुद्ध कार्रवाई, यदि कोई हो, की जानी थी, यदि ऐसा उक्त धनराशि की वसूली के लिए विधि के अधीन अनुज्ञेय हो । निश्चित रूप से आवेदक-वादियों को श्री वीरभान गोयल के लिए पक्ष-पत्र नहीं माना जा सकता जिसने स्वयं को पक्षकार बनाने के लिए इस न्यायालय में समावेदन करना पसंद नहीं किया । समान रूप में सुश्री कोटवाल अभिलेख के आधार पर यह उपदर्शित करने में असमर्थ हैं कि श्री वीरभान गोयल ने जिसके संबंध में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाने के लिए आवेदन किया गया है, किसी न्यायालय में करार के निबंधनों में धनराशि की वसूली के लिए कोई कार्यवाही आरंभ की है । समान रूप में यद्यपि यह न्यायालय सुश्री कोटवाल की इस दलील से सहमत है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10(2) में उल्लिखित उपबंधों का सम्पूर्ण प्रयोजन विभिन्न कार्यवाहियों से बचना है तथापि, वर्तमान मामले में यद्यपि तारीख 21 मार्च, 2013 के करार में श्री वीरभान गोयल के नाम का उल्लेख है तथापि, करार के अनुसार आवेदकों-वादियों द्वारा श्री वीरभान गोयल को धनराशि का संदाय करने के लिए कोई असमर्थता, यदि कोई हो, प्रतीत नहीं होती, इसके बजाय धनराशि, यदि कोई हो, अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा संदत्त की जानी है और इस संबंध में कार्यवाहियां, यदि कोई हों, श्री वीरभान गोयल द्वारा अनावेदकों-प्रतिवादियों के विरुद्ध आरंभ की गई हैं या आरंभ की गई थीं । अन्यथा भी दोहराते हुए यह संप्रेक्षण किया जा सकता है कि आवेदकों-वादियों द्वारा अभिलेख पर यह उपदर्शित करने वाली कोई सामग्री पेश नहीं की गई है कि श्री वीरभान गोयल नामक व्यक्ति आवेदकों-वादियों से करार के निबंधनों में धन के लिए किसी प्रकार का बल दे रहा है । परिणामतः ऊपर की गई विस्तृत चर्चा को दृष्टिगत करते हुए इस न्यायालय का यह समाधान हो गया है कि श्री वीरभान गोयल को प्रोफार्मा प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाना मामले के समुचित न्यायनिर्णयन के लिए वर्तमान कार्यवाहियों में आवश्यक या युक्तियुक्त नहीं है । तद्नुसार याचिका बल न होने के कारण खारिज की जाती है । (पैरा 7, 8, 9, 12, 13 और 14)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2015] लेटेस्ट एच. एल. जे. 2015 (एच. पी.) सप्ली. 616 : **चेतराम** बनाम **ब्रजलाल** ; 2

[2012] ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2925 : **विदुर इम्पैक्स एंड ट्रेडर्स प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **तोष अपार्टमेंट्स लिमिटेड** ; 2

[1999] ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 976 : **सावित्री देवी** बनाम **जिला न्यायाधीश, गोरखपुर** ; 2

[1994] ए. आई. आर. 1994 एच. पी. 90 : **स्टेट बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **कृष्णा पोट्टरी उद्योग एसोसिएशन** ; 11

[1958] ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 886 : **रज़िया बेगम** बनाम **साहिबज़ादी अनवर बेगम और अन्य** । 10

आरंभिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2017 की मूल प्रकीर्ण याचिका सं. 406.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका ।

आवेदकों/याचियों की ओर से सुश्री अम्बिका कोटवाल

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री रमाकांत शर्मा और बसंत ठाकुर

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा – आवेदक-वादियों की ओर से सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 के साथ पठित धारा 151 के अधीन फाइल किए गए वर्तमान आवेदन द्वारा प्रोफार्मा प्रतिवादी सं. 4 के रूप में श्री वीरभान गोयल का नाम जोड़ने के लिए अनुरोध किया गया है । ऊपर निर्दिष्ट आवेदन में किए गए अनुरोध का अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा आवेदन में विस्तृत उत्तर फाइल करके विरोध किया गया है । आवेदक-वादियों ने तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के निबंधनों में 4,74,32,000/-

रुपए की धनराशि की वसूली के लिए ऊपर उल्लिखित वाद फाइल किया था । आवेदक-वादी तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के अनुसार अपने सम्पूर्ण साधारण अंशों को अतुल कास्टिंग्स लिमिटेड (जिसे आगे संक्षेप में "ए. सी. एल." कहा गया है) को अंतरित करने के लिए सहमत हुए थे । उक्त ए. सी. एल. का रजिस्ट्रीकृत कार्यालय ग्राम डांडी कानिया, तहसील नालगढ़, जिला सोलन, हिमाचल प्रदेश में स्थित है । उक्त करार प्रत्यर्थियों के हक में 8,51,00,000/- रुपए के कुल प्रतिफल के लिए किया गया था । चूंकि अनावेदक-प्रतिवादी ऊपर निर्दिष्ट करार के निबंधनों में अभिकथित रूप से सम्पूर्ण संदाय करने में विफल रहे इसलिए 2016 का वाद सं. 25, रवीन्द्र कुमार बसंल और अन्य बनाम पंकज गुप्ता और अन्य के शीर्षक से उक्त धनराशि की वसूली के लिए फाइल किया गया था, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है ।

2. आवेदकों-वादियों का प्रतिनिधित्व करने वाली विद्वान् काउंसेल सुश्री अम्बिका कोटवाल ने यह दलील दी कि यदि अभिवचनों का और विवाद्यक विरचित करने के समय के दस्तावेजों का परिशीलन किया जाए तो आवेदक-वादियों के काउंसेल के अनुसार यह स्पष्ट होता है कि तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के खंड 2(ग) के अनुसार श्री वीरभान गोयल नामक व्यक्ति भी उक्त करार का हिताधिकारी है तथापि, अज्ञानतापूर्वक उसे विधि और तथ्यों के सद्भाविक निष्कर्ष के अधीन तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के आधार पर वसूली के लिए वाद में एक प्रतिवादी के रूप में पक्षकार नहीं बनाया जा सका और इसलिए उसे प्रोफार्मा प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाए जाने के लिए आदेश पारित किया जाना चाहिए । सुश्री अम्बिका कोटवाल ने इस न्यायालय का ध्यान तारीख 21 मार्च, 2013 के करार की ओर दिलाते हुए अपनी इस दलील को स्वीकार करने के लिए इस न्यायालय के समक्ष गंभीर प्रयत्न किया है कि चूंकि वीरभान गोयल तारीख 21 मार्च, 2013 के करार का हिताधिकारी है इसलिए उसे मामले के समुचित और पूर्ण न्यायनिर्णयन के लिए समुचित पक्षकार बनाया जाना चाहिए और इसलिए वह प्रोफार्मा प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाए जाने के लिए हकदार है । सुश्री अम्बिका कोटवाल ने उपर्युक्त दलील के समर्थन में इस न्यायालय के समक्ष निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लेते हुए यह दलील दी है कि यह आवश्यक नहीं है कि अनुतोष ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध मांगा जाए जो प्रत्यर्थी या वादी के रूप में पक्षकार के रूप में जोड़ने के लिए प्रस्तावित हो क्योंकि उसकी उपस्थिति अन्यथा भी मामले के

समुचित न्यायनिर्णयन के लिए आवश्यक होगी :–

(1) **सावित्री देवी** बनाम **जिला न्यायाधीश, गोरखपुर**[1] ;

(2) **विदुर इम्पैक्स एंड ट्रेडर्स प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **तोष अपार्टमेंट्स प्राइवेट लिमिटेड**[2] ;

(3) **चेतराम** बनाम **ब्रजलाल**[3] ।

3. सुश्री कोटवाल ने उपर्युक्त निर्णयों का अवलंब लेते हुए यह भी दलील दी है कि वादी अधिष्ठायी अधिकारी होने के नाते अन्यथा भी एक पक्षकार के रूप में किसी व्यक्ति को पक्षकार बनाने के लिए हकदार हैं क्योंकि यदि पक्षकार न बनाने से कोई प्रस्तावित प्रतिवादी इस प्रक्रम पर अन्ततः विभिन्न कार्यवाहियां संचालित करता है तो इससे सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10(2) में उल्लिखित उपबंध का सम्पूर्ण उद्देश्य ही विफल हो जाएगा ।

4. विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री रमाकांत शर्मा ने जिनकी सम्यक् रूप से श्री बसंत ठाकुर ने सहायता की, आवेदक-वादियों की ओर से किए गए उपर्युक्त अनुरोध का विरोध करते हुए बलपूर्वक यह दलील दी कि न तो श्री वीरभान गोयल लंबित वाद के न्यायनिर्णयन के लिए आवश्यक पक्षकार है और न ही समुचित पक्षकार है, इसलिए आवेदन खारिज किए जाने योग्य है । विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री रमाकांत शर्मा ने इस न्यायालय का ध्यान आवेदक-वादियों की ओर से फाइल आवेदन के पैरा 5 की ओर आकर्षित करते हुए यह दलील दी कि चूंकि पक्षकारों का यह स्वीकृत पक्षकथन है कि चूंकि प्रस्तावित प्रोफार्मा प्रतिवादी के विरुद्ध किसी अनुतोष का दावा नहीं किया गया है इसलिए वर्तमान आवेदन में किया गया अनुरोध कोई बल न होने के कारण खारिज किए जाने योग्य है । इसके अतिरिक्त विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री शर्मा ने अनावेदकों-प्रतिवादियों की ओर से फाइल किए गए लिखित कथन का निर्देश करते हुए यह दलील दी कि आवेदक-वादियों द्वारा प्रतिवादियों को 28,83,597/- रुपए देय हैं और इसलिए आवेदकों-वादियों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेल की इस दलील में कोई बल नहीं है कि अनावेदक-प्रतिवादी तारीख 21 मार्च, 2013

---

[1] ए. आई. आर. 1999 एस. सी. 976.

[2] ए. आई. आर. 2012 एस. सी. 2925.

[3] एच. एल. जे. 2015 (एच. पी.) सप्ली. 616.

के करार के निबंधनों में शेष प्रतिफल का संदाय करने में विफल रहे हैं ।

5. पक्षकारों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेलों को सुना गया और अभिलेख का परिशीलन किया गया । यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट है कि तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के निबंधनों में जिसकी विधिमान्यता और वैधता अन्यथा भी इस न्यायालय के समक्ष सिविल वाद की विषयवस्तु है, आवेदक-वादी 8,51,00,000/- रुपए के कुल विक्रय प्रतिफल के लिए अतुल कांस्टिंग लिमिटेड के सम्पूर्ण साधारण अंश प्रतिवादियों के हक में अंतरित करने के लिए सहमत हुए हैं । समान रूप में वादी द्वारा अभिलेख पर पेश किए गए अभिवचनों से यह प्रकट होता है कि आज की तारीख में 4,73,32,000/- रुपए की धनराशि अभिकथित शेष प्रतिफल के संबंध में अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा देय है । जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है कि संविवाद तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के निबंधनों में सम्पूर्ण संदाय के संबंध में है, जो मुख्य वाद में इस न्यायालय के समक्ष न्यायनिर्णयन के लिए लंबित है । निस्संदेह तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के खंड 2(ग) के परिशीलन से यह उपदर्शित होता है कि पक्षकारों के बीच सहमत निबंधनों के अनुसार 225.00 लाख रुपए की धनराशि अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा श्री वीरभान गोयल को संदेय है । यहां यह उल्लेख करना उचित होगा कि उपर्युक्त खंड को उद्धृत किया जाए जैसाकि यह तारीख 21 मार्च, 2013 के करार में उल्लिखित है जो इस प्रकार है :–

> "प्रथम पक्षकार द्वारा श्री वीरभान को संदेय 225.00 लाख रुपए की धनराशि अब द्वितीय पक्षकार द्वारा संदत्त की जाएगी । यदि तारीख 5 अप्रैल, 2013 तक संदाय नहीं किया जाता है तो 1.5 प्रतिशत प्रतिमास की दर से ब्याज भी संदत्त किया जाएगा । इसके लिए दो पूर्व दिनांकित चैक पहले ही श्री वीरभान गोयल को जारी किए जा चुके हैं ।"

6. उपर्युक्त खंड के जो तारीख 21 मार्च, 2013 के करार में उल्लिखित है, परिशीलन मात्र से यह स्पष्ट होता है प्रतिवादी जो करार के द्वितीय पक्षकार हैं, तारीख 5 अप्रैल, 2013 से पूर्व श्री वीरभान गोयल को 225.00 लाख रुपए की धनराशि संदाय करने के लिए बाध्यताधीन है जिसके पश्चात् 1.5 प्रतिशत प्रतिमास की दर से ब्याज संदेय है ।

उपर्युक्त निर्दिष्ट खंड स्पष्ट रूप से यह प्रकट करता है कि करार के

निष्पादन के समय ऊपर निर्दिष्ट धनराशि के दो पूर्व दिनांकित चैक श्री वीरभान गोयल को जारी किए गए थे । आश्चर्यजनक रूप से न तो वादपत्र में और न ही वर्तमान आवेदन में इस बारे में कोई प्रकथन, यदि कोई हो, किया गया है कि उक्त धनराशि उपर्युक्त रूप में प्रतिवादियों द्वारा श्री वीरभान गोयल को संदत्त नहीं की गई है, यहां तक इस संबंध में दिए गए आवेदन में भी कोई उल्लेख नहीं है । इसके अतिरिक्त वादपत्र के पैरा 6 में यह उल्लेख किया गया है कि वीरभान गोयल नामक व्यक्ति आवेदक-प्रतिवादियों से तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के निबंधनों में निरंतर रूप से उक्त धनराशि की मांग कर रहा है, तथापि, आश्चर्यजनक रूप से कोई दस्तावेज-सूचना या सूचनाएं, यदि कोई हों, अभिलेख पर पेश नहीं की गई हैं । इस आवेदन के लंबन के दौरान भी वादियों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेल को पत्र या सूचना जो श्री वीरभान द्वारा जारी की गई हो, अभिलेख पर पेश करने के लिए बार-बार समय देते हुए मामला स्थगित किया गया किन्तु उसके पश्चात् भी ऐसा कोई दस्तावेज पेश नहीं किया गया जो कि आवेदक-वादियों से उपर्युक्त धनराशि का दावा करने के लिए जारी किया गया हो ।

7. अन्यथा भी, जब एक बार यह विवादित नहीं है कि करार के अनुसार यह धनराशि प्रतिवादियों द्वारा संदत्त कर दी गई है या कर दी गई थी तो उपर्युक्त खंड में यथा उल्लिखित धनराशि के संदाय के लिए आवेदक-वादियों से मांग करने के लिए श्री वीरभान गोयल के लिए कोई अवसर नहीं है या कोई अवसर नहीं था । यदि सभी बातों की उपेक्षा भी की जाए, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, तो दो पूर्व दिनांकित चैक पहले ही उपर्युक्त खंड में उल्लिखित चैक धनराशि के संबंध में श्री वीरभान गोयल के हक में जारी कर दिए गए थे और इस प्रकार श्री वीरभान गोयल करार में यथा उल्लिखित तारीख 5 अप्रैल, 2013 के पर्यवसान के पश्चात् कभी भी संबंधित बैंक में इन चैकों को पेश कर सकता था । चैकों का अनादर होने की दशा में वह अनावेदकों-प्रतिवादियों के जिन्होंने श्री वीरभान गोयल के हक में चैक जारी किए थे, विरुद्ध परक्राम्य लिखत अधिनियम की धारा 138 के अधीन कार्यवाहियां आरंभ कर सकता था । यद्यपि आवेदकों-वादियों ने वादपत्र के पैरा 6 और 7 में यह कहा है कि तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के निबंधनों में श्री वीरभान गोयल के हक में जारी किए गए चैक वस्तुतः छीन लिए गए थे और अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा नष्ट कर दिए गए थे और इस संबंध में पुलिस में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट

भी लिखाई गई थी तथापि, अनावेदकों-प्रतिवादियों ने अपने लिखित कथन में उपर्युक्त तथ्य को विवादित करते हुए स्पष्ट रूप से यह कहा है कि प्रश्नगत चैकों की धनराशि के बदले में मैसर्स श्री कांगड़ा स्टील लिमिटेड को सामग्री का प्रदाय किया गया था । अन्यथा भी इन अभिकथनों-उत्तर अभिकथनों पर आवेदन को विनिश्चित करने के प्रक्रम पर विचार नहीं किया जा सकता है तथापि, इनका संबंधित पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर पेश किए गए साक्ष्य के आधार पर मुख्य वाद में विनिश्चय किया जाएगा ।

8. यह बात विवादित नहीं है कि श्री वीरभान गोयल के जिसे पक्षकार के रूप में जोड़ने के लिए आवेदन दिया गया है, विरुद्ध किसी प्रकार का दावा नहीं किया गया है या अनुतोष नहीं मांगा गया है तथापि, आवेदकों-वादियों ने स्वयं ही पैरा 5 में यह स्वीकार किया है कि श्री वीरभान गोयल के विरुद्ध किसी अनुतोष का दावा नहीं किया गया है और इसके साथ-साथ उन्होंने अपनी इस दलील को साबित करने के लिए कोई तर्कसंगत और स्वीकार किए जाने योग्य कारण नहीं दिए हैं कि श्री वीरभान गोयल को पक्षकार बनाना वर्तमान मामले के न्यायनिर्णयन के लिए आवश्यक तथा युक्तियुक्त है ।

9. यह सही है कि तारीख 21 मार्च, 2013 के करार के अनुसार श्री वीरभान गोयल को कुछ धनराशि प्राप्त करनी है तथापि, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि यह धनराशि अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा संदेय है और इस संबंध में श्री वीरभान गोयल द्वारा अनावेदकों-प्रतिवादियों के विरुद्ध कार्रवाई, यदि कोई हो, की जानी थी, यदि ऐसा उक्त धनराशि की वसूली के लिए विधि के अधीन अनुज्ञेय हो । निश्चित रूप से आवेदक-वादियों को श्री वीरभान गोयल के लिए पक्ष पत्र नहीं माना जा सकता जिसने स्वयं को पक्षकार बनाने के लिए इस न्यायालय में समावेदन करना पसंद नहीं किया । समान रूप में सुश्री कोटवाल अभिलेख के आधार पर यह उपदर्शित करने में असमर्थ है कि श्री वीरभान गोयल ने जिसके संबंध में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाने के लिए आवेदन किया गया है, किसी न्यायालय में करार के निबंधनों में धनराशि की वसूली के लिए कोई कार्यवाही आरंभ की है ।

10. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि की प्रतिपादना के बारे में कोई विवाद नहीं किया जा सकता जिसका कि सुश्री कोटवाल द्वारा अवलंब लिया गया है कि यह आवश्यक नहीं है कि उस पक्षकार के विरुद्ध कोई अनुतोष मांगा जाए जिसे पक्षकार बनाने के लिए आवेदन किया

गया है अपितु यह साबित किया जाना चाहिए कि एक पक्षकार के रूप में पक्षकार बनाए जाने के लिए प्रस्तावित व्यक्ति का नाम आवश्यक या युक्तियुक्त है और आवेदकों द्वारा यह साबित करना/उपदर्शित करना अपेक्षित है कि ऐसे किसी व्यक्ति का मामले में प्रत्यक्ष हित है जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **रज़िया बेगम** बनाम **साहिबज़ादी अनवर बेगम और अन्य**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है, जिसमें इस प्रकार मत व्यक्त किया गया है :–

"13. इन चर्चाओं के परिणामस्वरूप हम निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुंचते हैं –

(1) सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1 के नियम 10 के अधीन पक्षकारों को जोड़ने का प्रश्न सामान्यतया न्यायालय की आरंभिक अधिकारिता में नहीं है तथापि, ऐसे मामले न्यायिक विवेक की विषयवस्तु होते हैं जिसे किसी विशिष्ट मामले के सम्पूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टिगत करते हुए प्रयुक्त किया जाना चाहिए । तथापि, कतिपय मामलों में न्यायालय की शक्तियों के संबंध में अन्तर्निहित अधिकारिता के संबंध में संविवाद उत्पन्न हो सकते हैं या दूसरे शब्दों में अधिकारिता परिसीमित अर्थ में है और इसे संहिता की धारा 115 में प्रयुक्त किया गया है ;

(2) संपत्ति से संबंधित किसी वाद में किसी व्यक्ति को एक पक्षकार के रूप में जोड़ा जा सकता है तथापि, उसका प्रत्यक्ष हित होना चाहिए जो कि मुकदमेदारी की विषयवस्तु में किसी वाणिज्यक हित से भिन्न हो ;

(3) जहां किसी मुकदमेदारी की विषय-वस्तु प्रास्थिति के संबंध में या किसी विधिक चरित्र के संबंध में घोषणा है वहां वर्तमान या प्रत्यक्ष हित के नियम को किसी उपयुक्त मामले में शिथिल किया जा सकता है, जहां न्यायालय की यह राय है कि ऐसे पक्षकार को जोड़ने से संविवाद के न्यायनिर्णयन के लिए प्रभावी रूप से या पूर्ण रूप से बेहतर स्थिति बनेगी ;

(4) अंतिम प्रतिपादना में अनुध्यात मामलों का विनिर्दिष्ट

---

[1] ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 886.

अनुतोष अधिनियम की धारा 42 और 43 के कानूनी उपबंधों के अनुसरण में अवधारण किया जाना चाहिए ;

(5) कानूनी उपबंधों के अन्तर्गत आने वाले मामलों में न्यायालय मात्र प्रतिवादी द्वारा दावे के ग्रहण किए जाने पर अनुरोध की गई घोषणा को मंजूर करने के लिए आबद्ध नहीं है यदि न्यायालय के पास ग्रहण किए जाने के अतिरिक्त स्पष्ट सबूत पर बल देने के लिए कारण मौजूद हैं ;

(6) प्रास्थिति के प्रश्न पर घोषणात्मक डिक्री का परिणाम, जैसा कि वर्तमान मामले में संविवाद है, न केवल न्यायालय के समक्ष के वास्तविक पक्षकारों को अपितु आगे आने वाले उनके उत्तराधिकारियों को प्रभावित करेगा और इस विचारणा को दृष्टिगत करते हुए वर्तमान हित का नियम जैसा कि संपत्ति से संबंधित विवादों से विधिक मामलों द्वारा कहा गया, पूर्ण शक्ति के साथ लागू नहीं होता ;

(7) विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम की धारा 43 में अधिकथित नियम निश्चित रूप से पुनः न्याय का नियम नहीं है । यह एक अर्थ में संकुचित है तथापि, दूसरे अर्थ में विस्तृत है ।"

11. इसके अतिरिक्त इस न्यायालय ने **स्टेट बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **कृष्णा पोट्टरी उद्योग एसोसिएशन**[1] वाले मामले में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है :–

"8. वर्तमान वाद में संविदा का संबंध प्रश्नगत वाद के पक्षकारों के बीच है । तथ्यतः बोर्ड का ऋण देने या उसका प्रतिदाय करने से संबंधित निबंधनों और शर्तों से किसी प्रकार का संबंध नहीं है । इसके अतिरिक्त बोर्ड ऋणी को ब्याज सहायिकी का फायदा देने के लिए तैयार था यदि पक्षकार की अपनी लघु उद्योग इकाई है और यह फायदा ऋणियों के मामले में लागू स्कीम के अधीन दिया गया था । यह सुस्थापित है कि किसी पक्षकार को वाद में एक प्रतिवादी के रूप में जोड़ने के लिए उसका मुकदमेदारी की विषयवस्तु में विधिक हित होना चाहिए और ऐसा विधिक हित किसी साम्यापूर्ण हित से भिन्न न हो अपितु ऐसा हित हो जिसे विधि मान्यता देती हो । ऐसे किसी

[1] ए. आई. आर. 1994 एच. पी. 90.

व्यक्ति को जो मुकदमेदारी के परिणाम से अप्रत्यक्ष रूप से या वाणिज्यिक रूप से प्रभावित होता हो, एक पक्षकार के रूप में ऐसा पक्षकार नहीं बनाया जा सकता जो विवाद की विषयवस्तु में प्रत्यक्ष हित रखता हो । 'वाद में अन्तर्वलित सभी प्रश्न' पद को 'वाद के पक्षकारों के बीच अन्तर्वलित' प्रश्न के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता । वर्तमान मामले में जैसा कि संप्रेक्षण किया गया है, बोर्ड केवल प्रतिवादियों को दिए गए ऋण पर ब्याज के संदाय से आबद्ध था और वह भी उस समय तक जब तक कि उनकी औद्योगिक इकाई/संगम सतत रूप से उत्पादन करती रहे । दिए गए ऋण की धनराशि क्या थी या इसका कैसे प्रतिदाय किया जाएगा, ये प्रश्नगत वाद में पक्षकारों और बोर्ड के बीच निष्पादित संविदात्मक निबंधन नहीं है । अतः मामले को इस दृष्टि से देखते हुए चूंकि बोर्ड का कोई विधिक हित नहीं है इसलिए उसे वर्तमान वाद में प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाए जाने के लिए निदेश नहीं दिया जा सकता । इसके अतिरिक्त वादी-बैंक ने बोर्ड के विरुद्ध किसी अनुतोष की मांग नहीं की है । यह तथ्य भी मामले के इस पहलू पर निकाले गए निष्कर्ष की पुष्टि करता है । तद्नुसार विवाद्यक सं. 1 प्रतिवादियों के विरुद्ध और वादियों के हक में विनिश्चित किया जाता है ।"

12. समान रूप में यद्यपि यह न्यायालय सुश्री कोटवाल की इस दलील से सहमत है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10(2) में उल्लिखित उपबंधों का सम्पूर्ण प्रयोजन विभिन्न कार्यवाहियों से बचना है तथापि, वर्तमान मामले में यद्यपि तारीख 21 मार्च, 2013 के करार में श्री वीरभान गोयल के नाम का उल्लेख है तथापि, करार के अनुसार आवेदकों-वादियों द्वारा श्री वीरभान गोयल को धनराशि का संदाय करने के लिए कोई असमर्थता, यदि कोई हो, प्रतीत नहीं होती, इसके बजाय धनराशि, यदि कोई हो, अनावेदकों-प्रतिवादियों द्वारा संदत्त की जानी है और इस संबंध में कार्यवाहियां, यदि कोई हों, श्री वीरभान गोयल द्वारा अनावेदकों-प्रतिवादियों के विरुद्ध आरंभ की गई हैं या आरंभ की गई थीं ।

13. अन्यथा भी दोहराते हुए यह संप्रेक्षण किया जा सकता है कि आवेदकों-वादियों द्वारा अभिलेख पर यह उपदर्शित करने वाली कोई सामग्री पेश नहीं की गई है कि श्री वीरभान गोयल नामक व्यक्ति आवेदकों-वादियों से करार के निबंधनों में धन के लिए किसी प्रकार का बल दे रहा है ।

14. परिणामतः ऊपर की गई विस्तृत चर्चा को दृष्टिगत करते हुए इस न्यायालय का यह समाधान हो गया है कि श्री वीरभान गोयल को प्रोफार्मा प्रतिवादी के रूप में पक्षकार बनाना मामले के समुचित न्यायनिर्णयन के लिए वर्तमान कार्यवाहियों में आवश्यक या युक्तियुक्त नहीं है । तद्नुसार याचिका बल न होने के कारण खारिज की जाती है ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

मह.

संसद् के अधिनियम

श्रमजीवी पत्रकार और अन्य समाचारपत्र कर्मचारी (सेवा की शर्तें) और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1955

(1955 का अधिनियम संख्यांक 45)[1]

[20 दिसम्बर, 1955]

समाचारपत्र-स्थापनों में नियोजित श्रमजीवी पत्रकारों तथा अन्य व्यक्तियों की कतिपय सेवा की शर्तों को विनियमित करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के छठे वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

अध्याय 1

प्रारंभिक

1. संक्षिप्त नाम और विस्तार – (1) यह अधिनियम [2][श्रमजीवी पत्रकार और अन्य समाचारपत्र कर्मचारी (सेवा की शर्तें) और प्रकीर्ण उपबंध अधिनियम, 1955 कहा जा सकेगा ।

(2) इसका विस्तार [3]*** सम्पूर्ण भारत पर है ।

2. परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

[4][(क) "बोर्ड" से अभिप्रेत है –

(i) श्रमजीवी पत्रकारों के संबंध में धारा 9 के अधीन गठित मजदूरी बोर्ड ; और

---

[1] 1963 के विनियम सं. 11 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा गोवा, दमण और दीव पर तथा 1968 के अधिनियम सं. 26 की धारा 3 और अनुसूची द्वारा पांडिचेरी पर विस्तार किया गया ।

[2] 1974 के अधिनियम सं. 60 की धारा 2 द्वारा "श्रमजीवी पत्रकारों" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1970 के अधिनियम सं. 51 की धारा 2 द्वारा "जम्मू और कश्मीर राज्य के सिवाय" शब्दों को लोप किया गया ।

[4] 1974 के अधिनियम सं. 60 की धारा 3 द्वारा खंड (क) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(ii) पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों के संबंध में धारा 13ग के अधीन गठित मजदूरी बोर्ड ;]

(ख) "समाचारपत्र" से ऐसी कोई छपी हुई नियतकालिक कृति अभिप्रेत है जिसमें सार्वजनिक समाचार या सार्वजनिक समाचारों पर टीका टिप्पणियां हों और इसके अंतर्गत छपी हुई नियतकालिक कृति का ऐसा अन्य वर्ग भी है जो केन्द्रीय सरकार द्वारा शासकीय राजपत्र में समय-समय पर इस निमित्त अधिसूचित किया जाए ;

(ग) "समाचारपत्र कर्मचारी" से कोई श्रमजीवी पत्रकार अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत कोई ऐसा अन्य व्यक्ति भी है जो किसी समाचारपत्र स्थापन में या उसके संबंध में किसी काम को करने के लिए नियोजित किया जाए ;

(घ) "समाचारपत्र-स्थापन" से एक या अधिक समाचारपत्रों के उत्पादन या प्रकाशन के लिए अथवा कोई समाचार एजेन्सी या सिंडिकेट चलाने के लिए किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के निकाय के, चाहे वह निगमित हो या नहीं, नियंत्रण के अधीन कोई स्थापन अभिप्रेत है [1][और इसके अंतर्गत ऐसे समाचारपत्र-स्थापन भी हैं जो अनुसूची के अधीन एक स्थापन के रूप में विनिर्दिष्ट हैं ।]

स्पष्टीकरण – इस खंड के प्रयोजनों के लिए, –

(क) समाचारपत्र-स्थापनों के विभिन्न विभागों, शाखाओं और केन्द्रों को उनका भाग समझा जाएगा ;

(ख) मुद्रणालय समाचारपत्र-स्थापन समझा जाएगा, यदि उसका मुख्य कारबार समाचारपत्र मुद्रित करना है ;

[2][(घघ) "पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारी" से कोई ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जो किसी समाचारपत्र-स्थापन में या उसके संबंध में किसी काम को करने के लिए नियोजित किया जाता है किन्तु इसके अंतर्गत ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है जो –

(i) श्रमजीवी पत्रकार है, या

---

[1] 1989 के अधिनियम सं. 31 की धारा 2 द्वारा भूतलक्षी रूप से अंत:स्थापित ।

[2] 1974 के अधिनियम सं. 60 की धारा 3 द्वारा अंत:स्थापित ।

(ii) मुख्य रूप से प्रबन्धकीय या प्रशासकीय हैसियत में नियोजित है, या

(iii) पर्यवेक्षकीय हैसियत में नियोजित होते हुए या तो अपने पद से संलग्न कर्तव्यों की प्रकृति के कारण या अपने में निहित शक्तियों के कारण ऐसे कृत्यों का पालन करता है जो मुख्यत: प्रबन्धक प्रकृति के हैं ;]

(ङ) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

[1][(ङङ) "अधिकरण" से –

(i) श्रमजीवी पत्रकारों के संबंध में धारा 13कक के अधीन गठित अधिकरण अभिप्रेत है ; और

(ii) पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों के संबंध में धारा 13घघ के अधीन गठित अधिकरण अभिप्रेत है ;]

[2][(ङङङ) "मजदूरी" से अभिप्रेत है धन के रूप में अभिव्यक्त किए जाने योग्य सभी ऐसे पारिश्रमिक, जो नियोजन के अभिव्यक्त या विवक्षित निबंधनों के पूरा किए जाने की दशा में समाचारपत्र कर्मचारी को उसके नियोजन या ऐसे नियोजन में किए गए कार्य की बाबत संदेय होंगे, और इसके अंतर्गत निम्नलिखित हैं –

(i) ऐसे भत्ते (जिनके अंतर्गत महंगाई भत्ता भी है), जिनका समाचारपत्र कर्मचारी तत्समय हकदार है ;

(ii) किसी गृह-वास सुविधा या बिजली, पानी, चिकित्सीय परिचर्या या अन्य सुख-सुविधा के प्रदाय या किसी सेवा का या खाद्यान्न या अन्य वस्तुओं के किसी रियायती प्रदाय का मूल्य ;

(iii) कोई यात्रा रियायत,

किन्तु इसके अंतर्गत निम्नलिखित नहीं है –

(क) कोई बोनस ;

(ख) नियोजक द्वारा तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन किसी

---

[1] 1979 के अधिनियम सं. 6 की धारा 2 द्वारा (31-1-1979 से) अंत:स्थापित ।

[2] 1989 के अधिनियम सं. 31 की धारा 2 द्वारा (भूतलक्षी रूप से) अंत:स्थापित ।

पेंशन निधि या भविष्य निधि में या समाचारपत्र कर्मचारी के फायदे के लिए संदत्त या संदेय कोई अभिदाय ;

(ग) उसकी सेवा की समाप्ति पर संदेय कोई उपदान ।

स्पष्टीकरण – इस खंड में "मजदूरी" शब्द के अंतर्गत समय-समय पर नियत किए गए किसी भी वर्णन के नए भत्ते यदि कोई हों, होंगे ;]

(च) "श्रमजीवी पत्रकार" से कोई ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है, जिसका मुख्य व्यवसाय पत्रकार का है और [1][जो एक या अधिक समाचारपत्र-स्थापनों में या उसके या उनके संबंध में या तो पूर्णकालिक रूप से या अंशकालिक रूप से इस हैसियत में नियोजित है] और उसके अंतर्गत सम्पादक, अग्रलेख लेखक, समाचार सम्पादक, उप-सम्पादक, फीचर लेखक, प्रकाशन-विवेचक रिपोर्टर, संवाददाता, व्यंग्यचित्रकार. समाचार-फोटोग्राफर और प्रूफ रीडर भी हैं, किन्तु ऐसा कोई व्यक्ति इसके अंतर्गत नहीं है जो –

(i) मुख्य रूप से प्रबंधकीय या प्रशासकीय हैसियत में नियोजित है ; या

(ii) पर्यवेक्षकीय हैसियत में नियोजित होते हुए या तो अपने पद से संलग्न कर्तव्यों की प्रकृति के कारण या अपने में निहित शक्तियों के कारण ऐसे कृत्यों का पालन करता है जो मुख्यत: प्रबंधकीय प्रकृति के हैं ;

(छ) ऐसे सब शब्दों और पदों के, जो इस अधिनियम में प्रयुक्त किए गए हैं किन्तु परिभाषित नहीं किए गए हैं और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14) में परिभाषित किए गए हैं वे ही अर्थ होंगे जो उन्हें उस अधिनियम में क्रमश: दिए गए हैं ।

अध्याय 2

श्रमजीवी पत्रकार

3. 1947 के अधिनियम 14 का श्रमजीवी पत्रकारों को लागू होना – (1) तत्समय यथा प्रवृत्त औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के उपबंध

---

[1] 1981 के अधिनियम सं. 36 की धारा 2 द्वारा (13-8-1980 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट उपान्तरण के अध्यधीन रहते हुए श्रमजीवी पत्रकारों को या उनके संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे उन व्यक्तियों को या उनके संबंध में लागू होते हैं जो उस अधिनियम के अर्थ में कर्मकार हैं ।

(2) श्रमजीवी पत्रकारों के संबंध में लागू होने में पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 25च का ऐसा अर्थ लगाया जाएगा मानो उसके खंड (क) में, कर्मकार की छंटनी के संबंध में उसमें विनिर्दिष्ट सूचना की कालावधि के स्थान पर श्रमजीवी पत्रकार की छंटनी के संबंध में सूचना की निम्नलिखित कालावधियां रख दी गई हों, अर्थात् :–

(क) सम्पादक की दशा में, छह मास, और

(ख) किसी अन्य श्रमजीवी पत्रकार की दशा में, तीन मास ।

4. छंटनी के कतिपय मामलों के बारे में विशेष उपबंध – जहां 1954 की जुलाई के 14वें दिन और 1955 के मार्च के 12वें दिन के बीच किसी समय किसी श्रमजीवी पत्रकार की छंटनी की गई है वहां वह नियोजक से निम्नलिखित पाने का हकदार होगा –

(क) एक मास की मजदूरी, उस दर पर, जिसके लिए वह अपनी छंटनी से ठीक पहले हकदार था, तब के सिवाय जबकि ऐसी छंटनी से पूर्व उसे एक मास की लिखित सूचना दे दी गई थी, तथा

(ख) प्रतिकर, जो उस नियोजक के अधीन सेवा के प्रत्येक संपूरित वर्ष या उसके छह मास से अधिक के किसी भाग के लिए पन्द्रह दिन के औसत वेतन के बराबर होगा ।

[1][**5. उपदान के संदाय** – (1) जहां –

(क) कोई श्रमजीवी पत्रकार, चाहे उस अधिनियम के प्रारम्भ से पूर्व या पश्चात् किसी समाचारपत्र-स्थापन में लगातार तीन वर्ष से अन्यून समय तक सेवा में रहा है, और –

(i) उस समाचारपत्र-स्थापन के संबंध में उसकी सेवाओं को नियोजक द्वारा समाप्ति, अनुशासनिक कार्यवाही के तौर पर दिए गए दंड से भिन्न किसी भी कारण से की जाती है, या

---

[1] 1962 के अधिनियम सं. 65 की धारा 3 द्वारा (15-1-1963 से) धारा 5 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(ii) वह अधिवर्षिता की आयु का होने पर सेवा से निवृत्त हो जाता है ; अथवा

(ख) कोई श्रमजीवी पत्रकार, चाहे इस अधिनियम के प्रारम्भ से पूर्व या पश्चात्, किसी समाचारपत्र-स्थापन में लगातार दस वर्ष से अन्यून समय तक सेवा में रहा है और वह उस समाचारपत्र-स्थापन में सेवा से अंत:करण से भिन्न किसी भी आधार पर 1961 की जुलाई के प्रथम दिन को या उसके पश्चात् स्वेच्छया पद त्याग कर देता है ; या

(ग) कोई श्रमजीवी पत्रकार, चाहे इस अधिनियम के प्रारम्भ से पूर्व या पश्चात्, किसी समाचारपत्र-स्थापन में, लगातार तीन वर्ष से अन्यून समय तक सेवा में रहा है और वह उस स्थापन में सेवा से, अंत:करण के आधार पर 1961 की जुलाई के प्रथम दिन को या उसके पश्चात् स्वेच्छया पद त्याग कर देता है ; या

(घ) कोई श्रमजीवी पत्रकार, किसी समाचारपत्र-स्थापन में सेवा के दौरान मर जाता है वहां उस श्रमजीवी पत्रकार को, या उसकी मृत्यु की दशा में, यथास्थिति, उसके नामनिर्देशिती या नामनिर्देशितियों को या यदि श्रमजीवी पत्रकार की मृत्यु के समय कोई नामनिर्देशन प्रवृत्त न हो तो उसके कुटुम्ब को, ऐसी समाप्ति, निवृत्ति, पदत्याग या मृत्यु पर, उस स्थापन के संबंध में नियोजक द्वारा ऐसा उपदान, जो सेवा के प्रत्येक सम्पूरित वर्ष या उसके छह मास से अधिक के किसी भाग के लिए पन्द्रह दिन के औसत वेतन के बराबर होगा, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14) के अधीन प्रोद्भूत होने वाले किन्हीं फायदों या अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, संदत्त किया जाएगा :

परन्तु खंड (ख) में निर्दिष्ट श्रमजीवी पत्रकार की दशा में उपदान की कुल रकम जो उसको संदेय होगी साढ़े-बारह मास के औसत वेतन से अधिक नहीं होगी :

परन्तु यह और कि जहां कोई श्रमजीवी पत्रकार किसी ऐसे समाचारपत्र-स्थापन में नियोजित है जिसमें इस अधिनियम के प्रारंभ से ठीक पहले के बारह मास के किसी दिन छह से अनधिक श्रमजीवी पत्रकार नियोजित थे वहां ऐसे समाचारपत्र-स्थापन में नियोजित किसी श्रमजीवी पत्रकार को ऐसे प्रारंभ से पूर्व सेवा की किसी कालावधि के

लिए संदेय उपदान सेवा के प्रत्येक सम्पूरित वर्ष या उसके छह मास से अधिक के किसी भाग के लिए पन्द्रह दिन के औसत वेतन के बराबर नहीं होगा किन्तु निम्नलिखित के बराबर होगा :–

(क) सेवा के प्रत्येक संपूरित वर्ष या उसके छह मास से अधिक के किसी भाग के लिए तीन दिन का औसत वेतन यदि ऐसी पिछली सेवा की कालावधि पांच वर्ष से अधिक नहीं है ;

(ख) सेवा के प्रत्येक सम्पूरित वर्ष या उसके छह मास से अधिक के किसी भाग के लिए पांच दिन का औसत वेतन यदि ऐसी पिछली सेवा की कालावधि पांच वर्ष से अधिक है किन्तु दस वर्ष से अधिक नहीं है ; तथा

(ग) सेवा के प्रत्येक संपूरित वर्ष या उसके छह मास से अधिक के किसी भाग के लिए सात दिन का औसत वेतन यदि ऐसी पिछली सेवा की कालावधि दस वर्ष से अधिक है ।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा और धारा 17 की उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए "कुटुम्ब" से अभिप्रेत है –

(i) पुरुष श्रमजीवी पत्रकार की दशा में, उसकी विधवा, बच्चे, चाहे विवाहित हों या अविवाहित, और उसके आश्रित माता-पिता और उसके मृत पुत्र की विधवा और बच्चे :

परन्तु किसी विधवा को श्रमजीवी पत्रकार के कुटुम्ब का सदस्य नहीं समझा जाएगा यदि उसकी मृत्यु के समय वह उसके द्वारा भरण-पोषण की वैध रूप से हकदार नहीं थी ;

(ii) महिला श्रमजीवी पत्रकार की दशा में, उसका पति, बच्चे, चाहे विवाहित हों या अविवाहित, और श्रमजीवी पत्रकार के या उसके पति के आश्रित माता-पिता और उसके मृत पुत्र की विधवा और बच्चे :

परन्तु यदि उस महिला श्रमजीवी पत्रकार ने अपने पति को कुटुम्ब से अपवर्जित करने की अपनी इच्छा अभिव्यक्त की है तो पति और पति के आश्रित माता-पिता उस महिला श्रमजीवी पत्रकार के कुटुम्ब के भाग नहीं समझे जाएंगे,

और उपर्युक्त दोनों ही दशाओं में, यदि श्रमजीवी पत्रकार के या श्रमजीवी पत्रकार के मृत पुत्र के बच्चे को किसी अन्य व्यक्ति द्वारा

दत्तक ले लिया गया है और यदि दत्तकगृहीता की स्वीय विधि के अधीन, दत्तकग्रहण वैध रूप से मान्य है तो ऐसा बच्चा उस श्रमजीवी पत्रकार के कुटुम्ब का सदस्य नहीं समझा जाएगा ।

(2) इस बाबत कोई विवाद कि क्या किसी श्रमजीवी पत्रकार ने अपने अंत:करण के आधार पर किसी समाचारपत्र-स्थापन में सेवा से स्वेच्छया पदत्याग कर दिया है, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14) या किसी राज्य में प्रवृत्त औद्योगिक विवादों की जांच-पड़ताल और निपटारे से संबद्ध किसी तत्समान विधि के अर्थ में औद्योगिक विवाद समझा जाएगा ।

(3) जहां कोई नामनिर्देशिती अवयस्क है और उपधारा (1) के अधीन उपदान उसकी आवश्यकता के दौरान संदेय हो गया है वहां वह धारा 5क की उपधारा (3) के अधीन नियुक्त व्यक्ति को संदत्त किया जाएगा :

परन्तु जहां ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है वहां संदाय सक्षम न्यायालय द्वारा नियुक्त, अवयस्क की सम्पत्ति के किसी संरक्षक को या जहां ऐसा कोई संरक्षक नियुक्त नहीं किया गया है वहां अवयस्क के माता-पिता में से किसी को या जहां माता-पिता में से कोई भी जीवित नहीं है वहां अवयस्क के किसी अन्य संरक्षक को दिया जाएगा :

परन्तु यह और कि जहां उपदान दो या अधिक नामनिर्देशितियों को संदेय है और उनमें से कोई एक मर जाता है वहां उपदान उत्तरजीवी नामनिर्देशिती या नामनिर्देशितियों को संदत्त किया जाएगा ।

5क. श्रमजीवी पत्रकार द्वारा नामनिर्देशन – (1) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में, या वसीयत द्वारा अथवा अन्यथा किए गए किसी व्ययन में, श्रमजीवी पत्रकार को संदेय किसी उपदान की बाबत किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी श्रमजीवी पत्रकार को तत्समय देय उपदान का संदाय प्राप्त करने का अधिकार किसी व्यक्ति को प्रदत्त करना विहित रीति से किए गए किसी नामनिर्देशन से तात्पर्यित है वहां नामनिर्देशिती, उस श्रमजीवी पत्रकार की मृत्यु पर, अन्य सब व्यक्तियों का अपवर्जन करके उस उपदान का और उसकी बाबत देयराशि का संदाय प्राप्त करने का हकदार होगा जब तक कि वह नामनिर्देशन विहित रीति से परिवर्तित नहीं कर दिया जाता या रद्द नहीं कर दिया जाता ।

(2) उपधारा (1) में निर्दिष्ट नामनिर्देशन उस दशा में शून्य हो जाएगा जिसमें नामनिर्देशिती की मृत्यु या जहां दो या अधिक नामनिर्देशिती हों वहां

सब नामनिर्देशितियों की मृत्यु, नामनिर्देशन करने वाले श्रमजीवी पत्रकार से पहले हो जाती है ।

(3) जहां नामनिर्देशिती अवयस्क है वहां नामनिर्देशन करने वाले श्रमजीवी पत्रकार के लिए यह विधिपूर्ण होगा कि वह नामनिर्देशिती की अवयस्कता के दौरान अपनी मृत्यु हो जाने की दशा में उपदान प्राप्त करने के लिए किसी व्यक्ति को विहित रीति से नियुक्त कर दे ।]

6. काम के घंटे – (1) किन्हीं नियमों के, जो इस अधिनियम के अधीन बनाए जाएं, अध्यधीन रहते हुए, किसी भी श्रमजीवी पत्रकार से यह अपेक्षा नहीं की जाएगी या उससे इस बात की इजाजत नहीं होगी कि वह किसी समाचारपत्र-स्थापन में लगातार चार सप्ताहों की किसी कालावधि के दौरान, भोजन के समयों को छोड़कर, एक सौ चवालीस घंटों से अधिक के लिए काम करे ।

(2) प्रत्येक श्रमजीवी पत्रकार को, लगातार सात दिनों की किसी कालावधि के दौरान, लगातार चौबीस घंटों से अन्यून कालावधि के लिए विश्राम अनुज्ञात किया जाएगा जिसमें रात के 10 बजे और सबेरे के 6 बजे की बीच की कालावधि सम्मिलित है ।

स्पष्टीकरण – इस धारा के प्रयोजनों के लिए "सप्ताह" से शनिवार की मध्यरात्रि से आरम्भ होने वाली सात दिन की कालावधि अभिप्रेत है ।

7. छुट्टी – ऐसे अवकाश दिनों, आकस्मिक छुट्टी या अन्य प्रकार की छुट्टियों पर, जैसी विहित की जाए, प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, प्रत्येक श्रमजीवी पत्रकार निम्नलिखित का हकदार होगा –

(क) कर्तव्य पर व्यतीत कालावधि के एक-बटा ग्यारह से अन्यून के लिए पूरी मजदूरी पर उपार्जित छुट्टी ;

(ख) सेवा की कालावधि के एक-बटा अठारह से अन्यून के लिए आधी मजदूरी पर चिकित्सक प्रमाणपत्र पर छुट्टी ;

[1][**8. मजदूरी की दरों का नियत या पुनरीक्षित किया जाना** – (1) केन्द्रीय सरकार, इसमें इसके पश्चात् उपबंधित रीति से –

(क) श्रमजीवी पत्रकारों के लिए मजदूरी की दरें नियत कर

---

[1] 1962 के अधिनियम सं. 65 की धारा 4 द्वारा (15-1-1963 से) धारा 8 से धारा 13 तक के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

सकेगी ;

(ख) इस धारा के अधीन नियत या श्रमजीवी पत्रकार (मजदूरी दर नियतन) अधिनियम, 1958 (1958 का 29) की धारा 6 के अधीन दिए गए आदेश में विनिर्दिष्ट मजदूरी की दरों को ऐसे अंतरालों पर, जैसे वह ठीक समझे, समय-समय पर पुनरीक्षित कर सकेगी ।

(2) श्रमजीवी पत्रकारों के लिए मजदूरी की दरें केन्द्रीय सरकार द्वारा कालानुपाती काम के लिए और मात्रानुपाती काम के लिए नियत या पुनरीक्षित की जा सकेगी ।

9. मजदूरी की दर नियत और पुनरीक्षित करने के लिए प्रक्रिया – इस अधिनियम के अधीन श्रमजीवी पत्रकारों के लिए मजदूरी की दरों को नियत या पुनरीक्षित करने के प्रयोजन के लिए केन्द्रीय सरकार, जैसे और जब आवश्यक हो, एक मजदूरी बोर्ड गठित करेगी जिसमें निम्नलिखित होंगे :–

(क) समाचारपत्र-स्थापनों के संबंध में नियोजकों का प्रतिनिधित्व करने वाले [1][तीन व्यक्ति] ;

(ख) श्रमजीवी पत्रकारों का प्रतिनिधित्व करने वाले [1][तीन व्यक्ति] ;

(ग) [2][चार स्वतंत्र व्यक्ति] जिनमें से एक व्यक्ति ऐसा होगा जो किसी उच्च न्यायालय का या उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश है या रहा है और जो उस सरकार द्वारा बोर्ड का अध्यक्ष नियुक्त किया जाएगा ।

10. बोर्ड द्वारा सिफारिश – (1) बोर्ड, ऐसी रीति से, जैसी वह ठीक समझे, प्रकाशित सूचना द्वारा, समाचारपत्र-स्थापनों और श्रमजीवी पत्रकारों तथा श्रमजीवी पत्रकारों की मजदूरी की दरों को नियत और पुनरीक्षित करने में हितबद्ध अन्य व्यक्तियों से अपेक्षा करेगा कि वे मजदूरी की दरों के संबंध में, जो श्रमजीवी पत्रकारों के लिए इस अधिनियम के अधीन नियत या पुनरीक्षित की जा सकती है, ऐसे अभ्यावेदन करें जैसे वे ठीक समझें ।

---

[1] 1996 के अधिनियम सं. 34 की धारा 2 द्वारा कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[2] 1996 के अधिनियम सं. 34 की धारा 2 द्वारा (28-9-1996 से) "तीन स्वतंत्र व्यक्ति" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(2) ऐसा हर अभ्यावेदन लिखित रूप में होगा और ऐसी कालावधि के अन्दर किया जाएगा जो बोर्ड सूचना में विनिर्दिष्ट करे तथा उसमें मजदूरी की ऐसी दरें कथित होंगी जो अभ्यावेदन करने वाले व्यक्ति की राय में, नियोजक की उन्हें संदाय करने की सामर्थ्य को या किन्हीं ऐसी अन्य परिस्थितियों को जो अभ्यावेदन करने वाले व्यक्ति को अपने अभ्यावेदन के संबंध में सुसंगत प्रतीत हो ध्यान में रखते हुए, युक्तियुक्त होंगी ।

(3) बोर्ड, पूर्वोक्त अभ्यावेदनों पर, यदि कोई हो, विचार करेगा और अपने समक्ष रखी गई सामग्री की परीक्षा करने के पश्चात् श्रमजीवी पत्रकारों के लिए मजदूरी की दरें नियत या पुनरीक्षित करने के लिए केन्द्रीय सरकार से ऐसी सिफारिशें करेगा जैसी वह ठीक समझे ; और ऐसी किसी सिफारिश में चाहे भविष्यलक्षी रूप से अथवा भूतलक्षी रूप से, वह तारीख विनिर्दिष्ट हो सकेगी जिससे मजदूरी की वे दरें प्रभावशाली होनी चाहिएं ।

(4) केन्द्रीय सरकार से कोई सिफारिशें करने में बोर्ड, निर्वाह-व्यय का, सदृश नियोजन के लिए विद्यमान मजदूरी की दरों का, देश के विभिन्न प्रदेशों में समाचारपत्र उद्योग से सम्बद्ध परिस्थितियों का और किन्हीं अन्य परिस्थितियों का, जो बोर्ड को सुसंगत प्रतीत हों, ध्यान रखेगा ।

[1][**स्पष्टीकरण** – शंकाओं को दूर करने के लिए, यह घोषित किया जाता है कि इस उपधारा की कोई भी बात बोर्ड को अखिल भारतीय आधार पर मजदूरी की दरें नियत करने या पुनरीक्षित करने की सिफारिश करने से निवारित नहीं करेगी ।]

11. बोर्ड की शक्तियां और प्रक्रिया – (1) उपधारा (2) के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए बोर्ड, उन सब शक्तियों का या उनमें से किन्हीं का प्रयोग कर सकेगा जिनका प्रयोग औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14) के अधीन गठित औद्योगिक अधिकरण उनको निर्दिष्ट औद्योगिक विवाद के न्यायनिर्णयन के लिए करता है और उसे इस अधिनियम और तद्धीन बनाए गए नियमों में, यदि कोई हो, अंतर्विष्ट उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए अपनी प्रक्रिया स्वयं विनियमित करने की शक्ति होगी ।

(2) बोर्ड से किए गए अभ्यावेदन और साक्ष्य के रूप में उसे दी गई

---

[1] 1989 के अधिनियम सं. 31 की धारा 3 द्वारा जोड़ा गया ।

दस्तावेजें, मामले में हितबद्ध किसी व्यक्ति द्वारा, ऐसी फीस लेने पर, जैसी विहित की जाए, निरीक्षण के लिए खुली रहेंगी ।

(3) यदि किसी कारण बोर्ड के अध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य के पद में रिक्ति होती है तो केन्द्रीय सरकार उस रिक्ति की पूर्ति धारा 9 के उपबंधों के अनुसार उस पर किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त करेगी और किसी भी कार्यवाही को ऐसे पुनर्गठित बोर्ड के समक्ष उस प्रक्रम से जारी रखा जा सकेगा जिस पर वह रिक्ति हुई थी ।

12. मजदूरी बोर्ड की सिफारिशों को प्रवर्तित करने की केन्द्रीय सरकार की शक्तियां – (1) बोर्ड की सिफारिशों की प्राप्ति के पश्चात् यथा-शक्य शीघ्र केन्द्रीय सरकार, सिफारिशों के निबंधनों के अनुसार या ऐसे उपान्तरों के अध्यधीन, यदि कोई हों, जैसे वह ठीक समझे और उपान्तर ऐसे होंगे जो केन्द्रीय सरकार की राय में सिफारिशों के स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं करते, आदेश करेगी ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी केन्द्रीय सरकार, यदि वह ठीक समझती है, –

(क) सिफारिशों में उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्रकार के उपांतरण न होने वाले ऐसे उपांतरण कर सकेगी जैसे वह ठीक समझे :

परन्तु ऐसा कोई उपान्तर करने से पूर्व केन्द्रीय सरकार उन सब व्यक्तियों को, जिन पर उनका प्रभाव पड़ना संभाव्य हो, ऐसी रीति से, जैसी विहित की जाए, सूचना दिलवाएगी और उन अभ्यावेदनों पर विचार करेगी जो वे लिखित रूप में इस निमित्त करें ; अथवा

(ख) सिफारिशों या उनके किसी भाग को बोर्ड को निर्देशित कर सकेगी जिस दशा में केन्द्रीय सरकार उसकी अतिरिक्त सिफारिशों पर विचार करेगी और या तो सिफारिशों के निबंधनों के अनुसार या उपधारा (1) में निर्दिष्ट प्रकार के ऐसे उपान्तरों के सहित, जैसे वह ठीक समझे, आदेश करेगी ।

(3) केन्द्रीय सरकार द्वारा इस धारा के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, बोर्ड की उस आदेश से संबद्ध सिफारिशों के साथ शासकीय राजपत्र में प्रकाशित किया जाएगा और वह आदेश प्रकाशन की तारीख को या चाहे भविष्यलक्षी रूप से अथवा भूतलक्षी रूप से ऐसी तारीख को, जैसी आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, प्रवर्तन में आएगा ।

13. श्रमजीवी पत्रकारों का आदेश में विनिर्दिष्ट दरों से अन्यून दरों पर मजदूरी का हकदार होना – धारा 12 के अधीन केन्द्रीय सरकार के आदेश के प्रवर्तन में आने पर, प्रत्येक श्रमजीवी पत्रकार इस बात का हकदार होगा कि उसे उनके नियोजक द्वारा उस दर पर मजदूरी दी जाए जो आदेश में विनिर्दिष्ट मजदूरी की दर से किसी भी दशा में कम न होगी ।

13क. मजदूरी की अंतरिम दर नियत करने की सरकार की शक्ति – (1) इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी, जहां केन्द्रीय सरकार की यह राय है कि ऐसा करना आवश्यक है वहां वह बोर्ड से परामर्श के पश्चात्, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, श्रमजीवी पत्रकारों के लिए मजदूरी की अंतरिम दरें नियत कर सकेगी ।

(2) ऐसी नियत मजदूरी की अंतरिम दरें समाचारपत्र-स्थापनों के संबंध में सब नियोजकों पर आबद्धकर होंगी और प्रत्येक श्रमजीवी पत्रकार इस बात का हकदार होगा कि उसे उस दर पर मजदूरी दी जाए जो उपधारा (1) के अधीन नियत मजदूरी की अंतरिम दरों से किसी भी दशा में कम नहीं होगी ।

(3) उपधारा (1) के अधीन नियत मजदूरी की अंतरिम दरें, धारा 12 के अधीन केन्द्रीय सरकार के आदेश के प्रवर्तन में आने तक प्रवृत्त रहेंगी ।]

[1][**13कक. श्रमजीवी पत्रकारों की बाबत मजदूरी की दरें नियत करने या पुनरीक्षित करने के लिए अधिकरण का गठन** – (1) इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी जहां केन्द्रीय सरकार की यह राय है कि इस अधिनियम के अधीन श्रमजीवी पत्रकारों की बाबत मजदूरी की दरें नियत करने या उनका पुनरीक्षण करने के प्रयोजन के लिए धारा 9 के अधीन गठित बोर्ड (किसी भी कारण) प्रभावकारी रूप में काम करने में समर्थ नहीं रहा है और परिस्थितियों के अनुसार ऐसा करना आवश्यक है तो वह श्रमजीवी पत्रकारों की बाबत इस अधिनियम के अधीन मजदूरी की दरें नियत करने या उनका पुनरीक्षण करने के प्रयोजन के लिए राजपत्र में अधिसूचना द्वारा एक अधिकरण का गठन कर सकेगी । इस अधिकरण में एक व्यक्ति होगा जो उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश है या रह चुका है ।

(2) धारा 10 से धारा 13क के उपबंध इस धारा की उपधारा (1) के

---

[1] 1979 के अधिनियम सं. 6 की धारा 3 द्वारा (31-1-1979 से) अंत:स्थापित ।

अधीन गठित अधिकरण, केन्द्रीय सरकार और श्रमजीवी पत्रकारों को और उनके संबंध में निम्नलिखित उपान्तरों के अधीन रहते हुए लागू होंगे –

(क) उन धाराओं में बोर्ड के प्रति निर्देशों का, जहां कहीं भी वे आते हैं, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे अधिकरण के प्रति निर्देश हैं ;

(ख) धारा 11 की उपधारा (3) में, –

(i) बोर्ड के अध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य के पद के प्रति निर्देश का अर्थ यह लगाया जाएगा कि वह अधिकरण गठित करने वाले व्यक्ति के प्रति निर्देश है, और

(ii) धारा 9 के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह इस धारा की उपधारा (1) के प्रति निर्देश हैं, और

(ग) धारा 13 और धारा 13क में धारा 12 के प्रति निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे इस धारा के साथ पठित धारा 12 के प्रति निर्देश हैं ।

(3) अधिकरण, इस अधिनयम के अधीन अपने कृत्यों के निर्वहन में मजदूरी बोर्ड द्वारा अभिलिखित या भागत: मजदूरी बोर्ड द्वारा और भागत: स्वयं उसके द्वारा अभिलिखित साक्ष्य पर ही कार्यवाही कर सकेगा :

परन्तु यदि अधिकरण की यह राय है कि उन साक्षियों में से जिनका साक्ष्य पहले ही अभिलिखित किया जा चुका है, किसी भी अतिरिक्त परीक्षा, न्याय के हित में आवश्यक है तो वह किसी ऐसे साक्षी को पुन: समन कर सकता है और ऐसी अतिरिक्त परीक्षा, प्रतिपरीक्षा और पुन: परीक्षा के पश्चात् यदि कोई हो, जैसी वह अनुज्ञात करे, उसे उन्मोचित कर दिया जाएगा ।

(4) उपधारा (1) के अधीन अधिकरण के गठन हो जाने पर, ऐसे गठन से ठीक पूर्व धारा 9 के अधीन गठित और कार्य कर रहे बोर्ड का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा, और उस बोर्ड के सदस्यों के बारे में यह समझा जाएगा कि उन्होंने अपने पद रिक्त कर दिए हैं :

परन्तु श्रमजीवी पत्रकारों की बाबत धारा 13क के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा नियत की गई और अभिकरण के गठन से ठीक पूर्व प्रवृत्त मजदूरी की अंतरिम दरें तब तक प्रवृत्त रहेंगी जब तक केन्द्रीय सरकार का इस धारा के साथ पठित धारा 12 के अधीन आदेश प्रवर्तन में नहीं आता ।]

[1][अध्याय 2क

पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारी

13ख. पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों की मजदूरी की दरों का नियत या पुनरीक्षित किया जाना – (1) केन्द्रीय सरकार, इसमें इसके पश्चात् उपबंधित रीति से, –

(क) पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों के लिए मजदूरी की दरें नियत कर सकेगी ; और

(ख) इस धारा के अधीन नियत मजदूरी की दरों को ऐसे अंतरालों पर, जैसे वह ठीक समझे, समय-समय पर पुनरीक्षित कर सकेगी ।

(2) पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों के लिए मजदूरी की दरें केन्द्रीय सरकार द्वारा कालानुपाती काम के लिए और मात्रानुपाती काम के लिए नियत या पुनरीक्षित की जा सकेगी ।

13ग. पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों के लिए मजदूरी की दरें नियत या पुनरीक्षित करने के लिए मजदूरी बोर्ड – इस अधिनियम के अधीन पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों के लिए मजदूरी की दरों को नियत या पुनरीक्षित करने के प्रयोजन के लिए केन्द्रीय सरकार, जैसे और जब आवश्यक हो, एक मजदूरी बोर्ड गठित करेगी जिसमें निम्नलिखित होंगे –

(क) समाचारपत्र-स्थापनों के संबंध में नियोजकों का प्रतिनिधित्व करने वाले [2][तीन व्यक्ति] ;

(ख) पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व करने वाले [2][तीन व्यक्ति] ; और

(ग) [2][चार स्वतंत्र व्यक्ति], जिनमें से एक व्यक्ति ऐसा होगा जो किसी उच्च न्यायालय का या उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश है या रहा है और जो उस सरकार द्वारा बोर्ड का अध्यक्ष नियुक्त

---

[1] 1974 के अधिनियम सं. 60 की धारा 4 द्वारा अंत:स्थापित ।

[2] 1996 के अधिनियम सं. 34 की धारा 3 द्वारा (28-9-1996 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

किया जाएगा ।

13घ. कुछ उपबंधों का लागू होना – धारा 10 से लेकर धारा 13क तक के उपबंध, धारा 13ग के अधीन गठित बोर्ड, केन्द्रीय सरकार और पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों को और उनके संबंध में इन उपान्तरों के अधीन लागू होंगे कि –

(क) उनमें बोर्ड और श्रमजीवी पत्रकारों के प्रति निर्देशों का, जहां कहीं भी वे आते हैं, यह अर्थ किया जाएगा कि वे क्रमश: धारा 13ग के अधीन गठित बोर्ड के और पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों के प्रति निर्देश हैं ;

(ख) धारा 11 की उपधारा (3) में धारा 9 के प्रति निर्देशों का यह अर्थ किया जाएगा कि वे धारा 13ग के प्रति निर्देश हैं ; और

(ग) धारा 13 और धारा 13क में धारा 12 के प्रति निर्देशों का यह अर्थ किया जाएगा कि वे इस धारा के साथ पठित धारा 12 के प्रति निर्देश हैं ।

[1][**13घघ. पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों की बाबत मजदूरी की दरें नियत करने या पुनरीक्षित करने के लिए अधिकरण का गठन** – (1) इस अधिनियम में किसी बात के होते हुए भी जहां केन्द्रीय सरकार की यह राय है कि इस अधिनियम के अधीन पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों की बाबत मजदूरी की दरें नियत करने या उनका पुनरीक्षण करने के प्रयोजन के लिए धारा 13ग के अधीन गठित बोर्ड किसी भी कारण प्रभावकारी रूप में काम करने में समर्थ नहीं रहा है और परिस्थितियों के अनुसार ऐसा करना आवश्यक है तो वह पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों की बाबत इस अधिनियम के अधीन मजदूरी की दरें नियत करने या उसका पुनरीक्षण करने के प्रयोजन के लिए राजपत्र में अधिसूचना द्वारा एक अधिकरण का गठन कर सकेगी । इस अधिकरण में एक व्यक्ति होगा जो उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश है या रह चुका है ।

---

[1] 1979 के अधिनियम सं. 6 की धारा 4 द्वारा (31-1-1979 से) अंत:स्थापित ।

(2) धारा 10 से धारा 13क के उपबंध, इस धारा की उपधारा (1) के अधीन गठित अधिकरण, केन्द्रीय सरकार और पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों की और उनके संबंध में निम्नलिखित उपान्तरों के अधीन रहते हुए, लागू होंगे –

(क) उन धाराओं में बोर्ड और श्रमजीवी पत्रकारों के प्रति निर्देशों का, जहां कहीं वे आते हैं, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे क्रमश: अधिकरण के और पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों के प्रति निर्देश हैं ;

(ख) धारा 11 की उपधारा (3) में –

(i) बोर्ड के अध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य के पद के प्रति निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह अधिकरण गठित करने वाले व्यक्ति के पद के प्रति निर्देश है ; और

(ii) धारा 9 के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह इस धारा की उपधारा (1) के प्रति निर्देश हैं ; और

(ग) धारा 13 और धारा 13क में धारा 12 के प्रति निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे इस धारा के साथ पठित धारा 12 के प्रति निर्देश हैं ।

(3) अधिकरण, इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के निर्वहनों में मजदूरी बोर्ड द्वारा अभिलिखित या भागत: मजदूरी बोर्ड द्वारा और भागत: स्वयं उसके द्वारा अभिलिखित साक्ष्य पर ही कार्यवाही कर सकेगा :

परन्तु यदि अधिकरण की यह राय है कि उन साक्षियों में से जिनका साक्ष्य पहले ही अभिलिखित किया जा चुका है, किसी की भी अतिरिक्त परीक्षा, न्याय के हित में आवश्यक है तो वह किसी ऐसे साक्षी को पुन: समन कर सकता है और ऐसी अतिरिक्त परीक्षा, प्रतिपरीक्षा और पुन:परीक्षा के पश्चात् यदि कोई हो, जैसी वह अनुज्ञात करे उसे उन्मोचित कर दिया जाएगा ।

(4) उपधारा (1) के अधीन अधिकरण के गठन हो जाने पर ऐसे गठन से ठीक पूर्व धारा 13ग के अधीन गठित और कार्य कर रहे बोर्ड का

अस्तित्व समाप्त हो जाएगा और उस बोर्ड के सदस्यों के बारे में यह समझा जाएगा कि उन्होंने अपने पद रिक्त कर दिए हैं :

परन्तु यदि पत्रकारों से भिन्न समाचारपत्र कर्मचारियों की बाबत धारा 13घ के साथ पठित धारा 13क के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा नियत की गई और अधिकरण के गठन से ठीक पूर्व प्रवृत्त मजदूरी की अंतरिम दरें तब तक प्रवृत्त रहेंगी जब तक केन्द्रीय सरकार का इस धारा के साथ पठित धारा 12 के अधीन आदेश प्रवर्तन में नहीं आता ।]

अध्याय 3

कतिपय अधिनियमों का समाचारपत्र कर्मचारियों पर लागू होना

14. 1946 के अधिनियम 20 का समाचारपत्र-स्थापनों को लागू होना – तत्समय यथाप्रवृत्त औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 के उपबंध हर ऐसे समाचारपत्र-स्थापन को, जिसमें बीस या अधिक समाचारपत्र कर्मचारी नियोजित हैं या पूर्वगामी बारह मास के किसी भी दिन नियोजित थे, ऐसे लागू होंगे मानो ऐसा समाचारपत्र-स्थापन ऐसा औद्योगिक स्थापन है जिसको पूर्वोक्त अधिनियम उसकी धारा 1 की उपधारा (3) के अधीन अधिसूचना द्वारा लागू किया गया है और मानो समाचारपत्र कर्मचारी उस अधिनियम के अर्थ में कर्मकार है ।

15. 1952 के अधिनियम 19 का समाचारपत्र-स्थापनों को लागू होना – तत्समय यथाप्रवृत्त कर्मचारी भविष्य-निधि [1][और प्रकीर्ण उपबंध] अधिनियम, 1952 हर ऐसे समाचारपत्र-स्थापन को, जिसमें किसी भी दिन बीस या अधिक व्यक्ति नियोजित हैं, ऐसे लागू होगा मानो ऐसा समाचारपत्र-स्थापन ऐसा कारखाना है जिसको पूर्वोक्त अधिनियम उसकी धारा 1 की उपधारा (3) के अधीन केन्द्रीय सरकार की अधिसूचना द्वारा लागू किया गया है और मानो समाचारपत्र कर्मचारी उस अधिनियम के अर्थ में कर्मचारी है ।

---

[1] 1976 के अधिनियम सं. 99 की धारा 17 द्वारा (1-8-1976 से) "और कुटुम्ब पेंशन निधि" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित, जो 1971 के अधिनियम सं. 16 की धारा 13 द्वारा अंत:स्थापित किए गए थे ।

अध्याय 4

प्रकीर्ण

16. इस अधिनियम से असंगत विधियों और करारों का प्रभाव – (1) इस अधिनियम के उपबंध, किसी अन्य विधि में या इस अधिनियम के प्रारंभ से पूर्व या पश्चात् किए गए किसी अधिनिर्णय, करार या सेवा संविदा के निबंधनों में अंतर्विष्ट उससे असंगत किसी बात के होते हुए भी, प्रभावी होंगे :

परन्तु जहां समाचारपत्र कर्मचारी ऐसे किसी अधिनिर्णय, करार या सेवा संविदा के अधीन या अन्यथा, किसी विषय के संबंध में ऐसे फायदों का हकदार है जो उसके लिए उनसे अधिक अनुकूल हैं जिनका वह इस अधिनियम के अधीन हकदार है तो वह समाचारपत्र कर्मचारी उस विषय के संबंध में उन अधिक अनुकूल फायदों का इस बात के होते हुए भी हकदार बना रहेगा कि वह अन्य विषयों के संबंध में फायदे इस अधिनियम के अधीन प्राप्त करता है ।

(2) इस अधिनियम की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी समाचारपत्र कर्मचारी को किसी विषय के संबंध में उसके ऐसे अधिकार या विशेषाधिकार जो उसके लिए उनसे अधिक अनुकूल हैं जिनका वह इस अधिनियम के अधीन हकदार है, अनुदत्त कराने के लिए किसी नियोजक के साथ कोई करार करने से रोकती है ।

[1][**16क. नियोजक द्वारा समाचारपत्र कर्मचारियों को पदच्युत, सेवोन्मुक्त, आदि न किया जाना** – किसी समाचारपत्र-स्थापन के संबंध में कोई नियोजक, धारा 12 के अधीन या धारा 13कक या धारा 13घघ के साथ पठित धारा 12 के अधीन केन्द्रीय सरकार के किसी आदेश में विनिर्दिष्ट समाचारपत्र कर्मचारियों को मजदूरी के संदाय के अपने दायित्व के कारण, किसी समाचारपत्र कर्मचारी को पदच्युत या सेवोन्मुक्त नहीं करेगा या उसकी छंटनी नहीं करेगा ।]

[2][**17. नियोजक द्वारा देय धन की वसूली** – (1) जहां किसी

---

[1] 1981 के अधिनियम सं. 36 की धारा 3 द्वारा (13-8-1980 से) अंत:स्थापित ।

[2] 1962 के अधिनियम सं. 65 की धारा 5 द्वारा (15-1-1963 से) धारा 17 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

नियोजक द्वारा किसी समाचारपत्र कर्मचारी को इस अधिनियम के अधीन कोई रकम देय है वहां समाचारपत्र कर्मचारी स्वयं या इस निमित्त लिखित रूप में उसके द्वारा प्राधिकृत कोई व्यक्ति अथवा उस कर्मचारी की मृत्यु हो जाने की दशा में उसके कुटुम्ब का कोई सदस्य, वसूली के किसी अन्य ढंग पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उसको देय रकम की वसूली के लिए राज्य सरकार से आवेदन कर सकेगा और यदि राज्य सरकार का या ऐसे प्राधिकारी का, जिसे राज्य सरकार इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, समाधान हो जाता है कि कोई रकम वैसे देय है तो वह उस रकम के लिए एक प्रमाणपत्र कलक्टर को भेजेगा और कलक्टर उस रकम को उसी रीति से वसूली करने के लिए कार्रवाई करेगा जिसमें भू-राजस्व की बकाया वसूल की जाती है ।

(2) यदि किसी समाचारपत्र कर्मचारी को उसके नियोजक से इस अधिनियम के अधीन देय रकम की बाबत कोई प्रश्न पैदा हो तो राज्य सरकार, स्वप्रेरणा से या उसको आवेदन किए जाने पर, उस प्रश्न को औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 14) के अधीन या उस राज्य में प्रवृत्त औद्योगिक विवादों की जांच-पड़ताल और निपटारे से संबद्ध किसी तत्समान विधि के अधीन उस द्वारा गठित किसी श्रम न्यायालय को निर्देशित कर सकेगी और उक्त अधिनियम या विधि उस श्रम न्यायालय के संबंध में ऐसे प्रभावी होंगे मानो ऐसा निर्देशित प्रश्न उस अधिनियम या विधि के अधीन न्यायनिर्णयन के लिए उस श्रम न्यायालय को निर्देशित विषय हों ।

(3) श्रम न्यायालय का विनिश्चय उसके द्वारा उस राज्य सरकार को भेजा जाएगा जिसने निर्देश किया और ऐसी कोई रकम जिसे श्रम न्यायालय ने देय पाया हो उपधारा (1) में उपबंधित रीति से वसूल की जा सकेगी ।

17क. रजिस्टर, अभिलेख और मस्टररोल रखना – समाचारपत्र-स्थापन के संबंध में प्रत्येक नियोजक ऐसे रजिस्टर, अभिलेख और मस्टररोल जैसे विहित किए जाएं और ऐसी रीति से, जैसी विहित की जाए, तैयार करेगा और बनाए रखेगा ।

17ख. निरीक्षक – (1) राज्य सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, ऐसे व्यक्तियों को, जिन्हें वह ठीक समझे, इस अधिनियम

के प्रयोजनों के लिए निरीक्षक नियुक्त कर सकेगी और उन स्थानीय सीमाओं को परिनिश्चित कर सकेगी जिनके अन्दर वे अपने कृत्यों का प्रयोग करेंगे ।

(2) उपधारा (1) के अधीन नियुक्त निरीक्षक यह अभिनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए कि क्या इस अधिनियम के या श्रमजीवी पत्रकार (मजदूरी दर नियतन) अधिनियम, 1958 (1958 का 29) के उपबंधों में से किन्हीं का किसी समाचारपत्र-स्थापन के संबंध में पालन किया गया है –

(क) किसी नियोजक से ऐसी जानकारी देने की अपेक्षा कर सकेगा जैसी वह आवश्यक समझे ;

(ख) किसी समाचारपत्र-स्थापन में या उससे संबंधित किसी परिसर में उचित समय पर प्रवेश कर सकेगा और किसी व्यक्ति से, जो वहां का भारसाधक पाया जाए, किन्हीं लेखाओं, पुस्तकों, रजिस्टरों और उस स्थापन में व्यक्तियों के नियोजन या मजदूरी के संदाय से सम्बद्ध अन्य दस्तावेजों को परीक्षा के लिए अपने समक्ष पेश करने की अपेक्षा कर सकेगा ;

(ग) पूर्वोक्त प्रयोजनों में से किसी से सुसंगत किसी विषय के बारे में नियोजक की, उसके अभिकर्ता या सेवक की या किसी अन्य व्यक्ति की जो उस समाचारपत्र-स्थापन का या उससे संबंधित किसी परिसर का भारसाधक पाया जाए या किसी ऐसे व्यक्ति की, जिसके बारे में निरीक्षक के पास यह विश्वास करने का युक्तियुक्त हेतुक है कि वह उस स्थापन में कर्मचारी है या रहा है, परीक्षा कर सकेगा ;

(घ) उस समाचारपत्र-स्थापन के संबंध में रखी गई किसी पुस्तक, रजिस्टर या अन्य दस्तावेजों की नकल बना सकेगा या उनसे उद्धरण ले सकेगा ;

(ङ) ऐसी अन्य शक्तियों का प्रयोग कर सकेगा जैसी विहित की जाएं ।

(3) प्रत्येक निरीक्षक भारतीय दंड संहिता (1860 का 45) के अर्थ में लोक सेवक समझा जाएगा ।

(4) कोई दस्तावेज या चीज पेश करने के लिए या जानकारी देने के लिए निरीक्षक द्वारा उपधारा (2) के अधीन अपेक्षित कोई व्यक्ति ऐसा करने के लिए वैध रूप से आबद्ध होगा ।]

18. शास्ति – [1][(1)यदि कोई नियोजक इस अधिनियम या तद्धीन या बनाए गए किसी नियम या आदेश के उपबन्धों में से किसी का उल्लंघन करेगा तो वह जुर्माने से, जो दो सौ रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

(1क) जो कोई, इस अधिनियम के अधीन किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराए जाने पर, उसी उपबन्ध का उल्लंघन अन्तर्ग्रस्त करने वाले किसी अपराध के लिए पुनःसिद्धदोष ठहराया जाएगा वह जुर्माने से, जो पांच सौ रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

(1ख) जहां कोई अपराध किसी कम्पनी द्वारा किया गया है वहां हर व्यक्ति, जो ऐसे अपराध के किए जाने के समय उस कम्पनी के कारबार के संचालन के लिए उस कम्पनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और साथ ही वह कम्पनी भी ऐसे अपराध के दोषी समझे जाएंगे तथा तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने के भागी होंगे :

परन्तु इस उपधारा की कोई भी बात ऐसे किसी व्यक्ति को इस धारा में उपबंधित किसी दंड का भागी नहीं बनाएगी यदि वह यह साबित कर दे कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध का निवारण करने के लिए सब सम्यक् तत्परता बरती थी ।

(1ग) उपधारा (1ख) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस धारा के अधीन कोई अपराध किसी कम्पनी द्वारा किया गया हो तथा यह साबित हो कि वह अपराध कम्पनी के किसी निदेशक, प्रबन्धक, सचिव या अन्य अधिकारी की सम्मति या मौनानुकूलता से किया गया है, या उसकी ओर से हुई किसी घोर उपेक्षा के कारण हुआ माना जा

---

[1] 1962 के अधिनियम सं. 65 की धारा 6 द्वारा (15-1-1963 से) उपधारा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

सकता है वहां ऐसा निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी भी उस अपराध का दोषी समझा जाएगा तथा तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दण्डित किए जाने का भागी होगा ।

(1घ) उस धारा के प्रयोजनों के लिए :–

(क) "कम्पनी" से कोई निगमित निकाय अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत फर्म या व्यष्टियों का अन्य संगम भी है ;

(ख) फर्म के संबंध में "निदेशक" से उस फर्म का भागीदार अभिप्रेत है ।]

(2) प्रेसिडेन्सी मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट के न्यायालय से अवर कोई भी न्यायालय, इस धारा के अधीन दंडनीय अपराध का विचारण नहीं करेगा ।

(3) कोई न्यायालय इस धारा के अधीन अपराध का संज्ञान उस दशा के सिवाय नहीं करेगा जिसमें उसके लिए परिवाद उस तारीख से जिस तारीख को उस अपराध का किया जाना अभिकथित है छह मास के अन्दर कर दिया जाता है ।

19. परित्राण – बोर्ड के अध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य [1][या अधिकरण गठित करने वाले व्यक्ति] [2][या इस अधिनियम के अधीन नियुक्त किसी निरीक्षक] के विरुद्ध कोई वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही किसी ऐसी बात के लिए नहीं हो सकेगी जो सद्भावपूर्वक की गई है या की जानी आशयित है ।

[3][**19क. नियुक्ति में त्रुटियों से कार्यों का अविधिमान्य न होना** – बोर्ड के किसी भी कार्य या कार्यवाही को केवल इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा कि बोर्ड में कोई रिक्ति या उसके गठन में कोई त्रुटि विद्यमान है ।

---

[1] 1979 के अधिनियम सं. 6 की धारा 5 द्वारा (31-1-1979 से) अन्त:स्थापित ।

[2] 1962 के अधिनियम सं. 65 की धारा 7 द्वारा (15-1-1963 से) अन्त:स्थापित ।

[3] 1962 के अधिनियम सं. 65 की धारा 8 द्वारा (15-1-1963 से) अन्त:स्थापित ।

19ख. व्यावृत्ति – इस अधिनियम या श्रमजीवी पत्रकार (मजदूरी दर नियतन) अधिनियम, 1958 (1958 का 29) की कोई भी बात [1][किसी ऐसे समाचारपत्र कर्मचारी को] लागू नहीं होगी जो सरकार का ऐसा कर्मचारी है जिसे मौलिक और अनुपूरक नियम, सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, सिविल सेवाएं (अस्थायी सेवा) नियम, पुनरीक्षित छुट्टी नियम, सिविल सेवा विनियम, रक्षा सेवाओं में सिविलियन (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, या भारतीय रेल स्थापन संहिता या कोई अन्य नियम या विनियम जो शासकीय राजपत्र में इस निमित्त केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित किए जाएं, लागू होते हैं ।]

20. नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसे नियम निम्नलिखित विषयों में से सब या किसी के लिए उपबन्ध कर सकेंगे, अर्थात् :–

(क) श्रमजीवी पत्रकारों को उपदान का संदाय ;

(ख) श्रमजीवी पत्रकारों के काम के घंटे ;

(ग) अवकाश दिन, उपार्जित छुट्टी, चिकित्सक प्रमाणपत्र पर छुट्टी, आकस्मिक छुट्टी या किसी अन्य प्रकार की छुट्टी जो श्रमजीवी पत्रकारों के लिए अनुज्ञेय हों ;

[2][(घ) प्रक्रिया जिसका अनुसरण [3][यथास्थिति बोर्ड, या अधिकरण] द्वारा इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों के निर्वहन में किया जाना है ;

---

[1] 1974 के अधिनियम सं. 60 की धारा 5 द्वारा प्रतिस्थापित ।

[2] 1962 के अधिनियम सं. 65 की धारा 9 द्वारा (15-1-1963 से) खण्ड (घ), (ङ) और (च) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1979 के अधिनियम सं. 6 की धारा 6 द्वारा (3-1-1979 से) अन्तःस्थापित ।

(ङ) नामनिर्देशनों का प्ररूप, और रीति जिसमें नामनिर्देशन किए जा सकेंगे ;

(च) रीति जिसमें कोई व्यक्ति धारा 5क की उपधारा (3) के प्रयोजनों के लिए नियुक्त किया जा सकेगा ;

(छ) नामनिर्देशनों में फेरफार या उनका रद्द किया जाना ;

(ज) धारा 12 की उपधारा (2) के खण्ड (क) के अधीन सूचना देने की रीति ;

(झ) रजिस्टर, अभिलेख और मस्टररोल जो समाचारपत्र स्थापनों द्वारा तैयार किए और रखे जाने हैं, प्ररूप जिनमें वे तैयार किए और रखे जाने चाहिएं और विशिष्टियां जो उनमें प्रविष्ट की जानी हों ;

(ञ) शक्तियां जो निरीक्षक द्वारा प्रयुक्त की जा सकेंगी ;

(ट) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाना है या किया जाए ।

[1][(3) इस धारा के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष जब वह सत्र में हो, तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में [2][अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों] में पूरी हो सकेंगी । यदि उस सत्र के या [3][पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व] दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या

---

[1] 1962 के अधिनियम सं. 65 की धारा 9 द्वारा (15-1-1963 से) उपधारा (3) का यह वर्तमान स्वरूप है ।

[2] 1974 के अधिनियम सं. 60 की धारा 6 द्वारा "या दो आनुक्रमिक सत्रों में" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[3] 1974 के अधिनियम सं. 60 की धारा 6 द्वारा कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।]

21. [1955 के अधिनियम संख्यांक 1 का निरसन] – निरसन और संशोधन अधिनियम, 1960 (1960 का अधिनियम सं. 58) की धारा 2 तथा अनुसूची 1 द्वारा निरसित ।

[1][**अनुसूची**

[धारा 2(घ) देखिए]

1. धारा 2 के खंड (घ) के प्रयोजनों के लिए, –

(1) सामान्य नियंत्रण के अधीन दो या अधिक समाचारपत्र-स्थापनों को एक समाचारपत्र-स्थापन समझा जाएगा ;

(2) किसी व्यष्टि और उसके पति या उसकी पत्नी के स्वामित्वाधीन दो या अधिक समाचारपत्र-स्थापनों को तब तक एक समाचारपत्र-स्थापन समझा जाएगा जब तक कि यह दर्शित नहीं किया जाता कि ऐसा पति या ऐसी पत्नी अपनी व्यष्टिक निधियों के आधार पर किसी निगमित निकाय का या की एकमात्र स्वत्वधारी या भागीदार या शेयरधारक है ;

(3) ऐसे दो या अधिक समाचारपत्र-स्थापन, जो एक ही या समरूप नाम वाले समाचारपत्र हैं और एक ही भाषा में भारत में किसी स्थान में अथवा एक ही या समरूप नाम वाले समाचारपत्र उसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में भिन्न-भिन्न भाषाओं में प्रकाशित कर रहे हैं, एक समाचारपत्र-स्थापन समझे जाएंगे ।

2. पैरा 1(1) के प्रयोजनों के लिए, दो या अधिक स्थापनों को वहां सामान्य नियंत्रण के अधीन समझा जाएगा –

(क)(i) जहां समाचारपत्र-स्थापन सामान्य व्यष्टि या व्यष्टियों के स्वामित्व में हैं ;

(ii) जहां समाचारपत्र-स्थापन फर्मों के स्वामित्व में हैं यदि ऐसी फर्मों के पर्याप्त संख्या में भागीदार सामान्य हैं ;

---

[1] 1989 के अधिनियम सं. 31 की धारा 4 द्वारा अंत:स्थापित ।

(iii) जहां समाचारपत्र-स्थापन निगमित निकायों के स्वामित्व में हैं, यदि एक निगमित निकाय अन्य निगमित निकाय का समनुषंगी है या दोनों सामान्य नियंत्री कंपनी के समनुषंगी हैं या उसके पर्याप्त संख्या में साधारण शेयर एक ही व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के, चाहे निगमित हो या नहीं, स्वामित्व में हैं ;

(iv) जहां एक स्थापन निगमित निकाय के स्वामित्व में है और दूसरा किसी फर्म के स्वामित्व में है, यदि पर्याप्त संख्या में उस फर्म के भागीदार एक साथ मिलकर निगमित निकाय के साधारण शेयर पर्याप्त संख्या में धारण करते हैं ;

(v) जहां एक स्थापन निगमित निकाय के स्वामित्व में है और दूसरा ऐसी फर्म के स्वामित्व में है, जिसके भागीदार निगमित निकाय हैं, यदि ऐसे निगमित निकायों के पर्याप्त संख्या में साधारण शेयर प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: एक ही व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के, चाहे निगमित हों या नहीं, स्वामित्व में हैं ; या

(ख) जहां संबंधित समाचारपत्र-स्थापनों में कृत्यात्मक समग्रता है ।]

Cover iii

कार्यालय आदेश तारीख 13 फरवरी, 2017 के अनुसार विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पाठ्य पुस्तकों पर छूट देने की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम व प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पुस्तक की मुद्रित कीमत (रुपयों में)	7 वर्ष से पुराने संस्करण पर 35% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	8 से 15 वर्ष पुराने संस्करण पर 50% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)	15 वर्ष से अधिक पुराने संस्करण पर 75% छूट के पश्चात् कीमत (रुपयों में)
1.	भारत का विधिक इतिहास - श्री सुरेन्द्र मधुकर - 1989	30	–	–	8
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि - डा. एन. बी. परांजपे - 1990	40	–	–	10
3.	वाणिज्य विधि - डा. आर. एल. भट्ट - 1993	108	–	–	27
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धांत - श्री शर्मन लाल अग्रवाल - 1993	40	–	–	10
5.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय - डा. एस. सी. खरे - 1996	115	–	–	29
6.	श्रम विधि - श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा - 1996	452	–	–	113
7.	संविदा विधि - डा. रामगोपाल चतुर्वेदी - 1998	275	–	–	69
8.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान - डा. सी. के. पारिख - 1999	293	–	–	74
9.	आधुनिक पारिवारिक विधि - श्री राम शरण माथुर - 2000	429	–	–	108
10.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) - विधि साहित्य प्रकाशन - 2000	225	–	–	57
11.	हिन्दू विधि - डा. रवीन्द्र नाथ - 2001	425	–	–	106
12.	भारतीय भागीदारी अधिनियम - श्री माधव प्रसाद वशिष्ठ - 2001	165	–	–	41
13.	प्रशासनिक विधि - डा. कैलाश चन्द्र जोशी - 2001	200	–	–	50
14.	भारतीय दंड संहिता - डा. रवीन्द्र नाथ - 2002	741	–	–	185
15.	विधिक उपचार - डा. एस. के. कपूर - 2002	311	–	–	78
16.	विधि शास्त्र - डा. शिवदत्त शर्मा - 2005	580	–	290	–
17.	मानव अधिकार - डा. शिवदत्त शर्मा - 2006	120	–	60	–

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Cover IV

पी एल डी (सी. डी)-12-2018
भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : 1. प्रकाशन नियंत्रक, भारत सरकार, सिविल लाइन्स, दिल्ली-110054.
2. सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in